उपहार

प्रस्तावना।

पूर्व में एक बार हमने काव्यनिर्णय की विस्तृत टीका लिखने का प्रयत्न किया था, उस समय वेंकटेश्वर तथा भारतजीवन की मुद्रित प्रतियाँ प्राप्त हुई थीं, किन्तु उन दोनों प्रतियों में कहीं कहीं पाठभेद के कारण शुद्धाशुद्ध निर्णय करने में कठिनता उपस्थित होती थी। उन्हीं दिनों दैवयोग से अयोध्या जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। वहाँ कविवर लछिरामजी से भेंट हुई। उन्होंने मेरे उद्योग पर प्रसन्नता प्रगट करते हुए काव्यनिर्णय की हस्तलिखित एक पुरानी प्रति प्रदान की, जिससे पाठ के संशोधन में बड़ी सहायता मिली और वह पुस्तक अब तक हमारे पास विद्यमान है।

ठाकुर शिवसिंह और बाबू रामकृष्ण वर्मा के लेखानुसार मै समझता था कि दासकवि का जन्मस्थान बुन्देलखंड प्रदेश में है, परन्तु लछिरामजी से विदित हुआ कि उनकी जन्म-भूमि अवध के प्रतापगढ़ जिले में है। विशेप परिचय प्राप्त करने के लिये उन्होंने कहा कि आप राजा प्रताप बहादुर सिंह सी० आई० ई०. की सेवा में पत्र द्वारा अपना अभीष्ट प्रकट करें तो दृढ़ आशा है कि वहाँ से सन्तोपजनक उत्तर मिलेगा जिससे जिज्ञासा की बहुत कुछ निवृत्ति हो जायगी। घर आने पर मैंने राजा साहब की सेवा में पत्र प्रेपित किया,

उन्होंने प्रतापगढ़ के एक लेथो प्रेस की छपी काव्यनिर्णय, रससारांश और शृंगारनिर्णय की एक एक प्रतियाँ भेजने की कृपा की और दासजी के सम्बन्ध में बहुत सी ज्ञातव्य बातें लिख भेजीं।

तेईस उल्लास पर्य्यन्त काव्यनिर्णय की टीका लिखने के अनन्तर मैं अस्वस्थ हो गया और वर्षों उसकी लिखाई स्थगित करनी पड़ी। इस बीच में लिखी हुई टीका की कापी कहीं खो गयी। इस दुर्घटना से दुखी होकर हमने उसको पुनः लिखने का विचार ही त्याग दिया। हाल में बेलवेडियर प्रेस के स्वामी के सादर अनुरोध से हमें इस उद्योग में पुनः तत्पर होना पड़ा। यद्यपि इसमें मूलपाठ उपर्युक्त चारों प्रतियों से लिया गया है, तथापि विशेष रूप से वह हस्तलितखित प्रति के आधार पर सम्पादित हुआ है। आवश्यक स्थलों पर सरल हिन्दी में टीका-टिप्पणी भी की गयी है और कठिन शब्दों के अर्थ भी नीचे दिये गये हैं जिससे जिज्ञासुओं के जिज्ञासा को बहुत कुछ निवृत्ति होने की सम्भावना है।

दास की बनाई हुई पुस्तकों में काव्यनिर्णय सर्वोत्कृष्ट ग्रन्थ है। इसमें लक्षणा, व्यञ्जना, रस, भाव, अनुभाव, अपराग, ध्वनि, गुणीभूत व्यंग, अलंकार, चित्रकाव्य और गुण-दोषादि कविता के सभी अङ्गों का वर्णन है। यह कवि समाज में अत्यन्त आदर की दृष्टि से देखा जाता है। इसमें सब

गुण होते हुए भी मेरी समझ में एक बात खटकने योग्य अवश्य है, वह यह कि काव्यनिर्णय जैसे उच्चकोटि के साहित्यिक ग्रन्थ में कहीं कहीं नायिकाभेद का इतना श्लील उदाहरण दिया गया है कि उसको न तो गुरु शिष्य को और न पिता पुत्र को निःसङ्कोच भाव से पढ़ा सकता है। यद्यपि कविजी ने इसको राधिका कन्हाई के स्मरण का बहाना माना है, तो भी ऐसी उक्तियों का नवयुवकों पर जैसा प्रभाव पड़ सकता है उसको विज्ञजन भली भाँति समझ सकते हैं। प्रमाण के लिये दो सवैया हम यहाँ उद्धृत करते हैं—

हुती बाग में लेत प्रसून अली मनमोहनहूँ तहँ आय परयो।
मनभायो घरीक भयो पुनि गेह चबाइन में मन जाय परयो॥
द्रुत दौरि गयी गृह दास तहाँ ते बनाइबो नेक उपाय परयो।
धक स्वेद उसास खरोटन को कछु भेद न काहू लखाय परयो॥१॥
उठि आपुहि आसन दै रस प्यार सों लाल सों आँगी कढ़ावति है।
पुनि ऊँचे उरोजनि दै उर बीच भुजान मढ़ै और मढ़ावति है॥
रसरंग मचाइ नचाइ के नैनन्ह अंत तरंग बढ़ावति है।
विपरीति की रीति में प्रौढ तिया चित चौगुनो चोप चढ़ावति॥ २॥

कहिये पाठक महोदय! क्या यह काव्य के बहाने राधेश्याम का स्मरण है? मेरी समझ में तो किसी परकीया स्त्री और उपपति पुरुष का निर्लज्जता पूर्वक सहवास वर्णन है। इस प्रकार अपने उपास्यदेव का खुले शब्दों में घृणित शृङ्गार

कह कर कोई भी उपासक भक्तिभाव की रक्षा करने में कदापि समर्थ नहीं हो सकता। यदि दासजी चाहते तो उन स्थानों की पूर्ति दूसरे विषय के उदाहरणों से कर सकते थे। परन्तु वह ज़माना ही नायिकाभेद वर्णन का था। इसी की आचार्यता का राजदरबारों में अच्छा सम्मान होता था और नायिकाभेद के ग्रन्थों पर कवियों को लाखों रुपये पुरस्कार मिलते थे। ऐसी दशा में अकेले दासजी क्यों वंचित रहते ! अस्तु।

फिर भी भाषा-साहित्य के आचार्य्यों में दासजी की आचार्य्यता माननीय है। इनके काव्य में भाषा-माधुर्य्य और प्रसादगुण अत्यन्त सराहनीय हैं। इसमें सन्देह नहीं कि काव्यनिर्णय को गवेषणा-पूर्वक पढ़ जाने से मनुष्य भाषा काव्य के सभी उपयोगी विषयों का ज्ञाता हो सकता है।

अगहन सुदी
सम्वत् १६८२ वि०

सज्जनों का कृपाकांक्षी—
महावीर प्रसाद मालवीय वैद्य "वीर"
ज्ञानपुर-बनारस स्टेट।

प्रकाशक का वक्तव्य

कविवर भिखारीदास का नाम, हिन्दी संसार में भला ऐसा कौन है जो नहीं जानता। आप की प्रसिद्ध रचना 'काव्यनिर्णय' नामक ग्रन्थ का हिन्दी साहित्य में बड़ा आदर है।

काव्यनिर्णय अलंकार का अपूर्व ग्रन्थ है। इसी पुस्तक के द्वारा दासजी का नाम आज भी हिन्दी संसार में अजर अमर है।

काव्यनिर्णय का अभी तक कोई शुद्ध संस्करण किसी ने भी नहीं निकाला है। हाँ दो एक प्रकाशकों ने इस ग्रन्थ को प्रकाशित किया है किन्तु उनके मूलपाठ तथा अर्थ में अनेक अशुद्धियाँ हैं। जिससे विद्यार्थियों को पढ़ने समय भ्रम में पड़ना पड़ता है। काव्यनिर्णय हिन्दी की अनेक परीक्षाओं में पाठ्य ग्रन्थ भी है इसलिये हमने इस ग्रंथ को एक ऐसे शुद्ध और सस्ते संस्करण की आवश्यकता समझी जिससे साधारण पढ़ने वालों, ख़ासकर विद्यार्थियों के लिये अधिक लाभदायक हो। इसीलिये हमने काव्यनिर्णय का यह संस्करण प्रकाशित किया है।

इसके टीकाकार पं० महावीर प्रसाद मालवीय 'वीर' कवि हैं। जो अन्य साहित्यिक ग्रन्थों की भी टीका कर चुके हैं। मूल पाठ शुद्ध और अर्थ सरल भाषा में दिया गया है। आशा है कि हिन्दी भाषा भाषी इस पुस्तक का आदर करके साहित्य-सेवा में हमारा हाथ बटावेंगे।

बेलवेडियर प्रेस।

कविवर भिखारीदास उपनाम 'दास'

का

जीवन चरित्र

भिखारीदासजी के जीवनचरित्र सम्बन्धी ज्ञातव्य बात हमें स्वर्गवासी श्रीमान् राजा प्रतापबहादुर सिंह सी० आई० ई० दुर्ग प्रतापगढ़ की कृपा से प्राप्त हुईं और मिश्रबन्धु विनोद में जिस प्रकार उल्लेख है, इन्हीं युगल प्रमाणों के आधार पर हम उसका संक्षिप्त वर्णन करते हैं।

दास कवि वहीवार शाखा के श्रीवास्तव्य कायस्थ थे। इनका जन्मस्थान मौज़ा टेउँगा जिला प्रतापगढ़ (अवध) में था। यह ग्राम प्रतापगढ़ दुर्ग से एक मील के अन्तर पर स्थित है। दासजी के पिता कृपालदास, पितामह वीरभानु, प्रपितामह रामदास और वृद्ध प्रपितामह नरोत्तमदास थे। इनके पुत्र अवधेशलाल तथा पौत्र गौरीशंकर थे। गौरीशंकर के कोई सन्तान नहीं हुई, वे अपुत्र ही स्वर्गगामी होगये इससे दास के वंश की यही समाप्ति हो गयी। उनकी विरादरी से लोग अबतक ट्योंगा ग्राम में निवास करते हैं।

जब प्रतापगढ़ के चन्द्रवंशी राजा छत्रधारी सिंह सम्वत् १७९१ में स्वर्गवासी होगये, तब उनके ज्येष्ठ पुत्र पृथ्वीपति सिंह

राज्यासन पर विराजमान हुए। पृथ्वीपति सिंह के कनिष्ठ भ्राता बाबू हिन्दूपति सिंह दासकवि के आश्रयदाता थे। विष्णुपुराण को छोड़कर अपने सभी ग्रन्थ उक्त बाबू साहेब को समर्पण करके दासजी ने उनका भूरि भूरि गुणगान किया है।

जन्मकाल

मिश्रबन्धुओं का अनुमान है कि दास ने सम्वत् १७८५ में विष्णुपुराण का भाषा काव्य में उल्था किया था, उस समय उनकी अवस्था तीस वर्ष की रही होगी इससे उनका जन्मकाल सम्वत् १७५५ वि० के कुछ इधर उधर होगा। विष्णु-पुराण में उन्होंने अपने आश्रयदाता बाबू हिन्दूपति सिंह का नामोल्लेख नहीं किया है। सम्भव है कि उस समय ये उनके यहाँ न पहुँचे होंगे।

दास के ग्रन्थ

(१) विष्णुपुराण—यह बड़ा ग्रन्थ दोहा चौपाइयों में बना है और कुछ अन्य छन्द भी आये हैं। संस्कृत विष्णुपुराण का उल्था है। इसकी कथा रोचक और कविता सराहनीय है। इसमें रचनाकाल का सम्वत् कवि ने नहीं दिया।

(२) रससारांश—यह सम्वत् १७९१ में बना था। इसमें रसों का वर्णन है और नायक नायिका तथा दूतिकाओं का विस्तार है।

(३) नामप्रकाश (अमरकोष)—सम्वत् १७६५ में बना। इस ग्रन्थ की रचना विविध छन्दों में हुई है और छन्द सब निर्दोष तथा सराहनीय हैं। इसके देखने से प्रकट होता है कि दासजी संस्कृत भाषा के उद्भट विद्वान थे।

(४) छन्दोर्णव—सम्वत् १७९९ में बना। इसमें प्रस्तार, मेरु, मर्कटी पताका, नष्ट, उद्दिष्ट और छन्दों के लक्षण उदाहरण आदि पिंगल का वर्णन है।

(५) काव्यनिर्णय—सम्वत् १८०३ में बना। यह काव्य की उत्तमता में श्रेतष्ठर ग्रन्थ पाठकों के सामने है, अतः इसके विपय में विशेष लिखने की आवश्यकता नहीं है।

(६) शृङ्गारनिर्णय—सम्वत् १८०७ में बना। इसमें नायक, नायिका, उद्दीपन-आलम्बन विभाव और अनुभाव आदि का वर्णन है। यही दास का अन्तिमग्रन्थ है, इसकी रचना प्रशंसनीय है।

गुणदोष का विवरण

यद्यपि दासजी महाकवि थे, तो भी इनमें एक दोष यह था कि अन्य कवि की कविता का भाव अपनी कविता में ज्यों का त्यों उठा कर रख लेने में ज़रा भी नहीं हिचकिचाते थे। श्रीपतिसरोज से अध्याय के अध्याय का भाव उठा कर इन्होंने यथातथ्य काव्यनिर्णय में रख लिया और इस बात को स्वीकार करना तो दूर रहा अपनी कवियों की नामावली में श्रीपतिजी का नाम तक नहीं लिया, मानों उन्हें ये जानते ही न थे। इसके अतिरिक्त संस्कृत ग्रन्थों के बहुतेरे श्लोकों के अनुवाद भी इनकी कविता में वर्तमान हैं। इस स्वल्प दोष के रहते हुए भी इनका पाण्डित्य सराहनीय है। भाषा साहित्य में यदि कोई प्राचीन कवि धुरन्धर समालोचक हुआ है तो वह भिखारीदास ही हैं। यों तो इन्होंने नवों रसों का हृदयग्राही वर्णन किया है, परन्तु शृङ्गार कथन में तो रसिकता की पराकाष्ठा प्रदर्शित की है।

मृत्युकाल

घटनाक्रम के अनुसार दासजी का ५३ या ५४ वर्ष की अवस्था में स्वर्गगामी होना प्रगट होता है। सम्वत् १८०७ के अनन्तर इनके किसी ग्रन्थ के बनने का पता नहीं लगता। उपर्युक्त सम्वत् में राजा पृथ्वीपतिसिंह ने अहमद खाँ बंगश का पक्ष लेकर शाही सेना से युद्ध किया था, इस कारण दिल्लीश्वर के वज़ीर सफ़दरजङ्ग ने छल से उनका वध कर डाला और कुछ दिन के लिये प्रतापगढ़ का राज्य ज़ब्त हो गया तथा बड़ा विप्लव मच गया था। सम्भव है कि इसी गड़बड़ी में दास भी मारे गये हों या रोगवश होकर परलोकगामी हुए हों। जो हो, पर दासकवि का नाम उनकी कृतियों से हिन्दी जगत में सदा अमर रहेगा।

काव्यनिर्णय की विषयानुक्रमणिका।

विषय	पृष्ठ

इतिपञ्चदशमोल्लासः इतिषोडसोल्लासः

इतिइकविंशतिमोल्लासः

काव्यनिर्णय

छप्पय—एक रदन द्वै मातु, त्रिचख चौबाहु पञ्च कर।
षट आनन वर बन्धु, सेव्य सप्तार्चि भाल धर॥
अष्टसिद्धि नवनिद्धि, दानि दसदिसि जस विस्तर।
रुद्र ग्यारह सुबद, द्वादसादित्य ओज वर॥
जो त्रिदस वृन्द बन्दित चरन,
चौदह विद्यन्ह आदि गुर।
तेहि दास पञ्चदसहूँ तिथिन्ह,
धरिय षोड़सो ध्यान उर॥१॥

टिप्पणी—एक दाँत, दो माता, (हथिनी और पार्वती) तीन नेत्र, चार भुजा, पाँच हाथ, (चार हाथ और एक शुण्ड) षड़ानन के श्रेष्ठ बन्धु, सेवा के योग्य, सातवें तेजधारी मस्तक-वाले, आठों सिद्धि नवों निधि के दाता, जिनकी कीर्त्ति दसों दिशाओं में फैली है, ग्यारहवें रुद्र सुन्दर वक्ता, उत्तम प्रकाश-युक्त बारहों सूर्य्य, जिनका चरण देवतावृन्द से वन्दित है और चौदह विद्याओं के आदिगुरु हैं उन (गणेशजी) का दास पन्द्रहों तिथियों में सोलहों (षोड़शोपचार) पूर्वक ध्यान हृदय में धरता है॥१॥

रदन=दाँत। चख=नेत्र षड़ानन=षटानन, कार्तिकेय। अर्चि=तेज। ओज=प्रताप। त्रिदस=देवता।

हस्तलिखित और वेङ्कटेश्वर प्रेस की प्रति में 'षोडशी' पाठ है। भारतजीवन प्रेस की प्रति में 'षोडशो' है, यही अन्तिम पाठ उपयुक्त और सार्थक प्रतीत होता है। षोड़शी कोई ध्यान नहीं है। कविजी ने इस छन्द में गणेशवन्दना के साथ-साथ एक से लेकर सोलह पर्यन्त गणना क्रम का उल्लेख किया है वह कहीं श्लेष से भिन्न अर्थ और कहीं केवल संख्या का बोधक है।

दो०—जगत विदित उदयाद्रि सों, अरवर देस अनूप।
रवि लौं पृथ्वीपति उदित, तहाँ सोमकुल-भूप ॥२॥
सोदर तिनके ज्ञाननिधि, हिन्दूपति सुभ नाम।
जिनकी सेवा सों लह्यो, दास सकल सुखधाम ॥३॥
अट्ठारह सै तीनि को, सम्बत आस्विन मास।
ग्रन्थ काव्यनिरनय रच्यो, विजय दसमि दिन दास ॥४॥
बूझि सुचन्द्रालोक अरु, काव्यप्रकासहु ग्रन्थ।
समुझि सुरुचि भाषा कियो, लै औरौ कवि पन्थ ॥५॥
वही बात सिगरी कहे, उलथो होत इकंक।
निज उक्तिहि करि बरनिये, रहै सुकल्पित संक ॥६॥

टिप्पणी—सब वही बात कहने से केवल उलथा होगा और अपनी ही उक्ति से निर्माण करता हूँ तो अच्छी रचना होने का सन्देह रह जाता है।

उदयाद्रि=उदयाचल। अरवर देस=प्रतापगढ़ प्रान्त। सोमकुल=चन्द्रवंशी। सोदर=सहोदरबन्धु। इकंक=एक मात्र, केवल। सुकल्पित=अच्छी रचना।

दो०—याते दुहुँ मिश्रित सज्यो, छमिहैं कवि अपराधु।
बन्यो अनबन्यो समुझि के, सोधि लेहिंगे साधु ॥७॥

कवित्त-मोसम जे ह्वै हैं ते विसेष सुख पैहैं
पुनि, हिन्दूपति साहेब के नीके मन मानो है।
एते परतोष रसराज रसलीन वासुदेव से प्रवीन
पूरे कविन्ह बखानो है ॥ तातें यह उद्यम अका-
रथ न जैहै सब, भाँति ठहरैहै भलो हौंहूँ
अनुमानो है। आगे के सुकवि रीझिहैं तो
कविताई नत, राधिक कन्हाई सुमिरन को
बहानो है ॥८॥

टि०—तोषनिधि शुक्ल सिगरौर ज़िला इलाहाबाद के रहनेवाले थे। ये श्रेष्ठ कवियों में गिने जाते हैं। इनका सुधानिधि ग्रन्थ बड़ा ही विलक्षण है। तोष दास के समकालीन कवि थे। रसराज—साधारण श्रेणी के कवि थे। इनका रचना काल सम्वत् १८१० कहा जाता है। रसलीन—सैयदग़ुलामनबी बिलगराम ज़िला हरदोई निवासी अरबी फ़ारसी के अच्छे विद्वान और भाषा कविता करने में बड़े निपुण थे। सम्वत १८०३ में ये विद्यमान थे। वासुदेवलाल कायस्थ भी उस समय के अच्छे कवियों में थे।

मिश्रित=मिला हुआ। सज्यो=बनाया, तैयार किया। एतेपर=इतने पर। उद्यम=उद्योग, परिश्रम। अकारथ= निष्फल।

दास के इस कथन में पतत प्रकर्ष दोष प्रत्यक्ष हो रहा है। अभी काव्यनिर्णय बना नहीं और प्रवीण कवियों ने उसकी तारीफ़ कर दी! सम्भव है कि ग्रन्थनिर्माण के अनन्तर यह कवित्त पीछे लिख कर सम्मिलित किया गया हो।

दो०—ग्रन्थ काव्यनिर्नयहि जो, समुझि करहिंगे कंठ।
सदा बसैगी भारती, ता रसना उपकंठ ॥९॥

काव्यप्रयोजन

सवै०—एक लहैं तपपुञ्जन्ह के फल
ज्यों तुलसी अरु सूर गोसाँई।
एक लहैं बहु सम्पति केशव
भूषन ज्यों बरवीर बड़ाई ॥
एकन्ह को जसही सों प्रयोजन
है रसखानि रहीम की नाँईं।
दास कवित्तन्ह की चरचा
बुद्धिवन्तन को सुखदै सब ठाँईं ॥१०॥

टि०—गोस्वामी तुलसीदास और सूरदास, केशवदास, भूषण और बीरबल। रसखान दिल्ली निवासी बादशाह वंश के पठान जो वैष्णव होकर ईश्वर के परम भक्त हुए और उच्च श्रेणी के कवि माने जाते हैं। रहीम, अब्दुल रहीम खानखाना जो अकबर बादशाह के दरबारी नौरत्न में थे। गंग कवि को एक ही छन्द बनाने पर इन्होंने ३६ लाख रुपया दान दिया था। ये हिन्दी के श्रेष्ठ कवि थे।

उपकंठ=कंठ के समीप, गले में।

सो०—प्रभु ज्यों सिखवै वेद,
मित्र मित्र ज्यों सत कथा।
काव्य रसन्ह को भेद,
सुख-सिखदानि तिया सु ज्यों ॥११॥

टि०—प्रभुसम्मित, सुहृदसम्मित और कान्तासम्मित, कविता तीन प्रकार की होती है। जैसे—वेदोपदेश प्रभुसम्मित, पुराणादि की सतकथाएँ मित्रसम्मित और रसभेद वर्णन करने वाला काव्य कान्तासम्मित है, जो सुन्दर प्रवीण महिला की भाँति रंसीली वाणी से आनन्ददायक शिक्षा देता है।

सवै०—सक्ति कवित्त बनाइबे की जेहि
जन्म नक्षत्र में दीन्हि बिधातैं॥
काव्य की रीति सिखी सुकवीन्ह सों
देखी सुनी बहु लोक की बातैं॥
दास है जामें इकत्र ये तीनि
बनै कविता मनरोचक तातैं।
एक बिना न चलै रथ जैसे
धुरन्धर सूत की चक्र निपातैं॥१२

काव्याङ्ग वर्णन

सो०—रस कविता को अङ्ग, भूषन हैं भूषन सकल।
गुन सरूप औ रङ्ग, दूषन करै कुरूपता॥१३॥

धुरन्धर=भार उठानेवाला धुरा। सूत=रस्सी, जोत। चक्र=पहिया। भूषण=अलंकार।

टि०—रस कविता का शरीर है और सम्पूर्ण अलंकार आभूषण हैं। गुण सुन्दरता और वर्ण है तथा दोष बदसूरत बनानेवाले हैं।

भाषा लक्षण

दो०—भाषा ब्रजभाषा रुचिर, कहैं सुकवि सब कोइ।
मिलै संस्कृत पारसिहु, पै अति प्रगट जु होइ ॥१४॥
ब्रज मागधी मिलै अमर, नाग जमन-भाषानि।
सहज पारसीहू मिलै, षट विधि कवित बखानि ॥१५॥

टि०—ब्रजभाषा, मागधी, संस्कृत, अपभ्रंश, फ़ारसी और प्राकृत (स्वाभाविक बोल चाल की) भाषा, इन्हीं छओं भाषाओं के शब्दों द्वारा हिन्दी कविता का निर्णय श्रेष्ठ होता है।

कवि०—सूर केसो मंडन विहारी कालिदास ब्रह्म, चिन्तामनि मतिराम भूषन से ज्ञानिये। लीलाधर सेनापति निपट नेवाज निधि, नीलकंठ मिश्र सुकदेव देव मानिये ॥ आलम रहीम रसखानि रसलीन और, सुन्दर सुमति भये कहाँ लौं बखानिये। ब्रजभाषा हेतु ब्रजबास ही न अनुमानो, ऐसे कविन्ह की बानिहू से जानिये ॥ १६ ॥

दो०—तुलसी गङ्ग दुओौ भये, सुकविन्ह के सरदार।
इनकी काव्यन्ह में मिली, भाषा विविध प्रकार ॥१७॥

सवै०—जानै पदारथ भूषनमूल
रसाङ्गपराङ्गन्ह में मति छाकी।
सो धुनि अर्थन्ह वाक्यन्ह लै
गुन सब्द अलंकृत सों रति पाकी॥
चित्र कवित्त करै तुक जानै
न दोषन्ह पन्थ कहूँ गति जाकी।
उत्तम ताको कवित्त बनै
करै कीरति भारती यों अति ताकी॥१८॥

टि०—पदार्थ, (वाचक, लक्षक, व्यञ्जक) भूषनमूल, (अलंकार सार) रसाङ्ग, (रस की सामग्री) और अपराङ्ग (अङ्गाङ्गीभाव)।

इति श्री काव्यनिर्णये मंगलाचरण वर्णनं नाम प्रथमोल्लासः॥१॥

पदार्थ निर्णय

दो०—पद वाचक अरु लाच्छनिक, व्यञ्जक तीनि विधान।
तातें वाचक भेद को, पहिले करौं बखान॥१॥

वाचक लक्षण

दो०—जाति जदिच्छा गुन क्रिया, नाम जु चारि प्रमान।
सब की संज्ञा जाति गनि, वाचक कहैं सुजान॥२॥
जाति नाम जदुनाथ अरु, कान्ह जदिच्छा धारि।
गुन तें कहिये स्याम अरु, क्रिया नाम कंसारि॥३॥

रूप रङ्ग रस गन्ध गनि, औरहु निश्चल धर्म ।
इन सब को गुन कहत हैं, गुनि राखौ यह मर्म ॥४॥
ऐसे शब्दन्ह सों फुरै, सङ्केतित जो अर्थ ।
ताको वाच्यारथ कहैं, सज्जन सुमति समर्थ ॥५॥

टि०—शब्द के संकेतित अर्थ को वाच्यार्थ और उस शब्द को उसका वाचक कहते हैं ।

अविधाशक्ति लक्षण

दो०—अनेकार्थहू सब्द में, एक अर्थ की व्यक्ति ।
तेहि वाच्यारथ को कहैं, सज्जन अविधासक्ति ॥६॥
कहूँ होत संयोग तें, एकै अर्थ प्रमान ।
संख चक्रजुत हरि कहे, होत विष्नु को ज्ञान ॥७॥
असंजोग ते कहुँ कहैं, एक अर्थ कविराय ।
कहे धनञ्जय धूम बिनु, पावक जानो जाय ॥८॥
बहुत अर्थ को एक कहुँ, साहचर्य तें जानि ।
बेनी-माधव के कहे, तीरथ बेनी मानि ॥९॥

हरि=विष्णु, इन्द्र, सर्प, मेढक, सिंह, घोड़ा, सूर्य्य, चन्द्रमा, तोता, बन्दर इत्यादि । धनञ्जय=अग्नि, विष्णु, अर्जुन वृक्ष, पार्थ, चीता और नाग । साहचर्य=साथ, मेल । बेनी=स्त्रियों की चोटी, त्रिवेणी, एक प्रकार की सिटकिनी । माधव=विष्णु, श्रीकृष्ण, वसन्त, वैशाखमास, मधु, महुआ । बेनीमाधव=त्रिवेणीतीर्थ, तीर्थराज ।

कहुँ विरोध तें होत है, एक अर्थ को साज।
चन्दै जानि परै कहे, राहु ग्रस्यो द्विजराज ॥१०॥
अर्थप्रकरन तें कहूँ, एक अर्थ पहिचानि।
वृक्ष जानिये दल झरे, दल साजे नृप जानि ॥११॥
कहूँ लिङ्ग ते पाइये, एक अर्थ को ठाट।
सरसइ क्यों कहिये कहे, बानी बैठो हाट ॥१२॥
आन सब्द ढिग ते कहूँ, पइये एकै अर्थ।
सिखीपिच्छ तें जानिये, केकी परै समर्थ ॥१३॥
दास कहूँ सामर्थ तें, एक अर्थ ठहरात।
व्याल वृक्ष तोरयो कहे, कुञ्जर जानो जात ॥१४॥
कहूँ उचित तें पाइये, एक अर्थ की रीति।
तरु पर द्विज बैठो कहे, होत बिहङ्ग प्रतीति ॥१५॥
कहूँ देस बल कहत हैं, एक अर्थ कवि धीर।
मरु में जीवन दूरि है, कहे जानियत नीर ॥१६॥

द्विजराज=चन्द्रमा, ब्राह्मण, गरुड़, कपूर, चौभड़दाँत। दल=पत्ता, सेना, चक्र, धन, झुंड, म्यान। लिङ्ग=चिह्न, निशान। बानी=सरस्वती, बनियाँ, पवर्त्तक, वर्ण, वचन, प्रतिज्ञा। सिखी=शिखी, अग्नि, मुरैला। केकी=मोर, मयूर। व्याल=सर्प, हाथी, धूर्त्त। कुञ्जर=हाथी। द्विज=ब्राह्मण, चन्द्रमा, पच्छी, दाँत। विहङ्ग=पच्छी। जीवन=ज़िन्दगी, परम-प्यारा, पानी, जीविका, घृत, मक्खन, पुत्र, गंगा, परमेश्वर, पवन, मज्जा।

कहूँ काल तें होत है, एक अर्थ की बात।
कुवलय निसि फूलो कहे, कुमुद दिवस जल जात ॥१७॥
कहूँ स्वरादिक फेर तें, एकै अर्थ प्रसङ्ग।
बाजी भली न बाँसुरी, बाजी भलो तुरङ्ग ॥१८॥
कहूँ अभिनयादिकन्ह तें, एकै अर्थ प्रकार।
इती देखियत देहरी, इते बड़े हैं बार ॥१९॥
जामें अभिधासक्ति करि, अर्थ न दूजो कोइ।
वहै काव्य कीन्हें बनै, नातो मिश्रित होइ ॥२०॥

टि०—उपर्युक्त कोई भी सम्बन्ध जब अनेकार्थी शब्दों में मिश्रित रहता है, तब उस शब्द का एक ही अर्थ ग्रहण होता है। इस व्यापार को अभिधाशक्ति कहते हैं।

उदाहरण

दो०-मोर-पक्ष को मुकुट सिर, उर तुलसीदल-माल।
जमुना तीर कदम्ब ढिग, मैं देख्यों नंदलाल ॥२१॥

काल=समय, वक्त। कुवलय=नीलकमल, कुमुद, भूमंडल। कुमुद=कोका, कूईं, लाल कमल, चाँदी, विष्णु, कपूर, पश्चिम कोण का दिग्गज, बन्दर। स्वरादिक=शब्दादि, अ० आ० इ० ई० अभिनय आदि=वाक्यों द्वारा कार्य करना आदि। वार=दिन, केश, मर्तबा। नातो=नाता, सम्बन्ध, तअल्लुक। मिश्रित=मिला हुआ। मोर=मयूर, मेरा। पक्ष= पखेरू का पर, ओर, सहायक, निमित्त। माल=पंक्ति, समूह, माला, फूलों का हार। तीर=तट, बाण, समीप। कदम्ब=कदम का पेड़, समूह। नंद, आनन्द, पुत्र, नद। लाल=सुर्खरंग, माणिक, शिशु, प्यारा।

टि०—मोर-पच्छ, दल, माल, तीर, कदम्ब, नंद और लाल शब्द यद्यपि अनेकार्थी हैं; किन्तु यहाँ इनमें एक ही अर्थ की अभिधा है।

लक्षणाशक्ति वर्णन

दो०—मुख्य अर्थ के बाध तें, शब्द लाच्छनिक होत।
रूढ़ि औ प्रयोजनवती, द्वै लच्छना उदोत ॥२२॥

टि०—जहाँ शब्द के वाच्यार्थ का वक्ता के इच्छित अर्थ से मेल नहीं होता, वहाँ वाञ्छित अर्थ से मिलाने के लिये उस शब्द का जो अर्थ कल्पित करना पड़ता है उसे लक्ष्यार्थ कहते हैं और वह शब्द लक्षक कहलाता है। इस शब्द व्यापार को लक्षणावृत्ति कहते हैं। लक्षणा दो प्रकार की है, एक रूढ़ि और दूसरी प्रयोजनवती।

रूढ़ि लक्षणा लक्षण

दो०—मुख्यअर्थ के बाध पै, जग में वचन प्रसिद्ध।
रूढ़ि लच्छना कहत हैं, ताको सुमति समृद्ध ॥२३॥

उदाहरण

दो०—फली सकल मन कामना, लूटेउ अगनित चैन।
आज अँचइ हरि रूप सखि, भये प्रफुल्लित नैन ॥२४॥

टि०—फलना शब्द वृक्षों के लिये उपयुक्त है किन्तु मन-कामना वृक्ष नहीं है जो फलेगी। चैन कोई वस्तु नहीं जो लूटा जा सके। हरि का रूप जल अथवा कोई रस नहीं जिसको पिया जा सके और नेत्र पुष्पतरु नहीं जो फूलेंगे।

बाध=व्याघात, अर्थ की असंगति। उदोत=प्रकाशित, प्रसिद्ध।

कवित्त–अँखियाँ हमारी दईमारी सुधि बुद्धि हारी,
मोहू ते नियारी दास रहैं सब काल में। कौन गहै
ज्ञानै काहि सौंपत सयानै कौन, लोक ओक जानै
ये नहीं हैं निजहाल में॥ प्रेम पगि रहीं महामोह
में उमगि रहीं, ठाक ठगि रहीं लगि रहीं वनमाल
में। लाज को अँचै के कुल धरम पचै के
बिथा,-बन्धन सँचै के भईं मगन गोपाल में ॥२५॥

टि०—लाज का पीना, कुलधर्म का पचाना, व्यथा बन्धन का संचित करना और गोपाल मे डूबना, इन सब में मुख्यार्थ से असंगति है, पर संसार में रूढ़ि द्वारा अर्थ होता है।

प्रयोजनवती लक्षणा

दो०–प्रयोजनवती जु लच्छना, द्वै बिधि तासु प्रमान।
एक शुद्ध गौनी दुतिय, भाषत सुकवि सुजान ॥२६॥

शुद्ध लक्षणा भेद

दो०—उपादान इक जानिये, दूजि लच्छित ठान।
तीजी सारोपा कहैं, चौथी साध्यवसान ॥२७॥

उपादान का लक्षण उदाहरण

दो०–उपादान सो लच्छना, पर गुन लीन्हें होइ।
कुन्त चलत सब जग कहै, नर बिनु चलै न सोइ ॥२८॥

दइमारी = अभागिनी। ओक = स्थान। निजहाल = अपने होश में।

जमुनाजल को जात ही, डगरी गगरी जाल।
बजी बाँसुरी कान्ह की, गिरीं सकल तेहि काल ॥२९॥
खेलत ब्रज होरी सजैं, बाजे बजैं रसाल।
पिचकारी चलती घनी, जहँ तहँ उड़त गुलाल ॥३०॥

टि०– उपादान लक्षणा दूसरे के गुण को लक्षित करती है। भाला चलता है, असंख्य गगरी मार्ग में यमुनाजल भरने को जाती हैं, घनी पिचकारियाँ चलती हैं और सर्वत्र गुलाल उड़ रहा है। इन वाक्यों में मुख्यार्थ का बोध है, किन्तु साथ ही यह ज्ञान होता है कि कर्त्ता पुरुष वा स्त्री है भाला, गगरी, बाजा, पिचकारी, गुलाल सब जड़ हैं। ये स्वयम् चलते, उड़ते नहीं।

लक्षित लक्षणा

दो०–निज लच्छन औरहि दिये, लच्छ लच्छना जोग।
गंगातटवासी कहैं, गगावासी लोग ॥३१॥
सुन्दरि दिया बुझाइ के, सोवति सौध मझार।
सुनत बाँसुरी कान्ह की कढ़ी तोरि के द्वार ॥३२॥

टि०– गंगा तीर निवासी को गंगावासी कहना, वंशी की ध्वनि को बाँसुरी सुनना कथन और किवाड़ तोड़ने को द्वार तोड़ना कहना असंगत है, पर मुख्यार्थ को लक्षणा लक्षित कर रही है, क्योंकि गंगा में किसी का घर (वास) हो नहीं सकता।

सारोपा लक्षणा

दो०–और थापिये और को, क्यों हूँ समता पाइ।
सारोपा सो लच्छना, कहैं सकल कविराइ ॥३३॥

मोहन मो दृगपूतरी, वा छवि सिगरी प्रान ।
सुधा चितौनि सुहावनी, मीचु बाँसुरी तान ॥३४॥

टि०—मोहन को पुतरी, छवि को प्राण, चितवन को अमृत और वंशी ध्वनि को मृत्यु स्थान करना सारोपा लक्षणा है। अलंकार में यह द्वितीय निदर्शना है। जैसे=धापिय गुण उपमेय को, उपमानहि के अंग। ताकहँ तृतिय निदर्शना, भाषत सुमति उतंग ॥"

साध्यवसान लक्षणा

दो०—जाको समता कहन को, वहै मुख्य कहि देइ ।
साध्यवसान सुलच्छना, विषय नाम नहिं लेइ ॥३५॥
बैरिन कहा बिछावती, फिरि फिरि सेज कृसान ।
सुन्यो न मेरे प्रान धन, चहत आज कहुँ जान ॥३६॥

टि०—जिसकी समता कहना है उसको ही मुख्य कह देना साध्यवसान लक्षणा है। जैसे—सखी को बैरिन और सेज को कृशानु कहना साध्यवसान है। अलंकार में रूपकातिशयोक्ति है

गौनीलक्षणा

दो०—गुन लखि गौनीलच्छना, द्वै बिधि तासु प्रमान ।
सारोपा प्रथमै गनो, दूजी साध्यवसान ॥३७॥

सारोपा गौनी लक्षणा

दो०—सगुनारोप सुलच्छना, गुन लखि करि आरोप ।
जैसे सब कोऊ कहैं, बृषभै गँवई गोप ॥३८॥

सूर सेर करि मानिये, कायर स्यार बिसेखि।
विद्यावान त्रिनयन हैं, कूर अन्ध करि लेखि ॥३९॥

टि०—गुण लख कर तदनुसार आरोप करना सारोपा गौनी लक्षणा है। जैसे ग्रामवासी अहीरों को सब कोई बैल कहते हैं। सूरवीर सिंह हैं, कादर गीदड़ हैं, विद्वान त्रिनेत्र हैं और मूर्ख अन्धे हैं।

साध्यवसान गौनी लक्षणा

दो०—गौनी साध्यवसान सो, केवल ही उपमान।
कहा बृषभ सों कहत हौ, बातें है मतिमान ॥४०॥

व्यञ्जना शक्ति निर्णय

सवै०—वाचक लच्छक भाजन रूप हैं
व्यञ्जक को जल मानत ज्ञानी।
जानि परै न जिन्हैं तिन्हके
समुझाइबे को यह दास बखानी॥
ये दोउ होत अव्यङ्ग सव्यङ्ग
औ व्यङ्ग इन्हैं बिनु लावै न बानी।
भाजन लाइय नीर विहीन
न आइ सकै बिनु, भाजन पानी ॥४१॥

दो०—व्यञ्जन व्यञ्जक जुक्त पद, व्यङ्ग तासु जो अर्थ।
ताहि बुझैबे की सकति, है व्यञ्जना समर्थ ॥४२॥

सूधो अर्थ जु बचन को, तेहि तजि औरै बैन।
समुझि परै तेहि कहत हैं, सक्ति व्यञ्जना ऐन ॥४३॥

टि०—वाच्यार्थ और लक्ष्यार्थ से भिन्न ज्ञान पड़ने वाले अर्थ को व्यङ्गार्थ और उस शब्द वा शब्द समूह को उसका व्यञ्जक कहते हैं। इस प्रकार का शब्दव्यापार व्यञ्जनावृत्ति कहा जाता है। इसको ध्वनि तथा व्यंग भी कहते हैं।

अभिधामूलक व्यंग

दोहा—सब्द अनेकारथन बल, होइ दूसरो अर्थ।
अभिधामूलक ब्यंग तेहि, भाषत सुकवि समर्थ ॥४४॥

भयो अपन कै कोप-जुतहि, कै बैरो एहि काल।
मालिनि आजु कहै न क्यों, वा रसाल को हाल ॥४५॥

टि०—'रसाल' शब्द से नायक की कुशलता पूछना व्यञ्जित होना अभिधामूलक व्यंग है।

लक्षणामूलक व्यंग

दोहा—गूढ़ अगूढ़ौ ब्यंग द्वै, होत लच्छनामूल।
छिपी गूढ़ प्रगटहि कहौ, है अगूढ़ समतूल ॥४६॥

कवि सहृदय जाकहँ लखैं, ब्यग कहावत गूढ़।
जाको सब कोई लखत, सो पुनि होय अगूढ़ ॥४७॥

गूढ़ब्यंग का उदाहरण

सवै०—आनन में मुसकानि सुहावनि
बंकता नैनन्ह माझ छई है।

बैन खुले मुकुले उरजात
जकी विथको गति ठौनि ठई है ॥
दास प्रभा उछलै सब अंग
सुरंग सुबासता फैलि गई है।
चन्दमुखी तन पाइ नबीनो
भई तरुनाई अनन्द मई है ॥४८॥

टि०—जिसके पाने से तरुणता आनन्दित हुई है उसे जो पुरुष पावेगा उसको परमानन्द होगा, यह लक्षणामूलक गूढ़ व्यङ्ग है।

अगूढ़ व्यंग का उदाहरण

दो०—धन जोबन इन दुहुँन की, सोहत रीति सुवेश।
मुग्ध नरन्ह मुग्धन्ह करै, ललित बुद्धि उपदेश ॥४९॥

टि०—धन पाने से मूर्ख भी बुद्धिमान हो जाता है और युवावस्था प्राप्त होने पर स्त्री चतुर हो जाती है। यह लक्षणा-मूलक अगूढ़ व्यंग है, क्योंकि वही वाच्यार्थ से भी प्रगट हो रहा है।

दस व्यञ्जक वर्णन

दो०—होत अर्थ व्यञ्जकन्ह को, दस बिधि सुभ्र विसेख।
पहिले व्यक्ति विसेष पुनि, है बोधव्य सुलेख ॥५०॥

मुकुले=बिना खिला फूल, कली। उरजात=कुच। ठौनि= स्थिति, ढंग। ठई=समारम्भ की है। सुबेश=सुन्दर भेष। मुग्धनर=मूर्ख मनुष्य। मुग्धा=नवयौवना स्त्री। सुभ्र=शुभ्र, धवल।

काकु बिसेषो वाक्य अरु, वाच्यबिसेष गनाइ।
अनसन्निधि प्रस्ताव पुनि, देस काल नौ भाइ ॥५१॥
है चेष्टा सुबिसेषहू, दसम भेद कविराइ।
इनके मिले मिलै किये, भेद अनन्त लखाइ ॥५२॥

टि०—व्यक्ति विशेष, बोधव्यविशेष, काकुविशेष, वाक्य-विशेष, वाच्यविशेष, अन्यसन्निधिविशेष, प्रस्तावविशेष, देशविशेष, कालविशेष और चेष्टाविशेष यही दसों विशेष व्यञ्जक हैं।

व्यक्तिविशेष का उदाहरण

दो०—अति भारी जलकुम्भ लै, आई सदन उताल।
लखि श्रम सलिल उसास अलि, कहा बूझती हाल॥५३॥

टि०—कहनेवाली नायिका है, वह अपनी गुप्त लीला छिपाती है। यह बात व्यंग से जानी जाती है, अतः व्यक्ति-विशेष व्यंग है।

बोधव्यविशेष का उदाहरण

दो०—चिन्ता जृम्भा नींद अरु, व्याकुलता अलसानि।
लह्यो अभागिनि हौं अली, तैंहूँ गही सुबानि ॥५४॥

टि०—जिससे कहती है उसकी क्रिया व्यञ्जित होना बोधव्यविशेष व्यंग है।

जलकुम्भ=पानी का घड़ा। उताल=उतलही, जल्दी। श्रमसलिल=पसीना। उसास=दम फूलना। जृम्भा=जम्हाई।

काकुविशेष का उदाहरण

दो०—दृग लखिहैं मधुचन्द्रिका, सुनिहैं कलधुनि कान।
रहिहैं मेरे प्रान तन, प्रीतम करो पयान ॥५५॥

टि०—प्रत्यक्ष में प्रीतम को प्रस्थान करने के लिये कहती है, किन्तु काकु से वर्जन व्यञ्जित होना काकुविशेष व्यंग है।

वाक्यविशेष का उदाहरण

दो०—अबलोंही मोही लगी, लाल तिहारी डीठि।
जात भई अब अनत कित, करत सामुहे नीठि ॥५६॥

टि०—नायिका के वाक्य से नायक की दूसरी स्त्री पर अनुरक्तता व्यञ्जित होना वाक्यविशेष व्यंग है।

वाच्यविशेष का उदाहरण

सवै०—भौन अँधारेहु चाहि अँध्यार
चमेली के कुञ्ज के पुञ्ज बने हैं।
बोलत मोर करैं पिक सोर
जहाँ तहँ गुञ्जत भौंर घने हैं॥
दास रच्यो अपने ही बलास को
मैन जु हाथन्ह सों अपने हैं।
कूल कलिन्दिजा के सुखमूल
लतान के वृन्द वितान तने हैं ॥५७॥

मधुचन्द्रिका=चैत की चाँदनी। कलधुनि=कोयल की आवाज़। डीठि=दृष्टि, नज़र। नीठि=अरुचि, अनिच्छा। कूल=तट, किनारा। कलिन्दिजा=यमुना। वितान=तम्बू।

टि०—वाच्यार्थ से सहेट योग्य स्थान सूचित करती है, इससे विहार की इच्छा व्यञ्जित होना वाच्यविशेष व्यंग है।

पुनः

दो०—एहि निसि धाय सताइ ले, स्वेद खेद तें मोहि।
काल्हि लालिहू के कहे, संग न स्वावौं तोहि ॥५८॥

टि०—वाच्यार्थ से उपपति का समीप होना सूचित होता है। धात्री के बहाने अपर दिन में सुअवसर व्यञ्जित करना वाच्यविशेष व्यंग है।

अन्यसन्निधिविशेष का उदाहरण

दो०—राज करो गृहकाज दिन, बीतत याही माँझ।
ईठ तहाँ कल एक पल, नीठ निहारे साँझ ॥५९॥

टि०—अन्य की समीपता में नायिका का नायक से कथन है। विहार की इच्छा व्यञ्जित होना अन्यसन्निधिविशेष व्यंग है।

प्रस्तावविशेष का उदाहरण

दो०—बैरी बासर बीतते, प्रीतम आवनहार।
तकै दुचित कित सुचित ह्वै, साजहि उचित सिँगार ॥६०

टि०—उचित श्रृङ्गार के प्रस्ताव से यह व्यञ्जित होना कि अब तक अनुचित श्रृङ्गार उपपति को प्रसन्न करने के निमित्त करती थी, प्रस्तावविशेष व्यंग है।

देशविशेष का उदाहरण

दो०—हौँ असक्त ज्यों त्या इतहि, सुमन चुनैंगी चाहि।
मानि बिनय मेरो अली, और ठौर तू जाहि ॥६१॥

धाय=धात्री, दाई। लालिहू=प्यारी सखी। ईठ=मित्र, दोस्त। नीठ=ज्यों त्यों करके, कठिनता से। बौरी=पगली। बासर=दिन। चाहि=प्रसन्नता से।

टि०—स्थान विहार योग्य है। अपनी अशक्तता प्रगट कर सखी को हटाना चाहती है। नायक को सहेट बदना व्यञ्जित होना देशविशेष व्यंग है।

कालविशेष का उदाहरण

दो०—नहीं रहत तो जान दे, कहा रही गहि फेंट।
घर फिरि अइहैं होतही, बन बागन्ह सों भेंट ॥ ६२ ॥

टि०—बसन्तऋतु कामोद्दीपक है, वन बागों को देखते ही घर लौट आवेंगे इससे कामोद्दीपन का भरोसा व्यञ्जित होना कालविशेष व्यंग है।

चेष्टाविशेष का उदाहरण

सवै०—मुख मोरत नैन की सैनन्ह दै
अँग अंगन्ह दास देखाइ रही।
ललचौंहें लजौंहें हँसौंहें चितै
हित सों चित चाव बढ़ाइ रही ॥
मुरिकै अरिकै दृग सों भरिकै
जुग भौंहनि भाव बताइ रही।
कनखा करिकै पग सों परिकै
पुनि सूने सकेत में जाइ रही ॥ ६३ ॥

टि०—चेष्टा से विहार की इच्छा व्यञ्जित होना चेष्टा विशेष व्यंग है।

मिश्रितविशेष का उदाहरण

दो०—वक्ताअरु बोधव्य सों, बरन्यो मिलितविसेष।
यों हीं औरौ जानि हैं, जिनकी सुमति असेष ॥ ६४ ॥

एहि सज्ञा अज्ञा रहै, एहि हौं चाहत सैन
हे रतौंधिहे बात यह, सैन समय भूलै न ॥ ६५ ॥

टि०—वक्ता नायिका की चतुराई है और रतौंधिहा का बहाना बोधव्य को चातुरी व्यञ्जित होना मिश्रितविशेषव्यंग है।

व्यङ्ग से व्यङ्ग वर्णन

दो०—त्रिबिधि व्यङ्गहू तें कहै, व्यङ्ग अनूप सुजान ।
उदाहरन ताको कहौं, सुनो सुमति दै कान ॥६६॥

वाच्यार्थ व्यङ्ग से व्यङ्ग का उदाहरण

दो०—अम्बे फिरि मोहि कहैगो, कियो न तू गृहकाज ।
कहै सो करि आऊँ अबै, मुँदो जात दिनराज ॥६७।

टि०—माता की आज्ञा मानने का निहोरा देना वाच्यार्थ है और अन्यत्र जाने की इच्छा व्यङ्ग है। दिन में ही परपुरुष से विहार करने की इच्छा दूसरो व्यङ्ग है।

लक्ष्यार्थ व्यङ्ग से व्यङ्ग का उदाहरण

दो०—धनि धनि सखि मोहि लागि तू, सहे दसन नख देह।
परमहितू है लाल सों, आई राखि सनेह ॥६८॥

टि०—धिकधिक के स्थान में धन्य धन्य कहना लक्षणा-मूलक व्यंग है। उसका अपराध प्रकाशित न करना दूसरी व्यङ्ग है।

व्यञ्जक व्यङ्ग से व्यङ्ग का उदाहरण

दो०—निहचल बिसनीपत्र पर, उत बालक एहि भाँति ।
मरकत भाजन पर मनो, अमल संख सुभ काँति ॥६९॥

टि०—वक को निश्चलता से वन का निर्जन व्यञ्जित होना व्यंग है। वनस्थली में नायक को विहार के लिये चलने का संकेत करना दूसरा व्यंग है। यह व्यञ्जनामूलकव्यंगले व्यंग है।
इति श्री काव्यनिर्णये पदार्थनिर्णय वर्णनं नाम द्वितोयोल्लासः ॥ २ ॥

अलङ्कारमूल वर्णन

दो०—कहूँ वचन कहुँ व्यंग में, परै अलंकृत आइ।
तेहि तें कछु संच्छेप करि, तिन्हहिं देत दरसाइ ॥१॥

उपमादि अलंकार

दो०—कहुँ काहू सम बरनिये, उपमा सोई मानु।
विमल बाल-मुख इन्दु सों, यौंही औरौ जानु ॥२॥
वासों वहै अनन्वया, मुख सों मुख छवि देय।
ससि सों मुख मुख सों ससी, सो उपमाउपमेय ॥३॥
उपमा अरु उपमेय को, सम न कहै गहि बैर।
ताको कहत प्रतीप हैं, पञ्च प्रकार सुफैर ॥४॥

पाँचों प्रतीप का उदाहरण

सवै०—चन्द कहैं तिय आनन सों
जिनकी मति बाँके बखान सों है रली।
आनन एकता चन्द लखै
मुख के लखे चन्द गुमान घटै अली ॥
दास न आनन सो कहैं चन्द
दई सों भई यह बात न है भली।
ऐसो अनूप बनाइ कै आनन
राखिबे को ससिहू की कहा चली ॥५॥

टि०—तिय आनन को चन्द्रमा कहना प्रथम प्रतीप है। मुख की बराबरी चन्द्रमा चाहते हैं, द्वितीय प्रतीप। मुख के देखने से चन्द्रमा का गर्व घट जाता है, तृतीय प्रतीप। चन्द्रमा को मुख के समान नहीं कह सकते, चतुर्थ प्रतीप है और अनुपम मुख के सामने चन्द्रमा के रहने की आवश्यकता नहीं अर्थात् उसका रहना व्यर्थ, पंचम प्रतीप अलंकार है।

दृष्टान्तालंकार

दो०—सम बिम्बन प्रतिबिम्ब गति, है दृष्टान्त सुढंग।
तरुनी में मो मन बसै, तरु में बसै बिहंग॥ ६॥
सामान्य तें बिसेष दृढ़, है अर्थान्तरन्यास।
तो रस बिनु औरै कहा, जल बिनु जाइ न प्यास॥ ७॥
द्वै सु एकही अर्थ बल, निदरसना की टेक।
सतन असत सो माँगिबो, औ मरबो है एक॥ ८॥
सम सुभाव हित अहित पर, तुल्ययोग्यता चारु।
सम फल चाखै दाख सों, सींचन काटनहारु॥ ९॥

उत्प्रेक्षादि वर्णन

दो०—जहाँ कछू कछु सों लगै, समुझत देखत उक्त।
उत्प्रेछा तासों कहैं, पौन मनौं बिषयुक्त॥१०॥
चन्द मनौं तम ह्वै चल्यौ, जनु तियमुख ससि हेत।
दास जानियत दुरन को, रंग लियो सजि सेत॥११॥
यह नहिं यह कहिये जहाँ, तत्सम वस्तु दुराय।
वहै अपन्हुति अधरछत, करत न पिय हिमवाय॥१२॥

हिमवाय=शीतलवायु, ठंढी हवा।

लच्छन नाम प्रकास है, सुमिरन भ्रम सन्देह ।
जदपि भिन्नहूँ है तदपि, उत्प्रेछहि को गेह ॥१३॥
सो०—समुझत नन्दकिसोर, चन्द निरखि तव बदन छवि ।
लखि भ्रम रहत चकोर, चन्द किधौं यह बदन है ॥१४॥

व्यतिरेकालंकार

दो०—व्यतिरेक जु गुन दोष गनि, समता तजै यकंक ।
क्यों सम मुख निकलंक यह, वह सकलंक मयंक ॥१५॥
आरोपन उपमान को, ताको रूपक नाम ।
कान्हकुँअर कारीघटा, विज्जुछटा तू बाम ॥१६॥

अतिशयोक्ति वर्णन

दो०—अतिसयोक्ति अति वरनिये, औरे गुन बलभार ।
दाबिसैल महि निमिष महँ, कपि गो सागर पार ॥१७॥

श्रीहनूमान जी जिस पर्वत पर से समुद्रोल्लंघन के लिये उछले, वह धरती में दब गया, इससे उनके बल और भार वर्णन में अतिशयोक्ति है ।

है उदात महत्व अरु, संपति को अधिकार ।
छरीदार जहँ इन्द्र है, नगन जड़ित मगद्वार ॥१८॥
अधिक जानि घटि बढ़ि जहाँ, है अधार आधेय ।
जग जाके वोदर बसै, तहि तू ऊपर लेय ॥१९॥

अन्योक्त्यादि वर्णन

अन्यउक्ति औरहि कहै, औरहि के सिर डारि ।
सुक सेमर को सोइबो, अजहूँ तजहि बिचारि ॥२०॥

यकंक=सर्वथा । मयंक=चन्द्रमा । नगन=रत्नगण ।

व्याजस्तुति पहिचानिए, स्तुति निन्दा के व्याज ।
विरह ताप वाको दियो, भलो कियो ब्रजराज ॥२१॥
परजायोक्ति जहाँ नई, रचना सों कछु बात ।
बन्दों व्याल बिछावनो, जासु हृदय द्विजलात ॥२२॥
कहै कहन को बिधि मुकुरि, कै आछेप सुवेस ।
विरहबरी को मैं नहीं, कहनी लाल सँदेस ॥२३॥

विरुद्धालंकार वर्णन

दो०–है विरुद्ध अविरुद्ध में, बुधि बल सजै विरुद्ध ।
कुटिलकान्ह क्यों बस कियो, लखी बानि तुव सुद्ध ॥२४॥
बिन कारन कारज प्रगट, विभावना विस्तारु ।
चितवत ही घायल करैं, बिन अंजन दृग चारु ॥२५॥
विसेषोक्ति कारज नहीं, कारन की अधिकाय ।
महा महा जोधा थके, टर्‌यो न अंगद-पाय ॥२६॥
गुन औगुन कछु और तें, और धरै उल्लास ।
सत परदुख तें दुख लहैं, पर सुख तें सुखदास ॥२७॥
अलंकार तद्‌गुन कहौ, संगति-गुन गहि लेत ।
होत लाल तिय के अधर, मुक्त हँसत फिरि सेत ॥२८॥
है समान मिलितौ गनो, मिलित दुहूँ बिधि दास ।
मिली कमल में कमलमुखि, मिली सुबास सुबास ॥२९॥
है विसेष उन्मिलित मिलि, क्यौहूँ जान्यो जाय ।
मिल्यौ कमल मुख कमल बन, बोलतहीं बिलगाय ॥३०॥

व्यालबिछावनो=विष्णु । द्विजलात=भृगुलता । मुकुरि=इनकार करके ।

समालंकार वर्णन

दो०—उचित बात ठहराइये, सम भूषन तेहि नाम ।
याकजरारे दृगन बसि, क्यौं न होंहिँ हरि स्याम ॥३१॥
भावी भूत प्रत्यक्षही, है भाविक को साजु ।
हमैं भयो सुरलोक सुख, प्रभु-दरसन तें आजु ॥३२॥
सो समाधि कारज सुगम, और हेतु मिलि होत ।
मिलबे की इच्छा भई, नास्यौ दिन उद्दोत ॥३३॥
कछु द्वै होंहिँ सहोक्ति में, साथहिँ परै प्रसंग ।
बढ़न लगी नव बाल उर, सकुच कुचन्ह के संग ॥३४॥
है बिनोक्ति कछु बिन कछू, सुभ कै असुभ चरित्र ।
माया बिन सुभ योग जप, नसुभ सुहृद बिन मित्र ॥३५॥
कछु कछु को बदलो जहाँ, सो परिवृत करि डीठि ।
कहा कहौं मनमोहनै, मन लै दीन्हीँ पीठि ॥३६॥

सूक्ष्मालंकार वर्णन

दो०—संज्ञा ही बातें किये, सूक्षम भूषन नाम ।
निज निज उर छुइ छुइ करी, सौंहैं स्यामास्याम ॥३७॥
साभिप्राय बिसेषनन, परिकर भूषन जानि ।
देव चतुरभुज ध्याइये, चारि पदारथदानि ॥३८॥

स्वभावोक्ति वर्णन

सूधी सूधी बात सों, सुभावोक्ति पहिचानि ।
हरि आवत माथे मुकुट, लकुट लिये बर पानि ॥३९॥
हेतु समर्थन युक्ति सों, काव्यलिंग को अंग ।
धिकधिकधिकजगरागबिन, फिरि,फिरि कहत मृदंग ॥

इहै एक नहिँ और कहि, परिसंख्या निरसंक।
एक राम के राज में, रह्यो चन्द्र सकलंक ॥४१॥
प्रश्नोत्तर कहिये जहाँ, प्रश्नोत्तर बहु बन्द।
बालअरुन क्यों नयनविय, दिय प्रसाद नखचंद॥४२॥

संख्यालंकार वर्णन

वस्तु अनुक्रम है जहाँ, यथासंख्य तेहि नाम।
रमा उमा बानी सदा, हरिहर विधिसँग बाम॥४३॥
किये जँजीरा जोरि पद, एकावली प्रमान।
श्रुति बसमति मतिबस भगति, भक्तिवस्य भगवान ॥
तजि तजि आसय करन तें, जानि लेहु परजाय।
तनुतजिबाढ़ि द्दगन गई, थिरता द्दग तजि पाय ॥४५॥

संसृष्टि लक्षण

एक छंद में जहँ परै, अलंकार बहु द्दष्टि।
तिल तंदुल से हैं मिले, ताहि कहैं संसृष्टि ॥४६॥

कवि०—घन से सघन स्याम केस वेस भामिनी के, ब्यालिन सी बेनी भाल ऐसो एक भालही। भृकुटी कमान दोऊ दुहुँन को उपमान, नैन से कमल नासा कीर-मद घालही॥ गरब कपोलन मुकुर समता को सीप, श्रौन आगे ओठ आगे बिम्ब पक्व हालही। मोतिन की सुखमा

विय=दोनों। कमान=धनुष। कीर=शुक। मुकुर= दर्पण। बिम्ब=कुन्दुरू।

बिलोकियत दन्तन में, दास हास बीजुरी को देख्यौ एक चालही ॥ ४७ ॥

टि०—केश पर पूर्णोपमा, बेनी पर धर्म लुप्तोपमा, भाल पर अनन्वय, भौंह पर उपमानोपमेय, नैन नासिका कपोल में तीनों प्रतीप, कान ओठ पर चौथा प्रतीप, वा दृष्टान्त वा तुल्य योग्यता, दाँत और हँसी पर निदर्शना अलंकार की संसृष्टि है।

कवि०—ती को मुख इन्दु है जु स्वेदन सुधा को बुंद, मोती-जुत नाक मानों लीने सुक चारो है। ठोढ़ी रूप कूप है कि गाड़ोई अनूप है कि, अभिराम मुख छबिधाम को पनारो है॥ ग्रीवाँ छबि सीवाँ में ललित लाल माल लखि, आवत चकोर जानैं अमल अँगारो है। देखत उरोज सुधि आवत है साधुन के, ऐसोई अचल सिव साहेब हमारो है॥ ४८ ॥

टि०—मुख पर रूपक, स्वेद पर अपह्नुति, मोतीयुक्त नाक पर उत्प्रेक्षा, ठोढ़ी पर सन्देह, गले पर भ्रान्ति, उरोज पर स्मरण अलंकार की संसृष्टि है।

अलंकार संकर लक्षण

दो०—द्वै कि तीनि भूषन मिलैं, छीर नीर के न्याय।
अलंकार संकर कहैं, तेहि प्रवीन कविराय॥४९॥
एक एक को अङ्ग कहुँ, कहुँ सम होंहि प्रधान।
कहू रहत संदेह में, संकर तीनि प्रमान॥५०॥

गाड़ोई=गड़हा। लाल=माणिक।

अंगादि संकर वर्णन

मिटत नहीं निसि बासरहुँ, आननचन्द प्रकास।
बने रहैं याते उरज, पंकज कलिका दास ॥ ५१ ॥

टि०—इस दोहे में रूपक का काव्यलिंग अंग है, इससे अङ्गाङ्गि सङ्कर है।

समप्रधान संकर वर्णन

कवि०—सुजस गँवावै भगतनही सों प्रेम करै, चित अति ऊजरे भजत हरि नाम है। दीन के दुखन देखे आपनो सुख न लेखे, विप्र पापरत तन मन मोह धाम है ॥ जग पर जाहिर है धरम निबाहि रहै, देव दरसन ते लहत बिसराम है। दास जू गनाये जे असज्जन के काम समुझि देखो एई सब सज्जन के काम हैं ॥५२॥

टि०—श्लेष, विरुद्ध और निदर्शना तीनों समप्रधान हैं॥

दो०—ग्रन्थगूढ़ बनतर्पनी, गौनी गनिका बाल।
इनकी सोभा तिलक है, भूमिदेव भुविपाल ॥५३॥

टि०—श्लेष, दीपक और तुल्ययोगिता तीनों समप्रधान हैं।

संदेह संकर

कवि०—कलप कमलबर विम्बन के बैरी बन्धुजीवन के बन्धु लाल लीला के धरन हैं। संध्या के सुमन

गौनी=लक्षणाविशेष। बाल=स्त्री, बालक। कलप=विधान, रंग देनेवाला। विम्बा=लाल कुँदुरू। बंधुजीव=दुपहरिया पुष्प। लाल=माणिक

सूर सुअन मजीठ ईठ, कोहर मनोहर की आभा के हरन हैं ॥ साहिब सहाब के गुलाब गुड़हर गुर, ईंगुर प्रकास दास लाली के लरन हैं । कुसुम अनार कुरबिन्द के अँकुरकारी, निन्दकपवारी प्रानप्यारो के चरन हैं ॥५४॥

टि०—उपमा, प्रतीप, व्यतिरेक और उल्लेख चारों का सन्देहसंकर है । इसको संकीर्णोपमा भी कहते हैं ।

दो०—बन्धु चोर बादी सुहृद, कल्प कलपतरु जान ।
गुरु रिपु सुत प्रभु कारनौ, संकीरन उपमान ॥५५॥

इति श्री काव्यनिर्णये अलंकार वर्णनं नाम तृतीयोल्लासः ॥३॥

रसांग वर्णन स्थायी भाव

दो०—प्रीति हसी अरु सोक रिस, उत्साहौ भव मित्त ।
घिन विस्मय थिर भाव ये, आठ बसैं सुभ चित ॥१॥

शृङ्गार आदि नव रस वर्णन

दो०—उचितप्रीति रचना बचन, सो सिँगार रस जान ।
सुनत प्रीतिमय चित द्रवै, तब पूरन परिमान ॥२॥
हँसो भरयो चित हँसि उठै, जो रचना सुनि दास ।
कवि पंडित ताको कहैं, यह पूरन रस हास ॥३॥
सोक चित्त जाके सुनत, करुनामय ह्वै जाइ ।
ता कविताई को कहैं, करुनारस कविराइ ॥४॥

सूरसुवन=सूर्य्यमुखी । ईठ=मित्र । कोहर=देवीफूल । सहाब=मंगल तारा । कुरविन्द=मोथा ।

जो उत्साहिल चित्त में, देत बढ़ाइ उछाह ।
सो पूरन रसबीर है, रचैं सुकवि करि चाह ॥ ५ ॥
'ह्वै' रिस बाढ़े रुद्र रस, भयहि भयानक लेखि ।
घिन ते है बीभत्सरस, अद्भुत विस्मय देखि ॥ ६ ॥
जा हिय प्रीति न सो कहै, हँसी न उत्सह ठान ।
ते बातैं सुनि क्यों द्रवै, दृढ़ 'ह्वै' रहे पषान ॥ ७ ॥
तातें थाई भाव को, रस को बीज गनाव ।
कारन जानि विभाव अरु, कारज है अनुभाव ॥ ८ ॥
व्यभिचारी तैंतीस ये, जहँ तहँ होत सहाय ।
क्रम ते रंचक अधिक अति, प्रगट करैं थिर भाय ॥ ९ ॥
जानो नायक नायिका, रस शृङ्गार विभाव ।
चन्द सुमन सखि दूतिका, रागादिको बनाव ॥१०॥
औरनि के न विभाव मैं, प्रगटि कहे एहि काज ।
सब के न्यारै विभाव हैं, औरौ है बहु साज ॥११॥
सिंह विभाव भयानकहुँ, रुद्र वीरहू होइ ।
ऐसी सामिल रीति मैं, नेम कहै क्यों कोइ ॥१२॥
स्तम्भ स्वेद रोमांच स्वरभंग कंप वैवर्न ।
सबही के अनुभाव ये, सात्विक औरो अर्न ॥१३॥
भिन्न भिन्न बरनन करैं, इन सबकों कविराय ।
सबही कों करि एक पुनि, देत रसै ठहराय ॥१४॥
लखि विभाव अनुभाव हो, चर थिर भावै नेकु ।
रस सामग्री जो रमै, रसै गनै धरि टेकु ॥१५॥

स्थायी रतिभाव

कवि०—मन्द मन्द गौने सों गयन्दगति खोने लगी, बोने लगो विष सों अलक अहिछोने सी। लंक नवला की कुचभरनि दुनोने लगी, होने लगी तन की चटक चारु सोने सी॥ तिरछी चितौन सों विनोदनि वितोने लगी, लागी मृदुबातनि सुधारस निचोने सी। मौने मौने सुंदर सलोने पद दास लोने, मुख की बनक ह्वै लगन लगी टोने सी॥१६॥

विभाव वर्णन

कवि०—धीर धुनि बोलैं थँमि थँमि झर खोलैं मंडैं, करत कलोलैं बारिबाहक अकास मैं। नृत्यत कलापी झिल्ली पिक है अलापी विरही-जन विलापी हैं मिलापी रस रास मैं। सम्पा को प्रकाश बक अवली अकाश अरु, बूढ़नि विकाश दास देखिबे को पास मैं। बनिता-बिलास मन कीन्हें हैं मुनीशन्ह के, नीप नीकी बास लहि फैली निजबास मैं॥१७॥

अनुभाव वर्णन

सवै०—जी बँधिही बँधि जात है ज्यों ज्यों

वितोने=फैलाने। बनक=शोभा। बारिवाहक=मेघ। कलापी=झुंड के झुंड, समूह मुरैला। रसरास=आनन्द। सम्पा=बिजली। बूढ़नि=बीरबहूटी। नीप=कदम्ब।

सु नीबी तनीनि को बाँधति छोरति । दास कटीले ह्वै गात कँपै विहँसौं हीं लजौंहीं लसै दृग लों रति । भौहैं मरोरति नाक सिकोरति चीर निचोरति औ चित चोरति । प्यारे गुलाब के नीर में बोरे प्रिया पलटे रस भीर में बोरति ॥१८॥

अपस्मार संचारी वर्णन

दो०—को जानै कैसी परी, कहूँ विहाल प्रवीन ।
कहूँ तार तुम्बर कहूँ, कहुँ सारी कहुँ बीन ॥१९॥

शृंगार रस वर्णन

दो०—प्रीति नायिका नायकहि, सो सिँगार रस ठाउ ।
बालक मुनि महिपाल अरु, देव विषे रति भाउ ॥२०॥
एक होत सयोग अरु, पाँच वियोगहि थाप ।
सो अभिलाष प्रवास अरु, विरह असूया साप ॥२१॥

संयोग शृंगार वर्णन

सवै०—विपरीति रची नदनन्द सों प्यारी अनन्द के कन्द सों पागि रही । बिथुरे अलकैं श्रम के झलकैं तन ओप अनूपम जागि रही । अति दास अघानी अनङ्ग कला अनुरागन ही अनुरागि रही । तिरछैं तकि कै छबि सों छकि कै थिर ह्वै थकि कै हिय लागि रही ॥२२॥

पूर्वानुराग वर्णन

दो०—सुने लखे जहँ दंपतिहि, उपजै प्रीति सुभाग ।

नीबी=फुफुन्दी, नारा । तनीनि=बन्द, बन्धन । बीन=वीणा । असूया=पराये गुण में दोष लगाना । ओप=सुन्दरता, आभा ।

अभिलाषै कोऊ कहै, कोउ पूरब अनुराग ॥२३॥

कवि०—आजु वहि गोपी की न गोपी रही हाल कछु, हाल बनमाल के हिंडोरे मन झूलिगो। अँखिया मुखाम्बुज में भौंर ह्वै समानी भई, बानी गद्गद कंठ कदम सों फूलिगो। जा मग सिधारे नँदनन्द ब्रज स्वामी दास, जिनको गुलामी मकरध्वज कबूलि गो। वाही मग लागो नेह घट में गंभीर भारी, नीर भरिबे को घट घाटहि में भूलिगो ॥ २४ ॥

प्रवास वियोग

दो०—प्रीतम गये विदेस जौ, बिरह जोर सरसाइ।
वही प्रवास वियोग है, कहैं सकल कविराइ ॥२५॥

रूपघ०—चन्द चढ़ि देखैं चारु आनन प्रवीन गति, लीन हात माते गजराजनि को ठिलि ठिलि। वारिधर धारन तें बारन पै ह्वै रहै पयोधरन छ्वै रहै पहारनि को पिलि पिलि ॥ दई निरदई दास दीन्हौं है विदेस तऊ, करौं न अँदेस तुव ध्यानही में हिलि हिलि। एक दुख तेरे हौं दुखारो नत प्रानप्यारी, मेरो मन तोसों नित आवत है मिलि मिलि ॥ २६ ॥

मकरध्वज=कामदेव। घट=हृदय और घड़ा। प्रवास=प्रदेश का निवास।

विरह वर्णन

सवै०—नैनन को तरसैये कहाँ लों कहाँ लौं हियो विरहागि में तैये। एक घरी न कहूँ कल पैये कहाँ लगि प्रानन को कलपैये॥ आवै यही अब जी में विचार सखी चलि सौतिहू के गृह जैये। मान घटे तें कहा घटिहै जु पै प्रानपियारे को देखन पैये॥ २७॥

असूया हेतुक वियोग

कवि०—नींद भूख प्यास उन्हें व्यापत न घाम शीत, ताप सी चढ़त तन चन्दन लगाए ते। अति ही अचेत होत चैतहू की चाँदनी में, चन्द्रक खवाये ते गुलाबजल न्हाए ते॥ दास भो जगत प्रान प्रानऊ बधिक औ कृशानु तें अधिक भयो सुमन बिछाये ते। नेह के बढ़ाए उन एते कछु पाये तेरो, पाइबो न जान्यौ बलि भौंहनि चढ़ाये ते॥ २८॥

साप हेतुक वियोग

दो०—सब तें माद्री पाण्डु को, श्राप भयो दुखदानि।
बसिवो एकहि भौन को, मिलत प्रान की हानि॥२९॥

बाल विषे रतिभाव वर्णन

सवै०—चूंमिबे के अभिलाषन्ह पूरिकै दूरि तें माखन लीन्हे बुलावति। लाल गोपाल की चाल बँकैअन दास

कल=चैन। कलपैयें=कष्ट पहुँचाऊँ। चन्द्रक=कपूर।

जू देखतही बनि आवति ॥ ज्यों ज्यों हँसैं बिकसैं दतियाँ मृदु आनन अंबुज में छबि छावति। त्यौं त्यौं उछंग लै प्रेम उमंग सों नन्द की रानि अनन्द बढ़ावति ॥ ३० ॥

मुनि विषे रतिभाव वर्णन

सवै०—आजु बड़े सुकृती हमहीं भये पातकहानि हमारी धरा तें। पूरबहू कियो पुन्य बड़ोई भयो प्रभु को पद धारिबो तातें॥ आगम है सब भाँति भलोई बिचारिये दास जू एती कृपा तें। श्रीऋषिराज तिहारे मिले हमैं जानि परी तिहुँकाल की बातें ॥ ३१ ॥

हास्यरस वर्णन

कवि०—काहू एक दास काहू साहब की आस में, कितेक दिन बीते रीत्यो सबै भाँति बल है। विथा जो बिनै सों करै उत्तर याही सो लहै, सेवा फल ह्वैही रहै यामें नहिँ चल है ॥ एक दिन हास हित आयो प्रभु पास तन, राखे न पुरानो बास कोऊ एक थल है। करत प्रनाम सो विहँसि बोल्यो यह कहा? कह्यो कर जोरि देव सेवाही को फल है ॥ ३२ ॥

करुणरस वर्णन

कवि०—बतियाँ हुतीं न सपनेहूँ सुनिबे की सो, सुनी मैं जो हुती न कहिबे की सो कह्योई मैं। रोवैं नर नारी

पक्षी पसु देहधारी सबै, परम दुखारी ऐसे सूलनि सह्योई मैं। हाय अपलोक आक पंथहि गह्यो पै बिरहागनि दह्यो मैं सोकसिंधुनि बह्योई मैं। हाय प्रान प्यारे रघुनन्दन दुलारे तुम, बन को सिधारे प्रान तन लै रह्योई मैं ॥ ३३ ॥

वीर रस वर्णन

कवि०—देखत मदन्ध दसकन्ध अन्धधुन्ध दल, बन्धु सों बलकि बोल्यो राजा राम बरिवंड। लच्छन बिचच्छन सँभारे रहौ निज पच्छ, देखिहौं अकेले हौंहीं अरिअनी परचंड ॥ आजु अघवाऊँ इन शत्रुन के सोनि तनि, दास भनि बाढ़ी मेरे बाननि तृषा अखंड। जानि पन सक्कस तरकि उठ्यो तक्कस करकि उठ्यो कोदंड फरकि उठ्यो भुजदंड ॥ ३४ ॥

रुद्ररस वर्णन

सवै०—क्रुद्ध दशानन बीस भुजानि सों लै कपि रीछ अनी सर बट्टत। लच्छन तच्छन रत्त किये दृग लच्छ विपच्छिन के सिर कट्टत ॥ मारु पछारु पुकार दुहूँ दल रुण्ड झपट्टि दपट्टि लपट्टत। रुण्ड लरैं भट मत्थनि लुट्टन जोगिनि खप्पर ठट्टनि ठट्टत ॥ ३५ ॥

सक्कस=सरकश, उद्दंड। तक्कस=तरकस। रत्त=लाल।

भयानक रस वर्णन

कवि०--आयो सुनि कान्ह भूल्यो सकल हुस्यार पन, स्यारपन कंस को न कहत सिरात है। व्यालवलपूर वो चनूर द्वार ठाढ़े तऊ, भभरि भगात चलो भीतर ही जात है॥ दास ऐसी डर डरी मति है तहाँऊँ ताकी, भरभरी लागी मन थरथरो गात है। खरहूं के खरकन धकधकी धरकत, भौन कोन सिकुरत सरकत जात है॥३६॥

वीभत्स रस वर्णन

कवि०—वरषा के सरे मरे मृतकहु खात न घिनात करै कृमि भरे मांसनि के कौर को। जीवत बराह को उदर फारि चूसत है, भावै दुरगन्ध सो सुगन्ध जैसे बौर को॥ देखत सुनत सुधि करतहु आवै घिन, साजे सब अंगनि घिनावने ही ठौर को। मति के कठोर मानि धरम को तौर करै, करम अघोर डरै परम अघौर को॥ ३७॥

अद्भुत रस वर्णन

कवि०—शिव शिव कैसो सोहै छोटो सो छबीलो गात, कैसा चटकीलो मुख चन्द सो सोहावन।

स्यारपन=कादरता। सिरात=चुकना, अन्त होना। व्याल=कुवलया हाथी। चनूर=चाणूर दैत्य। खर=तिनका बौर=आम का पुष्प। तौर=ढंग, तरीका।

दास कौन मानिहै प्रमान यह ख्याल ही में,
सिगरो जहान द्वैकफाल बीच ल्यावनो ॥ बार
बार आवै यही मन में विचार यह, विधि है कि
हर है कि परमेश पावनो, कहिये कहा
जू कछू हकत न बनिआवै, अति ही अचम्भा
भरो आयो यह बावनो ॥३८॥

व्यभिचारी भाव लक्षण

दो०—जे न विमुख ह्वै थाय के, अभिमुख रहैं बनाय ।
ते व्यभिचारी बरनिये, कहत सकल कविराय ॥३९॥
रहत सदा थिर भाव में, प्रगट होत एहि भाँति ।
ज्यों कल्लोल समुद्र में, त्यों संचारी जाति ॥४०॥

कवि०—निरवेद ग्लानि शंका असूया औ
मदश्रम, आलस दीनता चिन्ता मोह स्मृति
धृति जानि । व्रीड़ा चपलता हर्ष आवेग औ
जड़ता विषाद उत्कंठा निद्रा औ अपस्मार
मानि ॥ स्वपन विवोध अमरख अवहित्थ गर्व
उग्रता औ मति व्याधि उन्माद मरन आनि ।
त्रास वो वितर्क व्यभिचारी भाव तैंतिस ये सिगरे
रसनि के सहायक से पहिचानि ॥४१॥

टि०—निर्वेद, ग्लानि, शंका, असूया, (पराये गुण में दोष लगाना) मद, श्रम, आलस्य, दैन्य, चिन्ता, मोह, स्मृति, धृति, व्रीड़ा, (लज्जा) चपलता, हर्ष, आवेग, जड़ता, विषाद, उत्कंठा, निद्रा, अपस्मार, स्वप्न, विवोध, आमर्ष, अवहित्थ,

गर्व, उग्रता, मति, व्याधि, उन्माद, मरण, त्रास और वितर्क यही रसों में संचरण करनेवाले तेतीसो संचारी भाव हैं।

नाटक में रस आठही, कह्यो भरत ऋषिराइ।
भनत नवम किय सान्त रस, तहँ निर्वेदै थाइ ॥४२॥

शांतरस वर्णन

दो०—मन विराग सम शुभ अशुभ, सो निर्वेद कहन्त।
ताहि बढ़े ते होत है, शान्त हिये रस सन्त ॥४३॥

सवै०—भूखे अघाने रिसाने रसाने हितू अहितून्ह सों स्वच्छ मने हैं। दूषन भूषन कंचन काँच जु मृत्तिका मानिक एक गने हैं। सूल सों फूल सों माल प्रवाल सों दास हिये सम सुक्ख सने हैं। राम के नाम सों केवल काम तेई जगजीवन मुक्त बने हैं ॥४४॥

दो०—शृङ्गारादिक भेद बहु, अरु व्यभिचारी भाउ।
प्रगट्यौ रस सारंस में, ह्याँ को करै बढ़ाउ ॥४५॥

टि०—रससारांश ग्रंथ दास का बनाया है, उसमें शृङ्गारादि के अनेक भेद और संचारीभावों का विस्तार से वर्णन है।

भाव उदै संध्यौ सबल, सान्तिहु भावाभास।
रसाभास ये मुख्य हैं, होत रसहि लौं दास ॥४६॥

भाव उदै संधि लक्षण

दो०—उचित बात तच्छन लखे, उदै भाव की होइ।
बीचहि में द्वै भाव के, भाव सन्धि है सोइ ॥४७॥

प्रवाल=मूँगा। सुक्ख=सुख, चैन।

भाव उदै उदाहरण

सवै०—देखि री देखि अली सँग जाइ धौं कौन है का घर में बनराति है। आनन मोरि कै नैनन जोरि अबै गई ओझल कै मुसकाति है॥ दास जू जा मुख जोति लखे तें सुधाधरजोति खरी सकुचाति है। आगि लिये चली जाति सु मेरे हिये बिच आगि दिये चली जाति है॥४८॥

भावसन्धि उदाहरण

दो०—कंसदलन को दौर उत, इत राधा हित जोर।
चलि रहि सकैन स्याम चित, ऐंच लगी दुहुँ ओर॥४९॥

भाव सबल वर्णन

दो०—बहुत भाव मिलि कै जहाँ, प्रगट करैं इक रंग।
सबल भाव तासों कहैं, जिनकी बुद्धि उतंग॥५०॥
हरि संगति सुखमूल सखि, ये परपंची गाउँ।
तू कहि तौ तजि संक उत, दृग बचाइ द्रुत जाउँ॥५१॥

टि०—उत्कण्ठा, शका, दीनता, धृति, आवेग, अवाहत्थ, भाव की सबलता है।

दो०—भाव सांति सोहै जहाँ, मिटत भाव अन्यास।
भाव जु अनुचित ठौर है, सोई भावाभास॥५२॥

भावशांति उदाहरण

दो०—बदन प्रभाकर लाल लखि, विकस्यो उर अरविन्द।
कहा रहै क्यों निसि बस्यो, हुत्यो जु मान मलिन्द॥५३॥

ओझल=ओट। उतंग=ऊँची, बड़ी।

भावाभास उदाहरण

दो०--दरपन में निज छाँह सँग, लखि प्रीतम की छाँह।
खरी ललाई रोस की, ल्याई अँखियन माँह ॥५४॥

टि०—व्यर्थ क्रोधभाव का भावाभास है।

रसाभास वर्णन

दो०--सुधा सुराधर तुव नजरि, तू मोहनी सुभाइ।
अछकन्ह देत छकाइ है, मार मरेन्ह को जाइ ॥५५॥

टि०—बहुत नायकों को वश करना रसाभास है।

भिन्न भिन्न यद्यपि सकल, रस भावादिक दास।
रसै व्यंगि सब को कह्यौ, ध्वनि को जहाँ प्रकास ॥५६॥

इति श्री काव्यनिर्णये रसांगवर्णनंनाम चतुर्थमोल्लासः। ४।

अपरांग वर्णन

दो०--रस भावादिक होत जहँ, युगल परस्पर अंग।
तहँ अपरांग कहैं कोऊ, कोउ भूषन इहि ढंग ॥ १ ॥
रसवत प्रेया उर्जशी, समाहितालंकार।
भावोदैवत सन्धिवत, और सबलवत सार ॥ २ ॥

रसवतालंकार लक्षण

दो०--जहँ रस को कै भाव को, अंग होत रस आइ।
तेहि रसवत भूषन कहैं, सकल सुकवि समुदाइ ॥ ३ ॥

सान्तरसवत अलंकार

सवै०–बादि छयो रस व्यंजन खाइबो बादि
नवो रस मिश्रित गैबो। बादि जराउ प्रजंक
बिछाइ प्रसून घने परि पाय लुढ़ैबो ॥ दास जू

वादि जनेस मनेश धनेश फनेश गनेश कहैबो।
या जग में सुखदायक एक मयंकमुखीन को
अंक लगैबो ॥ ४ ॥

टि०—शान्तरस श्रृङ्गाररस के अङ्ग में रहने से शान्त
रसवत् है।

दो०—चन्द्रमुखिन के कुचन पर, जिनको सदा विहार।
अहह करै ताही करन, चिरियन फैर वदार ॥५॥

टि०—करुनारस का श्रृङ्गार रस अंग है

अद्भुत रसवत वर्णन

सवै०—जाहि दवानल पान किए ते बढ़ी हिय में सरदी
सरदे सों। दास अघासुर जोर हरयो जु लरयो
वतसासुर से वरदे सों॥ बूड़त राखि लियो गिरि
लै ब्रज देश पुरंदर बेदरदे सों। ईश हमैं पर दे
परदे सों मिलैं उड़ि ता हरि सो परदेसों ॥ ६ ॥

सवै०—भूल्यो फिरै भ्रम जाल में जीव के ख्याल की
खाल में फूल्यो फिरै है। भूत सु पाँच लगे मज़बूत
ह्वै साँच अबूत कुनाच नचैहै॥ कान में आनु रे
दास कही को नहीं तो तुहीं मन में पछितैहै। काम
के तेज निकाम तपै बिन राम जपे विसराम न
पैहै ॥७॥

टि०—शान्तरस का भयानक रस अङ्ग है।

निकाम = अत्यन्त

प्रेयालंकार वर्णन

दो०—भावै जहँ ह्वै जात है, रस भावादिक अंग।
सो प्रेयालंकार है, बरनत बुद्धि उतंग॥ ८॥

सवै०—मोहन आपन राधिका को विपरीत को चित्र बिचित्र बनाइ कै। डीठि बचाइ सलोनी की आरसी में चपकाइ गयो बहराइ कै। घूमि घरीक में आइ कह्यो कहा बैठी कपोलनि चन्दन लाइ कै। दर्पन त्यों तिय चाह्यो तहीं मुसुकाइ रही दृग मोरि लजाइ कै॥ ९॥

टि०—हास्यरस का लज्जा भाव अंग है।

दो०—दुरे दुरे तकि दूरि तें, राधे आधे नैन।
कान्ह कँपित तुअ दरस तें, गिरि डगलात गिरै न॥१०॥

टि०—कम्प भाव का शंका भाव अंग है।

सवै०—पीतपटी कटि में लकुटी कर गुंज के माल हिये दरसावै। सौरभ मंजरी कानन में सिखिपक्षनि सीस किरीट बनावै। दास कहा कहौं कामरि ओढ़े अनेक बिधाननि भौंह नचावै। कारे डरारे निहारे इन्हैं सखि रोम उठै अँखियाँ भरि आवै॥ ११॥

टि०—अवहित्थ भाव का निन्दा भाव अंग है।

उर्जस्वी अलंकार वर्णन

दो०—काहू को अङ्ग होत रस, भावाभास जु मित्त।
उर्जस्वो भूषन कहैं, ताहि सुकवि धरि चित्त॥१२॥

सवै०—ऊधो तहाँई चलो लै हमैं जहँ कूबरी कान्ह बसैं इक ठोरी। देखिय दास अघाइ अघाइ तिहारे प्रसाद मनोहर जोरी॥ कूबरी सों कछु पाइये मन्त्र लगाइये कान्ह सों प्रेम की डोरी। कूबर भक्ति बढ़ाइये बृन्द चढ़ाइये बंदन चन्दन रोरी॥ १३॥

टि०—सवति क मुख देखने की उत्कंठा मन्त्र लेने की चिन्ता और कूबर का भक्तिभाव तीनों भावाभास वीभत्स रस के अंग है।

सवै०—चन्दन पंक लगाइ के अङ्ग जगावती आगि सखी बरजारैं। तापर दास सुबासन ढारि कै देति है बारि बयारि झकारैं॥ पापी पपीहा न जोहा थकै तुअ पीपी पुकार करै उठि भोरैं। देत कहा है दहे पर दाहि गई करि जाहि दई के निहोरैं॥ १४॥

टि०—पपीहा से दीनता भावाभास है, वह विषाद भाव प्रलाप दशा का अंग है।

कवि०—दारिद बिदारिबे की प्रभु को तलास तौ, हमारे इहाँ अनगन दारिद की खानि है। अघ की सिकारी जो है नजर तिहारी तौ हौं, तन मन पूरन अघन राख्यो ठानि है॥ दास निज संपति सुसाहिब के काज आये, हात हरषित पूरो भाग उनमानि है।

पंक = कीचड़। सुबासन = अच्छी खुशबू, सुन्दर पात्र। गई = दरगुज़र।

आपनी विपति को हजूर हौं करत लखि, रावरे की वपतिबिदारन की बानि है ।। १५ ।।

टि०—दानवीर का रसाभास दीनता भाव का अंग है ।

समाहितालंकार

दो०—काहू को अङ्ग होत है, जहँ भावन की साँति ।
समाहितालंकार तहँ, कहैं सुकव बहु भाँति ॥१६॥

दो०—राम धनुष टंकार सुनि, फैल्यौ सब जग सोर ।
गर्भ श्रवहिँ रिपु रानियाँ, गव श्रवहिँ रिपु जोर ॥१७॥

टि०—भयानक रस का गवभावशान्ति अंग है ।

सवै०—जो दुख सों प्रभु राजा रहैं तो कहो सुख सिद्धिनि दूरि बहाऊँ । पै यह निन्द्य सुनो निज श्रौन सों कौन सों कौन सों मौन गहाऊँ । मैं यह सोच बिसूरि बिसूरि करौं बिनती प्रभु साँझ पहाऊँ ॥ तीनहुँ लोक के नाथ समत्थ हौ मैहीं अकेली अनाथ कहाऊँ ॥ १८ ॥

टि०—निन्दा सुनने का कोपशान्ति चिन्ताभाव का अंग है ।

भाव सन्धिवत वर्णन

दो०—भाव सधि अङ्ग होइ जो, काहू को अनयास ।
भाव सन्धिवत तेहि कहैं, पंडित बुद्धिबिलास ॥१९॥

पहाऊँ=प्रातःकाल

दो०—पिय अपराध अगाध तिय, साधु सुनेकु गनैन ।
जानि लजौहैं होहिंगे, सोहैं करति न नैन ॥२०॥

टि०—उत्तमा नायिका का क्रोध अवहित्थ, उत्कंठा और लज्जा की सन्धि अपराङ्ग है ।

भावोदयवत वर्णन

दो०—रस भावादिक को जु कहुँ, भाव उदय अङ्ग होय ।
भावोदयवत तेहि कहैं, दास सुमति सब कोय ॥२१॥
चलत तिहारे प्रानपति, चलिहैं मेरे प्रान ।
जगजीवन तुम बिन हमें, धिक जीवन जग जान ॥२२॥

टि०—प्रवस्यत्प्रेयसी नायिका ग्लानिभाव अंग है ।

भाव सबलवत वर्णन

दो०—भाव सबलता दास जो, काहू को अङ्ग होय ।
भाव सबलवत तेहि कहैं, कवि पंडित सब कोय ॥२३॥

कवि०—मेरो पग झाँवत हौं भावतो सलोनो एहो, हँसि कही बालम बिताई कित रतिया । इतनो सुनत रूसि जात भयो पीछे पछताइहौं मिलन चली गोये भेष भतिया ॥ दास बिनु भेंट हौं दुखित फिरि आई सेज, सजनी बनाई बूझि आइबे की घतिया । बार लागे लागी मग जोहै हौं किवार लागी, हाय अब तिनको सँदेसऊ न पतिया ॥२४॥

टि०—आठों नायिकाओं का सबल भाव प्रोषितपतिका का अंग है ।

कवि०—सुमिरि सकुचि न थिराति शंक त्रसित तरकि उग्र
बानि सगलानि हरषाति है। उनिदति अलसाति
सोअति सधीर चौंकि, चाहि चिन्त श्रमित सगर्व
इरखाति है ॥ दास पिय नेह छन छन भाव बदलति,
स्यामा सविराग दीन मति कै मखाति है। जल्पति
जकति कहँरति कठिनाति मति, मोहति मरति
विललाति बिलखाति है ॥ २५ ॥

टि०—प्रवास विरह का तेंतीसां संचारी भाव अंग है।
इतिश्री काव्यनिर्णये रस भाव अपरांग वर्णन नाम पंचमोल्लासः ॥५॥

ध्वनि भेद वर्णन

दो०—वाच्य अर्थ तें व्यङ्ग में, चमत्कार अधिकार।
ध्वनि ताही को कहत हैं, उत्तम काव्य विचार ॥ १ ॥

कवि०—भौंर तजि कंचन, कहत मखतूल औ कपोलनि को
कंबु तें मधूकै भाँति भाँति है। विद्रुम विहाय सुधा
अधरनि भाषै और, बरनै कमल कुच श्रीफल की
ख्याति है ॥ कंचन निदरि गनै गात पात चम्पक
को, कान्ह-मति फिरि गई कालिंदी की राति है।
दास यों सहेली सों सहेली बतराति सुनि, सुनि उत
लाजनि नवेली गड़ी जाति है ॥ २ ॥

ध्वनि के दो भेद

दो०—ध्वनि के भेद दुभाँति को, भनै भारती धाम।
अविवक्षित्रो विवक्षितो, वाच्य दुहुँ न को नाम ॥ ३ ॥

अविवक्षितवाच्य लक्षण

दो०—बकता की इच्छा नहीं, बचनहिँ को जु सुभाउ।
व्यंग कढ़ै तिहि वाच्य को, अविवक्षित ठहराउ ॥ ४ ॥
अर्थान्तरसंक्रमित इक, है अविवक्षित वाच्य।
पुनि अत्यन्ततिरस्कृती, दूजो भेद पराच्य ॥ ५ ॥

अर्थान्तरसंक्रमतवाच्य लक्षण

दो०—अर्थ ऐसही बनत जहँ, नहीं व्यंग की चाह।
व्यङ्ग निकारि तऊ करै, चमत्कार कविनाह ॥ ६ ॥
अर्थान्तरसंक्रमित सो, वाच्य जु व्यङ्ग अतूल।
गूढ़ व्यङ्ग यामें सही, होत लक्षनामूल ॥ ७ ॥
सुमधु प्याउ प्रीतम कहे, प्रिया पियहि सुखमूरि।
दास होय ताही समय, सब इंद्रिय दुख दूरि ॥ ८ ॥

टि०—मधुके छूनेसे त्वचा कों, पान करने से जीभको, नाम सुनने से कानांको, देखने से नेत्रों को और सुगन्ध से नासिका को आनन्द होता है। इस प्रकार पाँचों इन्द्रियों का दुःख दूर होना लक्षणा मूलक व्यंग है।

अत्यन्त तिरस्कृतवाच्य लक्षण

दो०—है अत्यन्त तिरस्कृती, निपट तजे ध्वनि होय।
समय लक्ष तें पाइये, मुख्य अर्थ को गोय ॥ ९ ॥

सखि तू नेकु न सकुच मन, किये सबै मम काम ।
अब आनै चित सुचितई, सुख पैहै परिनाम ॥१०॥

टि०—अन्यसंभागदुःखिता का उलटी बात कहना गूढ़ व्यंग है ।

विवक्षितवाच्य ध्वनि

दो०—वहै विवक्षित वाच्य ध्वनि, चाहिकरै कविजाहि ।
असंलक्ष्यक्रम लक्ष्यक्रम, होत भेद द्वै ताहि ॥११॥
असंलक्ष्यक्रम व्यंग जहँ, रस पूरनता चारु ।
लखि न परै क्रम जेहि द्रवै, सज्जन चित्त उदारु ॥१२॥
रस भावन के भेद को, गनना गनी न जाइ ।
एक नाम सब को कह्यो, रसै व्यङ्ग ठहराइ ॥१३॥

रसव्यंग उदाहरण

सवै०—मिस सोइबो लाल को मानि सही हरुए उठि मौन महा धरिकै । पट टारि रसीली निहारि रही मुख को रुचि को रुचिको करिकै । पुलकावलि पेखि कपोलनि में खिसिआइ लजाइ मुरी अरिकै । लखि प्यारे बिनोद सों गोद गह्यो उमह्यो सुख मोद हियो भरिकै ॥ १४ ॥

लक्ष्यक्रम व्यंग लक्षण

दो०—होत लक्ष्यक्रम व्यङ्ग में, तीनि भाँति की व्यक्ति ।
शब्द अर्थ की शक्ति है, अरु शब्दारथ शक्ति ॥१५॥

शब्दशक्ति लक्षण

दो०—अनेकार्थमय शब्द सों, शब्द शक्ति पहिचानि ।
अभिधा मूलक व्यङ्ग जेहि, पहिले कह्यो बखानि ॥१६॥
कहूँ वस्तु ते वस्तु को, व्यङ्ग होत कविराज ।
कहूँ अलंकृत व्यङ्ग है, शब्दशक्ति द्वै साज ॥१७॥

वस्तु से वस्तु व्यंग

दो०—सूधो कहनावति जहाँ, अलंकार ठहरै न ।
ताहि वस्तु संज्ञा कहैं, व्यङ्ग होय कै बैन ॥१८॥

शब्दशक्ति द्वारा वस्तु से वस्तु व्यंग

दो०—लाल चुरी तेरे लली, लागत निपट मलीन ।
हरियारी करि देउँगी, हौं तो हुकुम अधीन ॥१९॥

टि०—एक अर्थ साधारण हरा रंग करना, दूसरा हरि की मित्रता कराना है यह शब्दशक्ति द्वारा वस्तु से वस्तु व्यंग है ।

वस्तु से अलंकार व्यंग

दो०—फैलि चली अगनित घटा, सुनत सिंह घहरानि ।
परे भोर चहुँओर तें, होत तरुन की हानि ॥२०॥

सिंह के गर्जन से गजवृन्द का भागना और वृक्षों की हानि होना उचित ही है । समालंकार की व्यंग है ।

कवि०—जानि कै सहेट गई कुञ्जनि मिलै के लिये, जान्यौ न सहेट के बदैया ब्रजराज को । सूने लखि सदन सिँगार ज्यौं अँगारो भयो, सुखदेनवारो भयो दुखद समाज को ॥ दास सुखकन्द मन्द सीतल पवन भयो, तन तें ज्वलन उत कवन इलाज को ।

बाल के बिलापन बियोगानल तापन को, लाज
भई मुकुत मुकुत भइ लाज को ॥२१॥

टि०—शब्दशक्ति से अन्योन्य, उपमालंकार द्वारा अन्योन्य काव्यलिंग और क्रमालंकार की व्यंग है।

अर्थशक्ति लक्षण

दो०—अनेकार्थमय शब्द तजि, और शब्द जे दास।
अर्थशक्ति सब को कहैं, ध्वनि में बुद्धिबिलास ॥२२॥
बाचक लच्छक वस्तु को, जग कहनावति जानि।
स्वतः सम्भवी कहत हैं, कवि पंडित सुखदानि ॥२३॥
जग कहनावति तें जु कछु, कवि कहनावति भिन्न।
तेहि प्रौढ़ोक्ति कहैं सदा, जिन्ह की बुद्धि अखिन्न ॥२४
उज्जलताई कीर्ति को, सेत कहै संसार।
तम छायो जग में कहै, खुले तरुनि के बार ॥२५॥
कहै हास्यरस सान्तरस, सेत वस्तु से सेत।
स्याम सिँगारो पीतभय, अरुन रौद्र गनि लेत ॥२६॥
बरनत अरुन अबीर सों, रवि सों तप्त प्रताप।
सकल तेजमय तें अधिक, कहैं विरह सन्ताप ॥२७॥
साँची बातन युक्तिबल, झूठी कहत बनाइ।
झूठो बातनि को प्रगट, साँच देत ठहराइ ॥२८॥
कहै कहावै जड़नि सों, बातैं बिबिध प्रकार।
उपमा में उपमेय को, देहिँ सकल अधिकार ॥२९॥
यौंही औरो जानिये, कबि प्रौढ़ोक्ति बिचार।
सिगरी रीति गनावते, बाढ़ै ग्रन्थ अपार ॥३०॥

प्रौढ़ोक्ति के चार भेद

सो०—वस्तु व्यंग्य कहुँ चारु, स्वतः सम्भवी वस्तु ते।
वस्तुहि तें लङ्कार, अलङ्कार तें वस्तु कहुं ॥३१॥
कहूँ अलंकृत बात, अलङ्कार व्यंजित करै।
यौंही पुनि गनि जात, चारि भेद प्रौढ़ोक्ति के ॥३२॥

स्वतःसम्भवी से वस्तु ध्वनि

दो०—सुनि सुनि प्रीतम आलसी, धूर्त्त सूम धनवंत।
नवल बाल हिय में हरष, बाढ़त जात अनंत ॥३३॥

टि०—प्रीतम आलसी है तो कहीं जायगा नहीं, धूर्त्त है तो कामी होगा और धनवान होकर सूम है तो दरिद्र का डर नहीं है। सब चित चाही बात वस्तु से वस्तु व्यङ्ग है।

स्वतःसंभवी वस्तु से अलकार व्यङ्ग

दो०—सखि तेरो प्यारो भलो, दिन न्यारो है जात।
मोते नहिँ बलबीर को, पल बिलगात सोहात ॥३४॥

टि०—आपको वह स्वाधीन पतिका सूचित करती है, यह व्यतिरेकालंकार की व्यङ्ग है।

स्वतःसम्भवी अलंकारसे वस्तु व्यङ्ग

कवि०—गिलि गए स्वेदन जहाँई तहाँ छिलि गये, मिलि गये चंदन भरे हैं एहि भाय सों। गाढ़े है, रहे हैं सहे सनमुख काम लीक, लोहित लिलार लागी छीट अरि घाय सों॥ श्रीमुख प्रकाश तन दास रीति साधुन की, अजहूँ लौं लोचन तमीले रिसताय सों। सोहै सरवांग सुख पुलक

सोहाये हरि, आये जीति समर समर महाराय सों ॥३५॥

टि०—रूपक गम्योत्प्रेक्षालंकार द्वारा नायक का अपराध प्रगट करना अलंकार से वस्तु व्यङ्ग है।

अलङ्कार से अलङ्कार व्यङ्ग।

दो०—पातक तजि सब जगत को, मो में रह्यो बजाइ।
राम तिहारे नाम को, इहाँ न कछू बसाइ ॥३६॥

टि०—जगत को छोड़ मुझ में पाप आ टिका है, परिसंख्यालङ्कार है. आप के नाम का यहाँ वश नहीं चल सकता, विशेषोक्ति अलंकार है। मैं सब से बढ़ कर पापी हूँ, यह स्वतः सम्भवी अलङ्कार व्यङ्ग है।

प्रढ़ोक्ति वस्तु से वस्तु व्यङ्ग।

सबै०—दास के ईस जबै जस रावरो गावती देवबधू मृदुतानन। जाती कलंक मयंक को मूँदि औ घाम तें काहू सतावतो भान न॥ सीरो लगै सुनि चौंकि चितै दिगदन्तित कैं तिरछो दृग आनन। सेत सरोज लगै कै सुभाय घुमाय कै सूँड़ मलै दुहुँ कानन ॥३७॥

टि०—आपकी कीर्त्ति स्वर्ग और दिगन्त तक पहुँची, वह शीतल और उज्वल है। यह प्रौढ़ोक्ति 'वस्तु से वस्तु व्यङ्ग' है।

दो०—करत प्रदच्छिन बाड़वहि, आवत दच्छिन पौन।
बिरहिन बपु बारत बरहि, बरजनवारो कौन ॥३८॥

मयङ्क=चन्द्रमा। भान=सूर्य्य। दिगदन्ति=दिग्गज।

टि०—आप के विरह से मर रही है, यह व्यङ्ग है।

प्रौढ़ोक्ति वस्तु से अलङ्कार व्यङ्ग।

दो०—निज गुमान दै मान को, धीरज किय हिय थापु।
सुतो स्याम छवि देखतहि, पहिले भाग्यो आपु ॥३९॥

टि०—बिना मनाये मान छूट गया यह वस्तु से विभावना-लङ्कार की व्यङ्ग है।

द्वार द्वार देखत खड़ी, गैल छैल नँदनंद।
सकुचि वंचि दृग पंच की, कसति कंचुकी बन्द ॥४०॥

टि०—हर्ष प्रफुल्लता से बन्द ढीले पड़ गये, उसको लज्जा से डर कर छिपाना व्याजोक्ति अलङ्कार की व्यङ्ग है।

प्रौढ़ोक्ति अलङ्कार के वस्तु व्यङ्ग।

दो०—कहा ललाई लै रही, अँखिया बेमरजाद।
लाल भाल नखचंद दुति, दीन्हों यह परसाद ॥४१॥

टि०—रूपकालङ्कार द्वारा तुम पराई स्त्री के पास रहे हो, यह वस्तु व्यङ्ग है।

प्रौढ़ोक्ति अलङ्कार से अलङ्कार व्यङ्ग।

दो०—मेरो हियो पषान है, तिय दृग तीछन बान।
फिरि फिरि लागत ही रहैं, उठै वियोग कृसान ॥४२॥

टि०—रूपकालङ्कार से सम अलङ्कार व्यङ्ग है।

सवै०—करै दासै दया वह बानी सदा कविआनन-कौल जु बैठी लसै। महिमा जग छाई नवो रस की तन पोषक नाम धरै छ रसै। जग जाके प्रसाद लता पर शैल ससी पर पंकज पत्र बसै।

कौल=कमल।

करि भाँति अनेकन यों रचना जो बिरंचिहु की रचना को हँसै ॥ ४३ ॥

टि०—रूपक और रूपकातिशयोक्ति द्वारा व्यतिरेक अलंकार की व्यंग है।

सवै०—ऊँचे अवास बिलास करै अँसुवान को सागर कै चहुँ फेरे। ताहू पै दूरि लों अंग की ज्वाल कराल रहै निसि बासर घेरे॥ दास लहै वह क्यों अवकास उसास रहै नभ ओर अभेरे। है कुशलात इंती एहि बीच जु मीचु न आवन पावत नेरे ॥४४॥

टि०—काव्यलिंग द्वारा विशेषोक्ति अलंकार की व्यंग है।

शब्दार्थशक्ति लक्षण।

दो०—शब्द अर्थ दुहुँ शक्ति मिलि, व्यंग कढ़ै अभिराम।
कवि कोविद तेहि कहत हैं, उभै शक्ति एहि नाम ॥४५॥

सवै०—सींवा सुधरम जानौ परम किसानो माधो, पाप पुंज भाजे भ्रम स्यामारुन सेत में, देसी परदेसी बवै हेम हय हीरादिक, केश मेद चीरादिक श्रद्धा सम हेत में॥ परसि हलोरि कै हलोरे भले लेत दास, रासि चारि फलन की अमर निकेत में। फेरि जोति देखिबे को हरबर दान देत, अद्भुत गति है त्रिबेनी जू के खेत में॥ ४६ ॥

अवास=घर। अभेरा=रगड़ा, टक्कर। हेम=सुवर्ण। हलोर=लहर।

टि०—शब्दार्थ शक्ति से रूपक समासोक्ति के सङ्कर द्वारा अतिशयोक्ति अलंकार की व्यंग है।

एक पद प्रकाशित व्यंग

दो०—पदसमूह रचनानि को, वाक्य विचारो चित्त।
तासु व्यंग बरनौं सुनो, पद व्यंजक अब मित्त ॥४७॥
छंद भरे में एक पद, ध्वनि प्रकाश करि देइ।
प्रगट करौं क्रम ते बहुरि, उदाहरन सब तेइ ॥४८॥

अर्थान्तर संक्रमितवाच्यपद प्रकाशित ध्वनि।

दो०—सुन्दर गुन मंदिर रसिक, पास खरे ब्रजराज।
आली कवन सयान है, मान ठानिबो आज ॥४९॥

टि० —'आज' शब्द से घात का समय प्रकाशित होने की ध्वनि है।

अत्यन्त तिरस्कृतवाच्य पद प्रकाशित ध्वनि।

दो०—भाल भृकुटि लोचन अधर, हियो हिये की माल।
छला छिगुनियाँ छोर को, लखि सिरात दृग लाल ॥ ५ ॥

टि० - सिराना से जरना व्यञ्जित करके नायक का अपराध प्रगट करना ध्वनि है।

लक्ष्यक्रम रस व्यङ्ग।

कवि०—जाति हौ जौं गोकुल गोपाल हू पै जैयो नेकु,
आपनी जो चेरी मोहि जानती तू सही है। पाय
परि आपुही सों बूझियो कुशल छेम, मो पै निज
ओर ते न जात कछु कही है ॥ दासजू बसन्तहू
के आगमन आयो तौ न, तिनसों सँदेशन्ह की

छिगुनियाँ = कनगुरिया। सिरात = ठंठा होता है।

बात कहा रही है। एतो सखी कीबो यह अम्ब बौर दीबी अरु कहिबी वा अमरैया राम राम कही है ॥५१॥

टि०—शब्दशक्ति से पूर्व संयोग (शृङ्गाररस) प्रकाशित करने को ध्वनि है।

शब्दशक्ति वस्तु से वस्तु व्यङ्ग।

दो०—जेहि सुमनहि तू राधिकहि, लाई करि अनुराग।
सोई तोरत साँवरो, आपहि आयो बाग ॥५२॥

टि०—"(तोरत) तेरो सनेही श्याम" शब्द शक्ति द्वारा आवश्यकता प्रगट करना वस्तु से वस्तु व्यंग है।

शब्दशक्तिद्वारा वस्तु से अलंकार व्यंग।

जल अखण्ड घन झँपि महि, बरषत बरषा काल।
चलो मिलन मनमोहनै, मैनमई ह्वै बाल ॥५३॥

टि०—'मैन मयी' शब्द शक्ति द्वारा वर्षा वस्तु से मोम का रूपक अलंकार व्यंग है। यद्यपि मयन कामदेव का नाम है किन्तु दासजी ने अपनी टिप्पणी में मोम का रूपक कहा है।

दो०—मन्द अमन्द गनौ न कछु, नन्दनदन ब्रजनाह।
छैल छबीले गैल में, गहौ न मेरी बाह ॥५४॥

टि०—'गैल' शब्द से एकान्त में मिलने की सूचना व्यंग है।

स्वतः संभवी वस्तु से अलंकार व्यङ्ग।

दो०—मनसा बाचा कर्मना, करि कान्हर सों प्रीति।
पारबती सीता सती, रीति लई तुव जीति ॥५५॥

टि०—'कान्हर' शब्द से व्यतिरेक अलंकार की व्यंग है।

स्वतः संभवी अलंकार से वस्तु व्यङ्ग।

दो०—हम तुम तन द्वै प्रान इक, आज फुरयो बलवीर।
लग्यो हिये नख रावरे, मेरे हिय में पीर ॥५६॥

असंगति अलंकार द्वारा 'आज' शब्द से परस्त्री बिहारी हुए हो यह वस्तु व्यंग है।

स्वतः संभवी अलंकार से अलंकार व्यङ्ग।

दो०—लाल तिहारे दृगन को, हाल न बरनो जाइ।
सावधान रहिये तऊ, चित वित लेत चुराइ ॥५७॥

टि०—रूपक विभावना द्वारा 'चुराई' शब्द से अधिक कहना व्यतिरेक अलंकार की व्यंग है।

प्रोढ़ोक्ति द्वारा वस्तु से वस्तु व्यङ्ग।

दो०—राम तिहारो सुजस जग, कीन्हों सेत इकंक।
सुरसरिमग अरि अजस सो, कीहों भेट कलंक ॥५८॥

टि०—'सुरसरिमग' से यह व्यञ्जित हुआ कि आपके यश को कलंक नहीं धो सका, वस्तु व्यंग है।

प्रोढ़ोक्ति से वस्तु अलंकार व्यङ्ग।

दो०—बचन कहत मुख बाल के, बन्यो रहत नहिँ गेहु।
जरत बाँचि आई ललन, बाँचि पातिही लेहु ॥५९॥

टि०—'जरत' शब्द कह कर जलने से मुकुर जाना आक्षेपालंकार की व्यंग है।

प्रौढ़ोक्ति अलंकार से वस्तु व्यङ्ग।

दो०—हरिहरिहरि व्याकुल फिरै, तजि सखियन को संग।
लखि यह तरल कुरंग दृग, लटकनि मुकुत सुरंग ॥६०॥

टि०—सुरंग पद से तद्गुन अलंकार है और आसक्त होना वस्तु व्यंग है।

प्रौढ़ोक्ति अलंकार से अलंकार व्यंग।

दो०—बाल बिलोचन बाल तें, रह्यो चन्दमुख संग।
विष बगारिबे को सिख्यौ, कहो कहाँ ते ढंग? ॥६१॥

टि०—शशिमुख रूपक से विष फैलना विषमालंकार की व्यंग है।

प्रबन्ध ध्वनि लक्षण।

दो०—एकहि शब्द प्रकाश में, उभय शक्ति न लखाइ।
अस सुनि होत प्रबन्ध ध्वनि, कथा प्रसंगहि पाइ ॥६२॥
बाहिर कढ़ि कर जोरि कै, रबि को करो प्रनाम।
मनइच्छित फल पाइकै, तब जइयो निज धाम ॥६३॥

टि०—जब स्नान के समय गोपियों का चीरहरण किया था उस समय के श्रीकृष्णचन्द्र के वचन हैं। यह प्रबन्ध ध्वनि है।

स्वयंलक्षित व्यंग।

दो०—वाही कहे बनै जु बिधि, वा सम दूजो नाहिँ।
ताहि स्वयं लच्छित कहै, व्यंग समुझि मनमाहिँ ॥६४॥
शब्द वाक्य पद पदहु को, एकदेस पद बर्न।
होत स्वयं लच्छित तहाँ, समुझै सज्जन कर्न ॥६५॥

स्वयंलक्षित शब्द व्यंग।

कवि०—पात फूल दातन को अर्थ धर्म काम मोक्ष, दीबे
कहँ चारि फल मोल ठहरावती। देखो दास देव-
दुरलभ गति दै कै महापापिन के पापन की लूटि

ऐसी पावती ॥ ल्यावत कहूँ ते तनु जातरूप कोऊ ताहि, जातरूप शैलहि की साहिबो सजावती। संगति में बानो के कितेक जुग बीते देवि, गङ्गा पै न सौदा का सरह तोहि आवती ॥६६॥

टि०—'बानो' शब्द में चमत्कार है किन्तु यहाँ सरस्वती का नाम नहीं लहता वणिक ही लक्षित होने की व्यङ्ग है।

स्वयंलक्षित वाक्य व्यंग।

कवि०—सुनि सुनि मोरन को सोर चहुँ ओरन ते, धुनि धुनि सीस पछिनाती पाइ दुख को। लुनि लुनि भाल खेत बई बिधि बालिन्ह को, पुनि पुनि पानि मोड़ि मारति बपुख को ॥ चुनि चुनि साजती सुमन सेज आली तऊ, भुनि भुनि जाती अवलं के वाहि रुख को। गुनि गुनि बालम को आइबो अजहु दूरि, हुनि हुनि देति बिरहानल में सुख को ॥६७॥

टि०—यहाँ पुनरुक्ति ही में चमत्कार है दूसरा कुछ नहीं।

स्वयंलक्षित पद वर्णन।

सवै०—वार अँध्यारनि में भटक्यो स्व निकार्यो मैं नीठि सु बुद्धिनि सों घिरि। बूड़त आनन पानिप नीर

तनु=थोड़ा, स्वल्प। जातरूप=धतूरा, और सुवर्ण। नीठि=ज्यों त्यों करके।

पटीर की आड़ सों तीर लग्यो तिरि । मो मन
बावरो त्योंहा हुत्यो अधरामधु पानकै मूढ़ छक्यो
फिरि । दास भनै अब कैसे कढ़ै निज चाह सों
ठोड़ी की गाड़ परयो गिरि ॥६८॥

टि०—पटीर की आड़ अच्छी जिससे डूबने से बचाव हुआ, केसर, रोरी आदि नहीं ।

स्वयंलक्षित पद विभाग वर्णन ।

दो०—हौं गँवारि-गाँवहि बसी, कैसो नगर कहन्त ।
पै जान्यो आधीन करि, नागरीन को कन्त ॥६९॥

टि०—यहाँ नागरीन बहुवचन ही श्रेष्ठ है एक वचन नहीं ।

स्वयंलक्षित रस वर्णन ।

क्रुद्ध प्रचण्डी चण्डिका, तकत नैन तरेरि ।
मूर्छि मूर्छि भूपर परै, खरग रहै जी घेरि ॥७०॥

टि०—यहाँ रुद्र रस में उद्धृत वर्ण का रहना ही श्रेष्ठ है ।

तैंतालीस प्रकार ध्वनि वर्णन ।

दो०—द्वै अविवक्षित वाच्य अरु, रसै व्यङ्ग इक लेखि ।
शब्द शक्ति द्वै आठ पुनि, अर्थ शक्ति अवरेखि ॥७१॥
उभै शक्ति इक जोरि गुनि, तेरह शब्द प्रकास ।
इक प्रबन्ध धुनि पाँच पुनि, स्वयं लच्छि गुन दास ॥७२
ए सब तैंतिस जोरि दस, व्यक्ति आदि पुनि ल्याइ ।
तैंतालीस प्रकार ध्वनि, दीन्हों मुख्य गनाइ ॥७३॥

पानिप=शोभा, कान्ति । पटीर=सूखे काठ की पटिया ।

सब बातन सब भूषनन, सब संकरन मिलाइ ।
गुनि गुनि गनना कीजिये, तौ अनन्त बढ़ि जाइ ॥७४

इति श्रीकाव्यनिर्णये ध्वनि भेद वर्णनं नाम षष्टमोल्लासः ॥६॥

गुणीभूत व्यंग लक्षण

दो०—व्यंगारथ में कछू, चमत्कार नहिँ होइ ।
गुनीभूत सो व्यङ्ग है, मध्यम काव्यो सोइ ॥ १ ॥

गुणीभूत के आठ भेद ।

सो०—गनि अगूढ़ अपरांग, तुल्य प्रधानो अस्फुटहि ।
काकु बाच्य सिद्धांग, संदिग्धोरु असुंदरो ॥ २ ॥
आठौं भेद प्रकास, गुनीभूत व्यङ्गहि गनो ।
लगै सुहाई जास, बाच्यारथ को निपुनता ॥ ३ ॥

टि—अगूढ़, अपराङ्ग, तुल्यप्रधान, अस्फुट, काकु, वाच्य-सिद्धाङ्ग, सन्दिग्ध और असुन्दर यही आठ भेद गुणीभूत व्यंग के हैं ।

अगूढ़ व्यंग वर्णन ।

दो०—अर्थान्तर संक्रमित अरु, अत्यन्त तिरस्कृत होइ ।
दास अगूढ़ै व्यङ्ग में, भेद प्रगट ये दोइ ॥ ४ ॥

अर्थान्तरसंक्रमित अगूढ़ व्यंग ।

दो०—गुनवन्तन में जासु सुत, पहिलो गनो न जाइ ।
पुत्रवती वह मातु तब, बन्ध्या को ठहराइ ॥ ५ ॥

टि०—जिसका पुत्र निर्गुणी है वह बन्ध्या है । यह व्यंग प्रगट ही है ।

अत्यन्त तिरस्कृत वाच्य ।

दो०—बंधु धंधु अवलोकि तुव, जानि परै सब ढंग।
बीसबिसे यह बसुमती, जैहै तेरे संग ॥ ६ ॥

टि०—हे बन्धु ! भलाई करो, धरती किसी के साथ नहीं गयी। यह व्यंग है।

अपरांग वर्णन ।

दो०—रसवतादि बरनन किये, रस व्यंजक जे आदि ।
ते सब मध्यम काव्य हैं, गुनीभूत कहि बादि ॥ ७ ॥
उपमादिक दृढ़ करन को, शब्दशक्ति जो होइ ।
ताहू को अपराङ्ग गुनि, मध्यम भाषत लोइ ॥ ८ ॥

उदाहरण ।

दो०—संग लै सीतहि लछिमनहि, देत कुबलयहि चाउ ।
राजत चन्द सुभाव सों, श्रीरघुबीर प्रभाउ ॥ ९ ॥

टि०—यहाँ शब्दशक्ति उपमालंकार को दृढ़ करती है।

तुल्यप्रधान व्यंग लक्षण ।

दो०—चमत्कार में व्यंग अरु, वाच्य बराबर होइ ।
तुल्यप्रधान सुव्यंग है, कहैं सकल कवि लोइ ॥१०॥

उदाहरण ।

दो०—मानो सिर धरि लंकपति, श्री भृगुपति की बात ।
तुम करिहौ तो करहिंगे, वेऊ द्विज उतपात ॥११॥

टि०—मन्दोदरी वाक्य । तुम द्विज और परशुराम द्विज हैं। वे तुम्हें मारेंगे यह व्यंग और वाच्यार्थ बराबर है।

लोइ=लोग । कुबलय=मुकुद, कूंईबेरा ।

सब बातन सब भूषनन, सब संकरन मिलाइ ।
गुनि गुनि गनना कीजिये, तौ अनन्त बढ़ि जाइ ॥७४

इति श्रीकाव्यनिर्णये ध्वनि भेद वर्णनं नाम षष्टमोल्लासः ॥६॥

गुणीभूत व्यंग लक्षण

दो०—व्यंगारथ में कछू, चमत्कार नहिँ होइ ।
गुनीभूत सो व्यङ्ग है, मध्यम काव्यो सोइ ॥ १ ॥

गुणीभूत के आठ भेद ।

सो०—गनि अगूढ़ अपरांग, तुल्य प्रधानो अस्फुटहि ।
काकु बाच्य सिद्धांग, संदिग्धोरु असुंदरो ॥ २ ॥
आठौं भेद प्रकास, गुनीभूत व्यङ्गहि गनो ।
लगै सुहाई जास, बाच्यारथ को निपुनता ॥ ३ ॥

टि—अगूढ़, अपराङ्ग, तुल्यप्रधान, अस्फुट, काकु, वाच्य-सिद्धाङ्ग, सन्दिग्ध और असुन्दर यही आठ भेद गुणीभूत व्यंग के हैं ।

अगूढ़ व्यंग वर्णन ।

दो०—अर्थान्तर संक्रमित अरु, अत्यन्त तिरस्कृत होइ ।
दास अगूढ़े व्यङ्ग मैं, भेद प्रगट ये दोइ ॥ ४ ॥

अर्थान्तरसक्रमित अगूढ़ व्यंग ।

दो०—गुनवन्तन में जासु सुत, पहिलो गनो न जाइ ।
पुत्रवती वह मातु तब, बन्ध्या को ठहराइ ॥ ५ ॥

टि०—जिसका पुत्र निर्गुणी है वह बन्ध्या है । यह व्यंग प्रगट ही है ।

अत्यन्त तिरस्कृत वाच्य ।

दो०—बंधु बंधु अवलोकि तुव, जानि परै सब ढंग ।
बीसबिसे यह बसुमतो, जैहै तेरे संग ॥ ६ ॥

टि०—हे बन्धु ! भलाई करो, धरती किसी के साथ नहीं गयी । यह व्यंग है ।

अपरांग वर्णन ।

दो०—रसवतादि बरनन किये, रस व्यंजक जे आदि ।
ते सब मध्यम काव्य हैं, गुनीभूत कहि बादि ॥ ७ ॥
उपमादिक दृढ़ करन को, शब्दशक्ति जो होइ ।
ताहू को अपराङ्ग गुनि, मध्यम भाषत लोइ ॥ ८ ॥

उदाहरण ।

दो०—संग लै सीतहि लछिमनहि, देत कुबलयहि चाउ ।
राजत चन्द सुभाव सों, श्रीरघुबीर प्रभाउ ॥ ९ ॥

टि०—यहाँ शब्दशक्ति उपमालंकार को दृढ़ करती है ।

तुल्यप्रधान व्यंग लक्षण ।

दो०—चमत्कार में व्यंग अरु, वाच्य बराबर होइ ।
तुल्यप्रधान सुव्यंग है, कहैं सकल कवि लोइ ॥१०॥

उदाहरण ।

दो०—मानो सिर धरि लंकपति, श्रीभृगुपति की बात ।
तुम करिहौ तो करहिंगे, वेऊ द्विज उतपात ॥११॥

टि०—मन्दोदरी वाक्य । तुम द्विज और परशुराम द्विज हैं । वे तुम्हें मारेंगे यह व्यंग और वाच्यार्थ बराबर है ।

लोइ=लोग । कुबलय=मुकुद, कूंईबेरा ।

कवि०—आभरन साजि बैठो ऐंठो जनि भोहैं लखि, लालन कहौगे प्यारी कला जैसी चन्द की। सुन्दरि सिंगारनि बनाइबे के ब्योंतनि तिलोतमा सी ठहरैहो सौहैं सुखकंद की ॥ दास बर आनन उदास में हू देखि कै कहोगे ज्यों कमल सोहै बानी नदनंद की। यों ही परसति जाति उपमा की पाँतिन्ह को, सगति अजहुँ तजो मान मति-मंद की ॥१२॥

टि०—मान छुड़ाना वाच्य और नायिका की शोभा वर्णन व्यंग, दोनों बराबर होने से तुल्यप्रधान गुणीभूत व्यंग है।

अस्फुट वर्णन।

जाकी व्यंग कहे बिना, बेगि न आवै चित्त।
जो आवै तो सरल हो, अस्फुट सोई मित्त ॥१३॥

उदाहरण।

कवि०—देखे दुरजन सग गुरुजन संकनि सों, हियो अकुलान दृग होत न तुखित हैं। अनदेखे हू ते मुसुकानि बतरानि मृदु, बानिऐ तिहारी दुखदानि बिमुखित हैं ॥ दास धनि ते हैं जे बियोगही मैं दुख पावैं, देखे प्रान पी के होति जिय में सुखित हैं। हमैं तो तिहारे नेह एकहू न सुख लाहु, देखेहू दुखित अनदेखेहू दुखित हैं ॥ १४ ॥

आभरन=भूषण, गहना। ब्योंत=विधान, तरीक़ा।

निशंक जगह मिलने की विनती करना अस्फुट व्यंग है।

काकुछिप्त वर्णन।

दो०—साँच बात को काकु तें, जहाँ नहीं करि जाइ।
काकुछिप्त सो व्यंग है, जानि लेउ कबिराइ ॥१५॥

उदाहरण।

दो०—जहाँ रमै मन रैन दिन, तहाँ रहो करि भौन।
इन बातन पर प्रानपति, मन ठानती हौं न ॥१६॥

टि०—मान करके नहीं करना कहना काकुछिप्त व्यंग है।

वाच्यसिध्यांग वर्णन।

दो०—जा लगि कीजत व्यंग सो, बातहि में ठहरात।
कहत बाच्यसिद्धांग तेहि, सकल सुमति अवदात ॥१७॥

उदाहरण।

दो०—बरषा काल न लाल गृह, गवन करो केहि हेत।
व्याल बलाहक बिष बरषि, बिरहिन को जिय लेत॥१८

टि०—बिष जल को न कह व्याल को कहना, वाच्य-सिद्धाङ्ग गुणीभूत व्यंग है।

दो०—स्याम-संक पंकजमुखी, जकै निरखि निसि रंग।
चौंकि भजै निज छाँह तकि, तजै न गुरुजन संग ॥१९॥

टि०—रात्रि और परछाहीं श्याम है तथा नायक श्रीकृष्ण चन्द्र श्याम हैं। मुग्धा नायिका का भयभीत होना वाच्य सिद्धाङ्ग गुणीभूत व्यङ्ग है।

बलाहक=मेघ।

संदिग्ध वर्णन।

दो०—होइ अर्थ संदेह में, पै नहिँ कोऊ दुष्ट।
सो संदिग्ध प्रधान है, व्यंग कहै कवि पुष्ट ॥२०॥

उदाहरण।

दो०—जैसे चंद निहारि के, इक टक तकत चकोर।
त्यों मनमोहन तकि रहे, तिय बिंबाधर ओर ॥२१॥

टि०—शोभा वर्णन और अधरामृत पान की इच्छा, दोनों सन्देह प्रधान व्यंग है।

असुन्दर वर्णन।

दो०—व्यंग कढ़ै बहु तकन्ह पै, वाच्य अर्थ संचार।
ताहि असुन्दर कहत कवि, करि कै हिये विचार ॥२२॥

उदाहरण।

दो०—बिहँग सोर सुनि सुनि समुझि, पछवारे को बाग।
जाति परी पियरी खरी, प्रिया भरी अनुराग ॥२३॥

नायक का सहेट बद रक्खा वह आया है यह व्यंग प्रिया भरी अनुराग, वाच्यार्थ ही से प्रगट है। असुन्दर गुणीभूत व्यंग है।

अवर काव्य वर्णन।

दो०—एहिबिधि मध्यमकाव्य को, जानि लेहु व्यवहार।
तितने यामें भेद हैं, जितने ध्वनि विस्तार ॥२४॥
बचनारथ रचना जहाँ, व्यंग न नेकु लखाइ।
सरल जानि तेहि काव्य को, अवर कहैं कविराइ ॥२५॥
अवर काव्यहू में करै, कवि सुघराई मित्र।
मनरोचक करि देत है, बचन अर्थ को चित्र ॥२६॥

वाच्यचित्र उदाहरण

कवि०—चंद चतुरानन चखन के चकोरन को, चंचरीक चंडीपति चित चोप कारिये। चहूँ चक्र चारयो जुग चरचा चिरानी चलै, दास चारयो फल देत पल भुज चारिये॥ चोप दीजै चारु चरनन चित्त चाहिबे की, चेरनी को चेरो चीन्हि चूक को नेवारिये। चक्रधर चक्कवय चिरी के चढ़वैया चिंता, चूहरि को चित्त तें चपल चूरि डारिये॥२७॥

अर्थ चित्र वर्णन

सवैया—नीर बहाय कै नैन दोऊ मलिनाई की खेह करै सनि गारो। बातें कठोर लुगाई करैं अपनी अपनी दिसि रेत सों डारो॥ दास के ईस करै न मने जहँ बैरी मनोज हुकूमति वारो। छाती के ऊपर ब्याधि के भौन उठावतो राज सनेह तिहारो॥२८॥

टि०—राज कारीगर और स्नेह राज में चित्र व्यंग है।

इतिश्री काव्यनिर्णये गुणीभूत वर्णनं नाम सप्तमोल्लासः॥ ७॥

उपमादि अलंकार वर्णन

दो०—अलंकार रचना बहुरि, करों सहित विस्तार।
एक एक पर होत जहँ, भेद अनेक प्रकार॥ १॥

चंडीपति=शिव। चोप=उत्साह। चिरानी=पुरानी। गारा=कीचड़। रेत=बालू, धूलि।

कबि सुघराई को कहैं, प्रतिभा सब कबिराइ ।
तेहि प्रतिभा को होत है, तीनि प्रकार सुभाइ ॥ २ ॥
शब्द शक्ति प्रौढ़ोक्ति अरु, स्वतःसम्भवी चारु ।
अलंकार छबि पावतो, कीन्हों त्रिबिधि प्रकारु ॥ ३ ॥
बडे छंद में एक ही, करि भूषन विस्तार ।
करौ घनेरो धर्म में, इक माला सजि चारु ॥ ४ ॥
अवर हेतु नहिं केवलै, अलंकार निरबाहु ।
कबि पंडित गनि लेत हैं, अवर काव्य में ताहु ॥ ५ ॥
रुचिर हेतु रस को बहुरि, अलंकार जुत होय ।
चमत्कार गुन जुक्त है, उत्तम कबिता सोय ॥ ६ ॥
अलंकार रस बात गुन, ये तीनो दृढ़ जाहि ।
अवरव्यंग कछु नाहिँ तौ, मध्यम कविता आहि ॥ ७ ॥
छ०—उपमा पूरनअर्थ लुप्त उपमान अनन्वय ।
उपमेयोपम अरु प्रतीप श्रौती उपमाचय ॥
पुनि दृष्टांत बखानि जानि अर्थान्तरन्यासहि ।
विकस्वरोनिदरसन और तुल्ययोगिता प्रकासहि ॥
गनि लेहु सु प्रतिवस्तूपमा, अलंकार बारह बिदित ।
उपमान और उपमेयको, है विकार समुझो सुचित ॥

उपमालक्षण

दो०—जहँ उपमा उपमेय है, सो उपमा विस्तार ।
होत आरथी श्रौतियो, ताको दोइ प्रकार ॥ ९ ॥

बर्णनीय उपमेय है, समता उपमा जानि ।
जो है आई आदि तें, सो आरथी बखानि ॥१२॥

आरथी उपमा लक्षण

दो०—समता समबाचक धरम, बर्न्य चारि इक ठौर ।
ससि सो निरमल मुख यथा, पूरन उपमा गौर ॥११॥
ससि समता सो सम बचन, निरमलता है धर्म ।
बर्न्य सुमुख एहि भाँति सों, जानो चारो मर्म ॥१२॥

बहुधर्मसे पूर्णोपमा

संपूरन उज्जल उदित, सीतकरन अँखियान ।
दास सुखद मनको प्रिया, आनन चंद समान ॥१३॥

कवि०—कढ़ि के निसंक पैठि जाति झुण्ड झुण्डन में, लोगन को देखि दास आनंद पगति है। दौरि दौरि जाहि ताहि लाल करि डारति है, अंग लगि कंठ लगिबे को उमगति है ॥ चमक झमकवारी ठमक जमकवारी, दमक तमकवारी जाहिर जगति है। राम असि रावरे की रन में नरन में निलज्ज बनिता सी होरी खेलन लगति है ॥१४॥

मालोपमा लक्षण

दो०—कहुँ अनेक की एक है, कहुँ है एक अनेक ।
कहूँ अनेक अनेक की, मालोपमा विबेक ॥१५॥

वर्न्य=उपमेय । असि=तलवार ।

दो०—नैन कंजदल से बड़े, मुख प्रफुलित ज्यों कंजु।
कर पद कोमल कंज से, हियो कंज सो मंजु ॥१६॥

अनेक की एक मालोपमा

दो०—जहँ एक की अनेक तहँ, भिन्न धर्म ते जोइ।
कहूँ एकही धर्म ते, पूरनमाला होइ ॥१७॥

भिन्न धर्म की मालोपमा

दो०—मरकत से दुतिवंत हैं, रेसम से मृदु बाम।
निपट महीन मुरार से, कच काजर से स्याम ॥१८॥

एक धर्म की मालोपमा

सवै०—सारद नारद पारदअङ्ग सी छीरतरङ्ग सी गङ्ग की धार सी। शंकरसैल सी चद्रिका फैल सी सारसतार सी हंसकुमार सी ॥ दास प्रकास हिमाद्रि बिलास सी कुंद सी काम सी मुक्ति भँडार सी। कीरति हिन्दूनरेस की राजति उज्जल चारु चमेली के हार सी ॥ १९ ॥

अनेक अनेक की मालोपमा

सवै०—पंकज से पगलाल नवेली के केदली-खंभ सी जानु सुढार हैं। चार के अङ्क सी लंक लगी तनु कंजकली से उरोजउदार हैं॥ पल्लव से मृदुपानि जपा के प्रसूनन से अधार सुकुमार हैं। चंद सो निर्मल आननदास जू मेचक चारु सेवार से बार हैं ॥२०॥

पारद=पारा। सारसतार=कमलकेसर। जानु=जंघा। जपा=उड़ुल। मेचक=श्याम।

लुप्तोपमा लक्षण ।

दो०—समतादिक जे चारि हैं, तिनमें लुप्त निहारि ।
एक दोइ की तीनि लौं, लुप्तोपमा बिचारि ॥२१॥

धर्म लुप्तोपमा ।

दो०—देखि कंज से बदनपर, दृग खंजन से दास ।
पायो कंचनबेलि सी, बनिता संग बिलास ॥२२॥

टि०—कमल पर खंजन का दर्शन श्रेष्ठ है, इससे इस धर्म लुप्तोपमा में काव्यलिंग का संकर है ।

उपमानलुप्तोपमा ।

दो०—सुबस-करनबर जोर सखि, चपल चित्त के चौर ।
सुन्दर नंदकिशोर से, जग में मिलै न और ॥२३॥

वाचक लुप्तोपमा ।

दो०—अमल सजल घन स्यामतन, तड़ित पीतपट चारु ।
चन्दबिमलमुख हरिनिरखि, कुलकीकाहि संभारु॥२४॥

उपमेय लुप्तोपमा ।

दो०—जपा पुहुप से अरुन में, मुकतावलि से स्वच्छ ।
मधुर सुधा सी कढ़ति है, तिनते हास प्रतच्छ ॥२५॥

वाचक धर्म लुप्तोपमा ।

दो०—लखु लखि सखि सारसनयन, इंदुबदन घनस्याम ।
बिज्जुहास दारयो दसन, बिम्बाधर अभिराम ॥२६॥

वाचक लुप्तोपमा ।

दो०—हिय सियरावै बदन छबि, रस दरसावै केस ।
परम घाव चितवनि करै, सुन्दरि यही अँदेस ॥२७॥

सियरावै=ठंढी करे ।

उपमेय धर्म लुप्तोपमा ।

सवै०—मग डारत ईंगुर पाँवड़े से सुमना सो बगारत आइ गई । जियरे में ठगौरी सी दै कै भले हियरे बिच होरी सी लाइ गई ॥ नहिँ जानिये को है कहाँ की है दास जू कंचन बेलि सी बाल नई । ससि सों दरसाइ मुरी मुसुकाइ सुधा सों सुनाइ के जात भई ॥ २८ ॥

उपमेय वाचक धर्म लुप्तोपमा ।

तिहूं लुप्त जहँ होत है, केवल ही उपमान ।
रूपकातिशयउक्ति तहँ, बरनत हैं मतिमान ॥२९॥

उदाहरण ।

दो०—नभ ऊपर सर बीच जुत, कहा कहौं ब्रजराज ।
तापर बैठो हौं लख्यो, चक्रवाक युग आज ॥३०॥

अनन्वय और उपमेयोपमा लक्षण ।

दो०—जाकी समता ताहि को, कहत अनन्वय भेव ।
उपमा दोऊ दुहुँन की, सो उपमा उपमेव ॥३१॥

अनन्वय उदाहरण ।

मिली न और प्रभा रती, करी भारती दोर ।
सुन्दर नन्दकिशोर सों, सुन्दर नन्दकिशोर ॥३२॥

उपमाउपमेय उदाहरण ।

दो०—तरलनयनितुअ कचनि से, स्याम तामरस तार ।
स्याम तामरस तार से, तेरे कच सुकुमार ॥३२॥

सुमना=फूल । भारती=सरस्वती । तामरस=कमल ।

प्रतीप अलंकार ।

दो०—सो प्रतीप उपमेय को, जब कीजै उपमान ।
कै काहू बिधि बर्न्य को, करो अनादर ठान ॥३४॥

उदाहरण ।

दो०—लख्य गुलाब प्रसून में, मैं मधुछक्यो मलिन्दु ।
जैसे तेरे चिबुक में, ललिता लीला बिन्दु ॥३५॥
छुटे सदागति संग लसै, पानिप भरे अमान ।
स्यामघटा सोहै अली, सुन्दर कचन समान ॥३६॥

टि०—प्रसिद्ध उपमान को उपमेय करना प्रथम प्रतीप अलंकार है ।

अनादर वर्ण्य प्रतीप ।

कवि०—विद्यावर बानी दमयन्ती की सयानी मजुघोषा मधुराई प्रीति रति की मिलाई मैं । चख चित्ररेखा के तिलोत्तमा के तिल लै सुकेसी के सुकेस सचो साहिबी सोहाई मैं ॥ इन्दिरा उदारता औ माद्री की मनोहराई, दास इन्दुमती की लै सुकुमारताई मैं । राधा के गुमान में समान बनिता न ताके, हेतु या बिधान एकठान ठहराई मैं ॥३७॥

दो०—महाराज रघुराज जू, कीजे कहा गुमान ।
दंड कोस दल के धनी, सरसिज तुम्हैं समान ॥३८॥

सदागति=पवन । पानिप=दुति, शोभा । अमान=बेप्रमाण । चख=नेत्र । गुमान=अनुमान, गर्व ।

टि०—उपमानों से उपमेय का अनादर होना द्वितीय प्रतीप अलंकार है।

अन्य प्रतीप।

दो०—उपमा को जु अनादरै, बरन आदरै देखि।
समता देइ न नाम लै, तऊ प्रतीपै लेखि ॥३९॥

उपमा के अनादर का उदाहरण।

दो०—बागलता मिलि लेइ किन, भौंरन प्रेम समेति।
आवति पद्मिनि ग्राम ढिंग, फिरिन लहैगी सेति ॥४०॥
द्विजगन को आशय बड़ो, देवन को प्रियप्रान।
ता रघुपति आगे कहा, सुरपति करै गुमान ॥४१॥

टि०—उपमेय से उपमान को कुछ हीन कहना तृतीय प्रतीप अलंकार है।

कवि०—अलक पै अलिबृंद भाल पै अरधचंद भ्रू पै धनु नयननि पै वारों कंजदल मैं। नासा कीर मुकुर कपोल बिम्ब अधररि दारचो वारों दसननि ठोढ़ी अम्बफल मैं॥ कम्बुकंठ भुजनि मृनाल दास कुचकोक, त्रिबली तरंग वारौं भौंर नाभी थल मैं। अचल नितम्बन पै जंघनि कदलिखंभ, बाल-पग-तल वारों लाल मखमल मैं ॥ ४२ ॥

गुमान=घमंड। अलक=बाल। मुकुर=दर्पण। दारचो=नीचा किया।

चतुर्थ प्रतीप ।

दो०—सही सरस चंचल बड़े, मढ़े रसीली बास ।
पै न द्विरेफनि इन दृगनि, सरिस कहौं मैं दास ॥४३॥

टि०—उपमेय की बराबरी में उपमान का न तुलना चतुर्थ प्रतीप अलंकार है ।

पंचम प्रतीप लक्षण ।

दो०—जहँ कीजत उपमेय लखि, उपमा व्यर्थ बिचार ।
ताहू कहत प्रतीप हैं, यह पाँचयो प्रकार ॥४४॥

उदाहरण ।

दो०—जहाँ प्रिया आनन उदित, निसिबासर सानन्द ।
तहाँ कहा अरबिन्द है, कहा बापुरो चन्द ॥४५॥
प्रभाकरन तमगुन हरन, धरन सहसकर राज ।
तव प्रताप ही जगत में, कहा भानु को काज ॥४६॥

टि०—उपमेय के मोक़ाबिले उपमान को व्यर्थ समझना पञ्चम प्रतीप अलङ्कार है ।

श्रोती उपमा लक्षण ।

दो०—धर्म सहज अश्लेष करि, जहाँ सुकवि सरिदेत ।
श्रोती उपमा ताहि को, कहत सदा शुभ चेत ॥४७॥

दो०—बुध गुन अवगुन संग्रहैं, खोलैं सहित बिचार ।
ज्यों हर-गर गोये गरल, प्रगटे ससिहि लिलार ॥४८॥
ज्यों अहिमुख बिष सीप मुख, मुकुत स्वाति जल होइ ।
बिगरत कुमुख सुमुख बनत, त्यों ही अक्षर सोइ ॥४९॥

सवै०—ऊपर ही अनुराग लसै जेहि अन्तर को रँग

द्विरेफ=भ्रमर ।

है कछु न्यारो । क्यों न तिन्हैं करतार करै हरुवो अरु गुंजनि लौं मुँह कारो ॥ भीतर बाहिरहू जहँ दास वहै रँग दूजो को नाहिँ सँचारो ॥ ते गुनवन्त महा गरुये जगमूँगा ज्यों मोतिन सङ्ग बिहारो ॥५७॥

धर्म की मालोपमा ।

कवि०—दास फनि मनि सों ज्यों पंकज तरनि सों ज्यों, तामसीर जनि सों ज्यों चोर उमहत हैं। मोर जलधर सों चकोर हिमकर सों ज्यों, भौंर इन्दीवर सों ज्यों कोविद कहत हैं। कोकिल बसन्त सौं ज्यों कामिनी स्वकन्त सों ज्यों सन्त भगवन्त सों ज्यों नेमहि गहत हैं। भिक्षुक भुआल सों ज्यों मीन जलमाल सों ज्यों, नैन नँदलाल सों त्यों चायन चहत हैं ॥५१॥

सवै०—मित्र ज्यों नेह निबाह करै कुल नारि महा परलोक सुधारन । संपति दान को साहिब ज्यों गुरु लोगन सों गुरु ग्यान पसारन ॥ दास जू भ्रातन सी बलदाइनि मातु सी है वह दुःखनिवारन । या जग में बुधिवंतन को बर विद्या बड़ी वित ज्यों हितकारन ॥

कवि०—चन्द की कला सी सीतकरनि हिये की गुनि,

तामसीरजनि=अन्धेरी रात । उमहत=प्रसन्न होते हैं । इन्दीवर=कमल ।

पानिप कलित मुकताहल के हार सी। बेनीबर बिलसै प्रयागभूमि ऐसी है अमल छबि छाय रही जैसी कछु आरसी ॥ दास नित देखिये सची सी सङ्ग उरबसी, कामद अनूप कलपद्रुम की डार सी। सरस सिङ्गार सुबरन बर भूषन सी, बनिता की फबिता है कविता उदार सी ॥५३॥

दृष्टान्तालङ्कार लक्षण ।

दो०—लखिबिम्बा प्रतिबिम्ब गति, उपमेयो उपमान ।
लुप्त शब्द बाचक किये, है दृष्टान्त सुजान ॥५४॥
साधर्मो बैधम से, कहुँ विशेष है धर्म ।
कहूँ होत सामान्य ते, जानत हैं जे मर्म ॥५५॥

उदाहरण साधर्म ।

दो०—कान्हर कृपाकटाक्ष की, करै कामना दास ।
चातक चित में वसत है, स्वातिबूँद की आस ॥५६॥

सवै०—और सों केतऊ बोलैं हँसै पर प्रीतम की तू पिआरी है प्रान की। केती चुनै चिनगी को चकोर पै चोप है केवल चन्दछटान की ॥ जौ लौं न तू तब ही लों अली गति दास के ईश पै और तियान की। भास तरैयन में तब लौं जब लौं प्रगटै न प्रभा जग भान की ॥५७॥

कलित = शोभन। आरस = दर्पण।

साधर्म दृष्टान्त की माला।

सवै०—अरबिंद प्रफुल्लित देखि कै भौंर अचानक जाइ अरैं पै अरैं। बनमाल थली लखि के मृगसावक दौरि बिहार करैं पै करैं॥ सरसी ढिग पाइ कै व्याकुल मीन हुलास सौं कूदि परैं पै परैं। अवलोकि गुपाल को दास जू ये अँखियाँ तजि लाज ढरैं पै ढरैं॥५८॥

बैधर्म दृष्टान्त वर्णन।

दो०—जीवन-लाभ हमें लखे, स्याम तिहारी काँति।
बिना स्याम घन छनप्रभा, प्रभा लहै केहि भाँति॥५९॥

अर्थान्तरन्यास लक्षण।

दो०—साधारण कहिये बचन, कछु अवलोकि सुभाय।
ताको पुनि दृढ़ कीजिये, प्रगट बिसेषहि ल्याय॥६०॥
कै बिसेष ही दृढ़ करै, साधारन कहि दास।
साधर्महि बैधर्म करि, यह अर्थान्तरन्यास॥६१॥

साधर्म सामान्य की दृढ़ता विशेष से।

दो०—जाको जासों होइ हित, वहै भलो तेहि दास।
जगत ज्वाल मय जेठही, जी सों चहै जवास॥६२॥
बरजतहू जाचक जुरैं, दानवन्त के ठौर।
करी करन झारत रहैं, तऊ तजत नहिं भौंर॥६३॥

माला उदाहरण।

सवै०—धूरि चढ़ै नभ पौन प्रसंग तें कीच भई जल

सरसी = सरोवर, तलैया।

संगति पाई। फूल मिलै नृप पै पहुँचै कृमि काँटनि संग अनेक बिथाई॥ चंदन सङ्ग कुदारु सुगन्ध ह्वै नीब प्रसंग लहै करुआई। दास जू देख्यो सही सब ठौरनि संगति को गुन दोष न जाई॥६४॥

वैधर्म उदाहरण।

दो०--जाको जासों होइ हित, वहै भलो हित दास।
सावन जग-ज्यावन गुनो, का लै करै जवास॥६५॥

माला वर्णन।

सवै०--पंडित पंडित सों सुखमंडित सायर सायर के मन मानै। संतहि संत अनंत भलो गुनवंतनि को गुनवंत बखानै। जा पर जा कर प्रेम नहीं कहिये सु कहा तेहि की गति जानै। सूर को सूर सती को सती अरु दास जती को जती पहिचानै॥६६॥

साधर्म विशेष की दृढ़ता सामान्य से।

दो०--कैसे फूले देखिये, प्रात कमल के गोत।
दास मित्र उद्दोत लखि, सबै प्रफुल्लित होत॥६७॥

(वैधर्म) विशेष की दृढ़ता सामान्य से।

दो०--मूढ़ कहा गथहानि की, सोचकरत मलि हाथ।
आदि अन्त भरि इन्दिरा, रही कौन के साथ॥६८॥

कुदारु = खराब लकड़ी, बबूल बहेड़ा आदि। गथ = द्रव्य, मूल्य। इन्दिरा = लक्ष्मी।

विकस्वरालंकार लक्षण ।

दो०—कहिविसेषि सामान्य पुनि, कहियेबहुरिविसेष ।
ताको बिकस्वर कहत हैं, जिनकी बुद्धि असेष ॥६९॥

सवै०—देति सुकीया तू पीको सुखै निज काज बिगारत है मतिमैली । दास जू ये गुन हैं जिनमें तिनही की रहै जग कीरति फैली ॥ बात सही बिधि कीन्हों भली तोहि योंही भलाइन सों निरमैली । काढ़ि अँगारन में गढ़ि गेरेहू देति सुबासना चन्दन चैली ॥७०॥

निदर्शनालङ्कार लक्षण ।

दो०—एक क्रिया तें देत जहँ, दूजी क्रिया लखाय ।
सत असतहु से कहत हैं, निदरशना कविराय ॥७१॥
सम अनेक वाक्यार्थ को एक कहै धरि टेक ।
एकै पद के अर्थ को थापै यह वह एक ॥७२॥

सतसत वाक्यार्थ की एकता ।

सवै०—तीरथ तो मन न्हाननि कौं बहु दाननि दै तप पुंज तपै तू । जोम कै सामुहें जङ्ग जुरै दृढ़ होम कै सीस धरै अरि पै तू ॥ दासजू वेद पुरानन को करि कंठ मुखागर नित्य लपै तू । द्योस तमाम में जो इक जामहु राम को नाम निकाम जपै तू ॥७३॥

असत वाक्यार्थ की एकता

सवै०—प्रान बिहीन के पाइ पलोट्यो अकेले ह्वै जाइ

चैली=लकड़ी । पलोट्यो=दबायो ।

घने बन रोयो । आरसी अन्ध के आगे धर्यो बहिरे सों मतो करि उत्तर जोयो ॥ ऊसर में बरस्यो बहु बारि पखान के ऊपर पंकज बोयो । दास वृथा जिन साहिब सूमके सेवन में अपनो दिन खोयो ॥७४॥

असत सत वाक्यार्थ की एकता ।

सवै०—जूगुनू भानुके आगे भली बिधि आपनी जोतिन्ह को गुन गैहै । माखियो जाइ खगाधिप सों उड़िबे की बड़ी बड़ी बात चलैहै । दास जबै तुकजोरनहार कबिन्द उदारन की सरि पैहै । तौ करतारहु सों औ कुम्हार सों एक दिना झगरो बनि ऐहै ॥७५॥

पुनः ।

सवै०—पूरब ते फिरि पश्चिम ओर कियो सुर आपगा धारन चाहै । तूलन तोपिकै है मति अन्ध हुतासन दन्द प्रहारन चाहै ॥ दास जू देखो कलानिधि कालिमा छूरिन सों छिलि डारन चाहै । नीति सुनाइ के माहिय में नँदलाल को नेह निवारन चाहै ॥७६॥

पदार्थ की एकता ।

दो०—इन दिवसन मनभावती, ठहरायो सबिवेक ।
सूर ससी कटक सुकुम, गरल गन्धवह एक ॥७७॥

सवै०—व्यालमृनाल करीकर आकृति भावते जूको

सरि=बराबरी । सुर आपगा=गंगा । तूल=रूई । हुतासन=अग्नि । दन्द=ज्वाला, गरमी । गन्धवह=पवन ।

भुजान में देख्यो। आरसी सारसी सूर ससी दुति आनन आनँदखानि में देख्यो॥ मैं मृग मीन ममोलन की छबि दास उन्हीं अँखियान में देख्यो। जो रस ऊख मयूष पियूष में सो हरि की बतियान में देख्यो॥७८॥

एक क्रिया से दूजी क्रिया की एकता।

दो०—तजि आसा तन प्रानकी, दीपहि मिलत पतङ्ग।
दरसावत सब नरन को, परम प्रेम को ढङ्ग॥७९॥
पदुमिनि उर जनि पर लसत, मुकुतमाल की जोति।
समुझावत यों सुथल गति, मुक्त नरन की होति॥८०॥

तुल्ययोगितालङ्कार लक्षण।

दो०—सम वस्तुन गनि बोलिये, एक बार ही धर्म।
समफलप्रद हित अहित को, काहू को यह कर्म॥८१॥
जेहि जेहि के सम कहन को, वहै वहै कहि ताहि।
तुल्यजोगिता भूषनहि, निधरक देहु निबाहि॥८२॥

वर्ण्यो की धर्मएकता।

दो०—साँझ भोर निसिबासरहुं, क्योंहूँ छीन न होति।
सीतकिरन को कालिमा, बालबदन की जोति॥८३॥

सवै०—थाह ना पैये गँभीर बड़े हैं सदाही रहैं परिपूरन पानी। एकै बिलोकि कै श्रीयुत दास जू होत उमाहिल मैं अनुमानी॥ आदि वही मरजाद लिये

सूर=सूर्य। ममोला=खंजन। सीतकिरन=चन्द्रमा। कालिमा=कलङ्क। उमाहिल=उत्साहित।

रहैं है जिनकी महिमा जगजानी। काहू के क्योंहू घटाये घटैं नहिं सागर औ गुनआगर प्रानी ॥८४॥

हिता हत में एक धर्म। प्रथम

सवै०--जे तट पूजन को विसतारैं पखारैं जे अंगन की मलिनाई। जो तुव जीवन लेत हैं जीवन देत हैं जे करि आपु दिढ़ाई। दास न पापी सुरापी तपी अरु जापी हितू अहितू बिलगाई। गंग तिहारी तरङ्गन सों सब पावैं पुरन्दर की प्रभुताई ॥८५॥

दो०--जो सींचै सर्पिषसिता, अरु जो हनै कुठाल।
कटु लागै तिन दुहुँन को, वहै नीब की छाल ॥८६॥

बहु उत्कृष्ट गुणों की समता। चतुर्थ

दो०--सोवत जागत सुख दुखहु, सोई नन्दकिसोर।
सोइ व्याधि सो बैद हू, सोइ साहु सोइ चोर ॥८७॥
जाय जुहारै कौन को, कहा काहु से काम।
मित्र मातु पितु बंधु गुरु, साहिब मेरे राम ॥८८॥

कवि०--गुम्बज मनोज के महल के सुहाये स्वच्छ, गुच्छ छबि छाये कंजकुंभ गजगामिनी। उलटे नगारे तने तम्बू सैल भारे मठ, मंजुल सुधारे चक्रवाक गत जामिनी ॥ दास जुग संभु रूप श्रीफल अनूप मन, घायल करत घायलन किलकामिनी। कन्दुक

जीवन=जल, प्राण। पुरन्दर=इन्द्र। सर्पिष=घी। सिता=चीनी।

कलस बड़े सम्पुट सरस मुकुलित तामरस हैं उरज तेरे भामिनी ॥८९॥

टि०—इसमें लुप्तोपमा का सन्देहसङ्कर है ।

प्रतिवस्तूपमालंकार लक्षण ।

नाम जु है उपमेय को, सोई उपमा नाम ।
ताहि प्रतीवस्तूपमा, कहत सुकवि गुनधाम ॥९०॥
जहँ उपमा उपमेय को, नाम अर्थ है एक ।
ताहू प्रतिवस्तूपमा, कहैं सुबुद्धि विवेक ॥९१॥

उदाहरण ।

सवै०—मुक्त नरो घने जामे बिराजत राते सितासित भ्राजत ऐनी । मध्य सुदेश ते है ब्रह्मांडलौं लोग कहैं सुरलोक निसेनी ॥ पावन पानिप सों परिपूरन देखत दाहि-दुखै सुखदेनी । दास भरै हरि के मन काम को बीसबिसै यह बेनी सी बेनी ॥९२॥

दो०—नारी छूटि गये भई, मोहन को गात सोइ ।
नारी छूटि गये जु गति, और नरन की होइ ॥९३॥
लाल बिलोचन अधखुले, आरस संजुत प्रात ।
निन्दत अरुन प्रभात को, बिकसत सारस पात ॥९४॥
जहाँ बिम्ब प्रतिबिम्ब नहिँ, धर्महिँ ते सम ठानि ।
प्रतिवस्तुपमा तिहि कहैं, दृष्टांतहि में जान ॥९५॥

रात=अनुरक्त हुए । नारी=नाड़ी, स्त्री, नब्ज । आरस=आलस्य । अरुन=सूर्य । सारस=कमल ।

यथा सवैया ।

सवै०—कौन अचम्भो जो पावक जारै गरू गिरि है तो कहा अधिकाई । सिंधुतरंग सदैव खराइ नई न है सिन्धुर अङ्ग कराई ॥ मीठो पियूष करू विष दास जू है यह रीति न निन्द बड़ाई । भार चलावत आये धुरोन भलेन के अंग सुभावै भलाई ॥९६॥

इति श्री काव्यनिर्णये उपमादिअलङ्कार वर्णन नामाष्टमो-ल्लासः ॥८॥

अथ उत्प्रेक्षादि वर्णन ।

दो०—उत्प्रेक्षारु अपन्हुत्यो, सुमिरन भ्रम संदेहु ।
इनके भेद अनेक हैं, ये पाँचो गनि लेहु ॥ १ ॥

उत्प्रेक्षा अलङ्कार लक्षण ।

दो०—वस्तु निरखि कै हेतु लखि, कै आगम फल-काज ।
कवि कै बकता कहत यह, लगै और सों आज ॥२॥
सम वाचक कहुँ परत यह, मानहु मेरे जान ।
उत्प्रेक्षा भूषन कहैं, एहि बिधि बुद्धि निधान ॥३॥

वस्तूत्प्रेक्षा के दो प्रकार ।

दो०—वस्तुत्प्रेक्षा दोइ बिधि, उक्ति अनुक्ति विषैन ।
उक्ति विषै जगअनउकुति, होत कबिहि की बैन ॥४॥

उक्त विषया, अनुक्तविषया वस्तूत्प्रेक्षा दो प्रकार की है ।

सिन्धुर=हाथी । कराई=कठोरता ।

जगत की वस्तुओं की उत्प्रेक्षा करना उक्त विषय है और अनुक्त विषया केवल कवि की कल्पना मात्र है ।

उक्त विषया वस्तूत्प्रेक्षा ।

दो०—रैन तिमहले तिय चढ़ी, मुख छबि लखिनदनंद ।
घरी तीन उदयाद्रि तें, जनु चढ़ि आयो चन्द ॥५॥

टि०—चन्द्रमा का चढ़ना उक्त विषय है ।

दो०—लसै बालबक्षोज यों, हरित-कंचुकी संग ।
दलतर-दबे पुरैनि के, मनो रथांग विहंग ॥६॥

टि०—कमल पत्र के नीचे चकवा का दबना आश्चर्य नहीं यह उक्त विषय है ।

सवै०—स्याम सुभाय में नेह निकाय में आपहू ह्वै गये राधिका जैसी । राधे करै अवराधो जु माधौ मैं रीति प्रतीति भई तनमै सी ॥ ध्यान ही ध्यान में ऐसो कहा भयो कोऊ कुतर्क करै यह कैसी । जानत हों इन्हें दास मिल्यौ कहूँ मंत्र महा पर-पिंड-प्रवैसो ॥७॥

परपिंड—प्रवेसी मन्त्र का मिलना आश्चर्य नहीं । उक्त विषय है ।

अनुक्तविषया वस्तूत्प्रेक्षा ।

सवै०—चंचल लोचन चारु विराजत पास लुरी अलकैं थहरै । नाक मनोहर औ नकमोतिन की कछु

वक्षोज=छाती । रथांग=चकवा पक्षी । तन्मय=लीन । परपिंड प्रवेसी=दूसरे के शरीर में प्रवेश करना ।

बात कही न परै ॥ दास प्रभानि भरयो तियआनन देखत हो मनुजाइ अरै। खञ्जन साँप सुआ सँग तारे मनो ससि बीच बिहार करै ॥८॥

टि०—खंजन, सर्प, सुग्गा और तारागण का चन्द्रमा के बीच एक साथ बिहार करना अयुक्त केवल कवि की कल्पना मात्र है। क्योंकि ऐसा होना असम्भव, अनुक्त विषया वस्तूत्प्रेक्षा है।

सवै०—दास मनोहर आनन बाल को दीपति जाकी दिपै सब दीपै। श्रौन सुहाये बिराजि रहे मुकताहल संयुत ताहि समीपै ॥ सारी मिहीन सों लीन बिलोकि बखानत हैं कबिजे अवनो पै। सोदर जानि ससीहि मिलो सुत संग लिये मनो सिंधु में सीपै ॥ ९ ॥

टि०—सीप का चन्द्रमा से मिलना कवि की कल्पना मात्र अनुक्तविषय है और सहोदर जानना हेतु समर्थन है।

हेतूत्प्रेक्षा लक्षण।

दो०—हेतु फलनि के हेतु द्वै, सिद्ध असिद्ध बखान।
होनी सिद्ध असिद्ध को, अनहोनी पहिचान ॥१०॥

सिद्ध विषया हेतूप्रेक्षा।

सवै०—जौ कहौं काहू के रूप सों रीझे तो और को रूप रिझावनवारो। जौ कहौं काहू के प्रेम पगे हैं तो और के प्रेम पगावनवारो। दास जू दूसरो भेव न और इतो अवसेर लगावनवारो। जानति हौं गयो भूलि गुपालहिं पंथ इतै कर आवनवारो ॥११॥

अवसेर=बिलम्ब।

टि०—मार्ग भूलने का हेतु सिद्ध विषय है।

अमिद्ध विषया हेतूत्प्रेक्षा।

दो०—पूस दिनन में ह्वै रहे, अगिन-कोन में भान।
जानति हौं जाड़ा बली, तासों डरै निदान ॥१२॥

टि०—सूर्य का जाड़े से डरना असिद्धविषय है। इस अहेतु को हेतु ठहराना असिद्धविषया हेतूत्प्रेक्षालङ्कार है।

दो०—बिरहिनि के अँसुआन तें, भरन लग्यो ससार।
मैं जानौं मरजाद तजि, उमड़ा सागर खार ॥१३॥

टि०—सागर का उमड़ना प्रसिद्ध हेतु है।

सिद्ध विषया फलोत्प्रेक्षा

दो०—बालअधिकछबिलागिनिज, नैनन अञ्जन देत।
मैं जानौं मो हनन को, बानन विष भरिलेत ॥१४॥

टि०—बाणों में बिष भर कर मारना सिद्ध विषय फल है।

दो०—बिरहिन अँसुअनबिधुरहै, बरसावतनिन साँझि।
दास बढ़ावनको मनो, पूगो दिनन पयोधि ॥१५॥

टि०—पूर्णिमा को समुद्र का बढ़ना सिद्ध विषय है। उसके फल की इच्छा 'फलोत्प्रेक्षा' है।

असिद्ध विषया फलोत्प्रेक्षा

दो०—खंजरीटनहिँ लखिपरत, कछु दिन साँची बात।
बाल हगनसम होनको, मनो करन तप जात ॥१६॥

टि०—खंजन का तप करना असिद्ध विषय है।

लुप्तोत्प्रेक्षा लक्षण।

दो०—लुप्तोत्प्रेक्षातेहि कहैं, वाचक बिन जो होइ।
याको विधि मिलि जातहै, काव्यलिङ्ग में कोइ ॥१७॥

उदाहरण ।

दो०—बिनहु सुमनगन बाग में, भरेदेखियत भौंर ।
दास आज मनभावता, सैल कियो येहि ओर ॥१८॥
बालम कलिका पत्र अरु, खोरि सजै सब गात ।
बाल चाहिये जोग यह, चित्रित चंपक पात ॥१९॥

'मनो जनु आदि' वाचक शब्द लुप्त है। इसे गम्योत्प्रेक्षा भी कहते है।

उत्प्रेक्षा की माला ।

कवि०—चौखँडेतें उतरि बड़े हा भोरबाल आई, देवसरि आई मानों देवी कोऊ व्योम ते। शोभा सो सपरि खरी तट सोहै भींगापट, बलित बरफ सों कनक बेलि मोमते॥ धोये ते दिठौनादिक आनन अमल भयो, कढ़िगयो मानहु कलंक पूरे सोम ते। अलकन जल कनधाये अधआवैं चले, आवै गाँति तारन की मानों तम तोम ते ॥२०॥

अपन्हुति अलंकार लक्षण ।

दो०—और धम जहँ थापिये, साँचो धर्म दुराइ ।
औरहिँ दीजे जुक्ति बल, और हेतु ठहराइ ॥२१॥
मेटि और सो गुन जहाँ, करै और की थाप ।
भ्रम काहू को ह्वै गयो, ताको मिटवत आप ॥२२॥
काहू बूझ्यो मुकुरि कै, औरै कहै बनाइ ।
मिसुकरिऔरौकथन षट, होत अपन्हुति भाइ ॥२३॥

सपरि=स्नान करके। बलित=लपटी हुई। अध=नीचे। तमतोम=घना अन्धकार।

शुद्ध हेतु पर्यस्त भ्रम, छेक कैतवहि देखि।
बाचक एक नकार है, सब में निश्चय लेखि ॥२४॥

शुद्धापह्नुति का उदाहरण।

सवै०—चौहरे चौकतें देखो कलाधर पूरब ते कढ़यो आवत है री। ठाढ़ो सपूरन चोखो भरो विषसों लहि घायन-घूम घनै री॥ माजिमिसी द्विजमाँझ दई सोइ दास बिचे बिच स्याम लगै री। चाव चवाव बियोगिन को द्विजराज नहीं द्विजराजि हैं बैरी ॥२५॥

हेत्वपन्हुति का उदाहरण।

दो०—अरी घुमरि घहरात घन, चपला चमक न जान।
काम कुपित कामिनिन पर धरत सान किरवान ॥२६॥

टि०—शुद्धापह्नुति में कारण दिखाना हेत्वापह्नुति अलंकार है।

पर्य्यस्तापन्हुति का उदाहरण।

दो०—कालकूट बिष नाहिँ, विष है केवल इन्दिरा।
हर जागत छकि जाहिँ, वा सँग हरि नींदहि तजैं ॥२७॥

टि०—कालकूट का धम निषेधकर उसे लक्ष्मी में स्थापन करना पर्यस्तापन्हुति है।

भ्रान्त्यापन्हुति का उदाहरण।

सवै०—आनन है अरबिन्द न फूले अलीगन भूले कहा मड़रात हो। कीर तुम्हें कहा बाय लगी भ्रम

चौहरे=विस्तृत। द्विज=दाँत। द्विजराज=चन्द्रमा। द्विजराजि=दन्तपंक्ति। किरवान=तलवार।

बिम्ब के ओठन को ललचात हौ ॥ दास जू ब्याली न बेनी बनाव है पापी कलापी कहा इतरात हौ । बोलती बाल न बाजती बीन कहा सिगरे मृग घेरत जात हौ ॥२८॥

टि०—सच्ची बात कह कर भ्रम को दूर करना भ्रान्त्यापह्नुति अलंकार है ।

छेकापह्नुति का उदाहरण ।

सवै०—दच्छिन जातिन के बिच ह्वै कै हरे हरे चाँदनी में चलि आयो । बास बगारि कै ढारि रसै लगि सीरो कियो हियरो मन भायो ॥ दास जू वा बिन या उद्वेग सो प्रान वही यह जानि हौं पायो । भेंट्यो कहूँ मनरौन अली नहिँ री सखि राति को पौन सुहायो ॥२९॥

टि०—सच्ची बात छिपा कर दूसरे की शंका दूर करना छेकापन्हुति अलंकार है

कैतवापन्हुति का उदाहरण ।

सवै०—दास लख्यो टटको करिकै नट कोऊ कियो मिस कान्हर केरो । याको अचंभो न ईठि गनो एहि दीठि को बाँधिबे आवै घनेरो ॥ मों चित में चढ़ि आपु रह्यो उतरै न उपाइ कियो बहुतेरो । तैंहूँ कहै अरु हौंहूं लख्यो यहि ऊपर चित्त रह्यो चढ़ि मेरो ॥३०॥

कलापी=मुरैला । सीरो=शीतल । ईठि=चेष्टा, यत्न ।

टि०—नट के बहाने कान्हर का गुणगान 'कैतवापन्हुति' है।

अपन्हुतियोंकी संसृष्टि।

कवि०—एक रद है न सुभ्र साखा बढ़ि आई लम्बोदर में विवेक तरु जो है फल वेस को। सुंडादंड कैतव हथ्यार है उदंड वह, राखत न लेस अघ विघन असेस को॥ मद कहै भूलि ना झरत सुधाधार यह, ध्यान ही ते ही को दृढ़ हरन कलेस को। दास यह विजन बिचारयौ तिहूँ तापन को, दूरि को करनवारो करन गनेस को॥३१॥

स्मरण, भ्रम, संदेह अलंकार।

दो०—सुमिरन भ्रम संदेह को, लच्छन प्रगटै नाम।
उत्प्रेक्षादिक मैं नहीं, तदपि मिलै अभिराम॥३२॥

स्मरण अलंकार।

दो०—कछु लखि सुनि कछु सुधि किये, सो सुमिरन सुखकंद।
सुधि आवत ब्रजचन्द की, निरखि सपूरन चंद॥३३॥

सवै०—लखैं सुखदानि पखान ते जानि मयूरन देत भगाइ भगाइ। मने कै दियो पियरे पहिराव को गाँव में प्यादे लगाइ लगाइ॥ भुलावति वाके हिये तें हरीहि कथान में दास पगाइ पगाइ। कह

लम्बोदर=गणेश। कैतव=बहाना। विजन=पंख करन=कर्ण; कान।

कहिये पिय बोलि पपीहा व्यथा तन देत जगाइ जगाइ ॥३४॥

टि० पपीहा की बोली सुन कर प्रिय की सुधि आना स्मरण अलंकार है ।

भ्रम अलंकार ।

दो०—ओढ़े जाली जरद की, कंचन बरनी बाल ।
चतुर चिरी चित फँद गयो, भमोभूलिरंगजाल ॥३५॥

टि०—रूपक संकलित रंग के जाल म चतुर पक्षी का फँसना भ्रमालङ्कार है ।

बिल बिचारि प्रविशन लग्यो, व्याल सुंड में व्याल ।
ताहू कारी ऊख भ्रम, लियो उठाइ उताल ॥३६॥

टि०—अन्योन्य संकलित भ्रम अलंकार है ।

सवै०—पन्नन की किरनै लहरै री हरीरी लतानि को तूलि रही है । नीलम मानिक आभा अनूपम सोसन लालन झूलि रही है । हीरन मोतिन की दुति दास जू बेला चमेली सो फूलि रही है । देखि जराव को आँगन राव को भौरन की मति भूलि रही है ॥३७॥

टि०—यहाँ उदात्त अलंकार का संकर है और फुलवारी का रूपक व्यंग है ।

कवि०—देखत ही जाके बैरी वृन्द गजराजन की, धीर न

चिरी = पक्षी. चिड़िया । व्याल=हाथी, सर्प । सासनी और लाला= लाल रंग के फूल है । झूलि=झोंका देना ।

रहत जस जाहिर जहान है। जगमुकतान को खिलौना करि डारत है, उमगि उछाह सों करत जबै दान है। बाहन भवानी को पराक्रम बसत उरु अंगन में सूरता को प्रगट प्रमान है। हिन्दूपति साहेब के गुन मैं बखाने मृगराज जिय जानै हमारो गुन गान है ॥३८॥

टि०—यहाँ शब्द शक्ति से भ्रांत्यलंकार का प्रतोप व्यंग है।

सन्देहालंकार का उदाहरण।

सवै०—लखे उहि टोल में नौल बधू मृदु हास में मेरो भयो मन डोल। कहौं कटि खीन को डोलनो डौल कि पीन नितम्ब उरोज की तोल॥ सराहौं अलौकिक बोल अमोल कि आनन कोष में रङ्ग तमोल। कपोल सराहौं कि नील निचोल किधौं बिवि लोचन लोल कपोल ॥३९॥

दो०—तमदुखहारनि रबि किरन, सीतलकारनि चंद।
बिरह कतल काती किधौं, पाती आनंदकंद ॥४४॥

कवि०—चारु मुखचंद को चढ़ायो बिधि किंशुक कै, शुकन यों बिम्बाधर लालच उमंग है। नेह उपजावन अतूल तिल फूल कैधों, पानिप सरोवर की उरमो उतंग है॥ दास मनमथसाही कंचन-सुराही-

उरु=जाँघ। डोल=चंचल। तमोल=पान। काती=छुरी, कैंची। उरमी=लहर, तरंग। उत्तंग=ऊँचा, बड़ा।

मुख, बाँस जुत पालका को पाल सुभ रंग है।
एकही में तीनों पुर ईस को है अंस कैधौं,
नाक नवला की सुरधाम सुर संग है॥ ४१॥

इति श्रीकाव्यनिर्णये उत्प्रेक्षादिअलंकार वर्णनंनामनवमोल्लासः॥ ९॥

व्यतिरेक रूपकालंकार वर्णन।

दो०—व्यतिरेकहु रूपकहु के, भेद अनेक प्रकार।
दास इन्हैं उललेख जुत गनौ तीनि निरधार॥ १॥

व्यतिरेकालंकार लक्षण।

दो०—पोषन करि उपमेय को, दूषन दै उपमान।
नहिँ समान कहिये तहाँ, है व्यतिरेक सुजान॥ २॥
कहुँ पोषन कहुं दूषनै, कहै कहूँ नहिँ दोउ।
चारि भाँति व्यतिरेक है, यह जानत सब कोउ॥ ३॥

पोषन दूषन का उदाहरण।

दो०—लाल लाल अनुमानि कै, उपमा दीजै और।
मृदुल अधर सम होइ क्यों, बिद्रुम निपट कठोर॥ ४॥

सवै०—सखि वामैं जगै छनजोति-छटा इत पीत-
पटा दिन रैन मड़ो। वह नीर कहूँ बरसै सरसै
यह तो रस-जाल सदाही अड़ो॥ वह सेत है

विद्रुम = मूँगा। सरसै=आनन्दित करे। रस जाल=
आनन्द समूह।

जातो अपानिप ह्वै एहि रंग अलौकिक रूप गड़ो। कह दास बराबरि कौन करै घन सों घनस्याम सों बीच बड़ो ॥ ५ ॥

टि०—उपर्युक्त दोनों पदों में उपमान से उपमेय में अधिक गुण कहा गया है।

पोषन का उदाहरण।

दो०—प्रगट तीनहूँ लोक में, अचल प्रभा करि थाप।
जीत्यौ दास दिवाकरहि, श्रीरघुबीर प्रताप ॥ ६ ॥
सरस सुबास प्रसन्न अति, निसिवासर सानन्द।
ऐसे मुख को कमल सों, क्यों भाखत मतिमन्द ॥ ७ ॥

टि०—केवल उपमेय का गुण वर्णन है।

दूषण का उदाहरण।

दो०—घटै बढ़ै सकलङ्क लखि, जग सब कहै ससंक।
बालबदन सम है नहीं, रंक मयंक इकंक ॥ ८ ॥

सवै०—बारिद देखत हौं नित ही जग में तजि कै जल देत न आन है। पारस को अनुमानत हौं पहिचानत हौं तो निदान पखान है। है पशुजाति की कामदुहा कलपद्रुम बापुरो काठ प्रमान है। और मैं काहि कहौं प्रभु दूसरो दान कथान में तोहि समान है ॥ ९ ॥

टि०—उपमान में हीनता दिखाई गयी।

अपानिप=कान्ति हीन। कामदुहा=कामधेनु।

शब्द शक्ति से व्यतिरेक ।

रूपघना०—आवत है पानिप समूह सरसात नित, मानों जल-जात सो तौ न्यावही कुमति होय । दास कन्दरप के दरप को है आदरस, दर्पन समान कहे कैसे बात सति होय ॥ राधिका के आनन समान और नारिन के, आनन कहत कौन कवि कूर अति होय । पैये निशि बासर कलंक अंक जाके तन, बरने मयंक कविताई की अपति होय ॥१०॥

दो०—सब सुख सुखमा सों मढ़्यो, तेरो बदन सुबेस ।
ता सम ससि क्यों बरनिये, जाको नाम कलेस ॥११॥

व्यंगार्थ व्यतिरेक ।

दो०—कहा कंजकेसर तिन्हें, कितिक केतकीबास ।
दास बसे जे एक पल, वा पदुमिनि के पास ॥१२॥

रूपकालंकार लक्षण ।

उपमा अरु उपमेय तें, बाचक धर्म मिटाय ।
एकै करि आरोपिये, सो रूपक कविराय ॥१३॥
कहुँ कहिये यह दूसरो, कहुँ राखिये न भेद ।
अधिक हीन सब त्रिविधि पुनि, ते तद्रूप अभेद ॥१४॥

मानो=स्वीकार करूँ, मान लूँ । आदरस=आदर्श, नमूना । अपति=दुर्दशा, तौहीन ।

अधिक तद्रूप रूपकालंकार।

दो०—सत को कामद असत को, भयप्रद सब दिसि दौर।
दास याँचिबे जोग यह, कल्पवृक्ष है और ॥१५॥

टि०—इस रूपक में व्याघात की संसृष्टि है।

हीन तद्रूप रूपकालंकार।

दो०—लखि सुनि जाइ न ज्वाब दै, सहै परै कृतनीच।
बास खलन के बीच को, बिना मुये की मीच ॥१६॥

सम तद्रूप रूपकालंकार।

दो०—दृग-कैरव के दुखहरन, सीतकरन मनदेस।
यह बनिता भुअलोक की, चन्द-कला सुभ बेस ॥१७॥
कमलप्रभा नहिं हरत है, दृगन देत आनन्द।
कै न सुधाधर तियबदन, क्यों गरबित वह चन्द ॥१८॥

टि०—इसमें प्रतीप की व्यंग है।

अधिक अभेद रूपकालंकार।

सवै०—है रति को सुखदायक मोहन यों मकराकृत कुंडल साजै। चित्रित फूलन को धनु बान तन्यौ गुन भौंर की पाँति को भ्राजै। सुभ्र स्वरूपन में गनौ एक बिवेक हनै तिय सैन समाजै। दास जू आज बने ब्रज में ब्रजराज सदेह अदेह बिराजै ॥१९॥

दो०—बंधन डर नृप सों करै, सागर कहा बिचारि।
इनको पार न शत्रु है, अरु हरि गई न नारि ॥२०॥

सुधाधर=चंद्रमा। अदेह=कामदेव।

टि०—यहाँ व्यङ्गार्थ में रामचन्द्रजी को विष्णु रूप कहना वस्तु है। पर अलंकार तो रूपक नहीं शुद्धापन्हुति है।

हीन अभेद रूपकालंकार।

दो०—सब के देखत व्योमपथ, गयो सिंधु के पार।
पच्छिराज बिनु पच्छ को, बीर समीरकुमार ॥२१॥

सवै०—कंज के संपुट हैं ये खरे हिय में गड़िजात ज्यों कुंत की कोर हैं। मेरु हैं पै हरि हाथ में आवत चक्रवती पै बड़ेई कठोर हैं॥ भावती तेरे उरोजनि में गुन दास लख्यौ सब औरई और। संभु हैं पै उपजावैं मनोज सुवृत्त हैं पै परचित्त के चोर हैं ॥२२॥

टि०—इस पदमें रूपक और व्यतिरेक आदि का सङ्कर है।

पुनः त्रिविधि रूपक।

दो०—रूपक होत निरंग पुनि, परंपरित परिनाम।
अरु समस्त विषयक कहैं, बिबिधिभाँतिअभिराम॥

निरंग रूपकालंकार।

दो०—हरिमुख पंकज भ्रूधनुष, खंजन लोचन मित्त।
बिम्बअधर कुंडल मकर, बसे रहत मो चित ॥२४॥

टि०—उपमान का प्रधान गुण उपमेय पर आरोप करना भीनि रंग रूपक है।

परंपरित रूपकालंकार।

दो०—जहाँ विषय आरोपिये, और वस्तु के हेत।
स्लेष होइ कै भिन्नपद, परंपरित सो चेत ॥२५॥

टि०—मुख्य रूपक का एक दूसरा रूपक होना परम्परित रूपक है।

सब तजि दास उदासिता, राम नाम उर आनि।
ताप तिनूका तोम को, अग्नि कनूका जानि ॥२६॥

परम्परित की माला।

कवि०–कुबलय जीतबे को बोर बरिवण्ड राजैं, करन पै जाइबे को जाचक निहारे हैं। सितासित अरुनारे पानिप के राखिबे को, तोरथ के पति हैं अलेख लखि हारे हैं। बेधिबे को सर मारि डारिवे को महाविष, मीन कहिबे को दास मानस बिहारे हैं। देखतही सुबरन हीरा हरिबे को पश्यतोहर मनोहर ये लोचन तिहारे हैं ॥२७॥

भिन्नपद परम्परित।

नीति-मग मारबे को ठग हैं सुभग जिय बालक बिकल करि डारबे को टोने हैं। दीठि खग फाँदबे को लासा-भरे लागैं हिय, पींजरे में राखबे को खंजन के छोने हैं॥ दास निज प्रान गथ अन्तर तें बाहिर न, राखत हैं केहूँ कान्ह कृपिन के सोने हैं। ग्यान तरवर तोरिबे को करिवर मन रोचन तिहारे बिय लोचन सलोने हैं ॥२८॥

तिनूका=तृण, तिनका। तोम=समूह। कनूका=चिनगारी। अलेख=बहुत अधिक। पश्यतोहर=जो आँखों के सामने से चीज़ों को चुराले, जैसे सोनार आदि। छोने=बालक। गथ=मूल्य, द्रव्य। बिय=दोनों।

माला रूपकालंकार।

कवि०—जच्छिनी सुखद मो उपासना किये की सिरी, सारस हिये की दारु दुख की सुआगि है। बपुष बरत की जो बरफ बसाई सीत-दिन की रजाई जो गुनन रही तागि है॥ दास दृगमीनन की सरित सुसेल्ही प्रेम, रसिक-रसीली कब सुधारस पागि है। हाय ममगेह तमपुंज की उँज्यारी प्रान-प्यारी उतकंठा सों कबहि कंठ लागि है॥२९॥

अब तो बिहारी के वे बानक गये री तेरी, तनदुति केसरि को नैन कसमीर भो। श्रौन तुव बानीस्वातिबुन्दन को चातक भो, स्वासन को भरिबो द्रुपदजा को चीर भो॥ हिय को हरष मरु धरनि को नीर भो री, जियरो मदन तीर गन को तुनीर भो। एरी बेगि करिकै मिलाप थिर थापु नत, आप अब चाहत अतन को सरीर भो॥३०॥

परिनाम अलंकार लक्षण।

दो०—करत जु है उपमान ह्वै, उपमेयहि को काम।
नहिँ दूषन अनुमानिये, है भूषन परिनाम॥३१॥

उदाहरण।

दो०—करकंजन खंजनदृगन, ससिमुख अंजन देति।
बिज्जुहास तें दास जू, मनविहंग गहि लेत॥३२॥

सारस=कमल। तुराई=गद्दा, तोशक। सेल्ही=कंठ का भूषण। तुनीर=तरकस। अतन=कामदेव, बिना शरीर का।

समस्त विषयक रूपक लक्षण ।

दो०—सकल वस्तु तें होत जहँ, आरोपित उपमान ।
तेहि समस्त विषयक कहैं, रूपक बुद्धिनिधान ॥३३॥
कहुँ उपमा वाचक कहूँ, उत्प्रेक्षादिक होइ ।
कहूँ लिये परिनाम कहुँ, रूपक रूपक सोइ ॥३४॥

उपमा वाचक का उदाहरण ।

कवि०—नेम प्रेम साहि मति बिमति सचिव चाहि, दुकुल की सींव हाव भाव पील सरिजू । पति औ सुपति नैनगति औ तरल तुरी, सुभासुभ मनोरथ रथ रहे लरिजू ॥ आठों गाँठि धरम की आठो भाव सात्विकी त्यों, प्यादे दास दुहुंघा प्रबल भिरे अरि जू । लाज और मनोज दोऊ चतुर खेलार उर, वाके सतरंज कैसी बाजी रखी भरि जू ॥३५॥

उत्प्रेक्षा वाचक का उदाहरण ।

कवि०—धूसरित धूरि मानो लपटी विभूति भूरि, मोती माल मानहुँ लगाये गङ्ग जल सों । नीलगुन गूंथे मनिवारे आभरन कारे, डौंरू करधारे जोरि द्वैक उतपल सों । बंक बघनहिया बिराजै उर दास मानों, बाल बिधु राख्यौ जोरि दै कै भालथल

साहि=बादशाह । सचिव=मन्त्री, वज़ीर । पील=हाथी । सरि=बराबर । तुरी=घोड़ा । रथ=रुख, स्यन्दन । अरि अड़कर । नीलगुन=श्यामडोरा । गूँथे=पिरोये, गुथे ।

सों । ताके कमला के पति गेह जसुदा के फिरै, छाके गिरजा के ईस मानो हलाहल सों ॥ ३६ ॥

अपह्नुति वाचक का उदाहरण ।

कवि०—धावैं धुरवारी नदवारी असवारी की है, कारी कारी घटा न मतग मदधारी है। न्यारी न्यारी दिसि चारी चपला चमतकारी, वरनैं अनारी ए कटारी तरवारी है ॥ केकी किलकारी, दास बुंदन सरारी पौन, दुंदभी धुकारी तेवै गरज डरारी है। बिना गिरिधारी झर भारी मिस मैन ब्रजनारी-प्रानहारी देव दलन उतारी है ॥ ३७ ॥

रूपक वाचक का उदाहरण ।

गिलि गये स्वेदन जहाँई तहाँ छिलि गये, मिलि गये चन्दन भिरे हैं एहि भाय सों । गाढ़े ह्वै रहे हैं सहे सन्मुख तुकान लीक, लोहित लिलार लागी छीट अरि घाय सों ॥ श्रीमुख प्रकास तन दास रीति साधुन की, अजहूँ लौं लोचन तमीले रिसि ताय सों। सोहैं सब अङ्ग सुख पुलक सोहाये हरि, आये जीति समर समर महाराय सों ॥ ३८ ॥

ताके-कमला=लक्ष्मी के निहारने से । तुकान्त = बिना गाँसी का बाण

कवि०—केलि थल कुण्ड साजि समिध सुमन सेज, बिरह
की ज्वाल बाल बरै प्रति रोम है। उपचार आहुति
कै बैठी सखी आस पास, श्रुवा पल नैन नेह
अँसुवा अधोम है॥ बलि पशु मोद भये बिलपन
मन्त्र ठये, अवधि की आस गनि लयो दिन नौम
है। दास चलि बेग किन कीजिये सफल काम,
रावरे सदन स्याम मदन को होम है॥३९॥

परिनाम वाचक का उदाहरण

सवै०—अनीनेह नरेस की माधव बने बनी राधे मनोज की
फौज खरी। भटभेरो भयो जमुनातट दास जू साध
दूहून की सान धरी॥ उरजात चँडोलन गोल
कपोलन जौं लौं मिलाप सलाह करी। तब लौं ही
हरौल भटाछन सौं री कटाछन की तरवारि
परी॥४०॥

उल्लेखालङ्कार का लक्षण

दो०—एकै मैं बहु बोध कै, बहुगुन सो उल्लेख।
परंपरित मालानि सौं, लीन्हो भिन्न विसेख॥४१॥

एक में बहुतों का बोध

सवै०—प्रीतम प्रीति मई अनुमानै परोसिन जानै सुनीतिन
सौं ठई। लाज सनी है बड़ीनि भनी

समिध=यज्ञ की लकड़ी। श्रुवा=हवन करने का पात्र।
खरी=चोखी। भटभेर=भिड़न्त। साध=मिलने की इच्छा।
हरौल=लड़ाके भट।

बरनारिन में सिरताज गनी गई॥ राधिका को ब्रज की जुबती कहैं याहि सोहागसमूह दई दई। सोती हलाहल सौती कहैं औ सखी कहैं सुन्दरी सील सुधा मई॥४२॥

एक में बहु गण।

दो०—साधुन को सुखदान है, दुर्जन को दुखदानि।
बिप्रन बिक्रम दानप्रद, राम तिहारो पानि॥४३॥

इति श्रीकाव्यनिर्णये व्यतिरेकरूपकालंकार वर्णनं नाम दशमोल्लासः॥१०॥

अतिशयोक्ति अलंकार वर्णन।

दो०—अतिशयोक्ति बहु भाँति की, अरु उदात्त तहँ ल्याइ।
अधिक अल्प सविशेषनो, पंच भेद ठहराइ॥१॥

अतिशयोक्ति लक्षण भेद।

दो०—जहँ अत्यन्त सराहिये, अतिशयोक्ति सुकहन्त।
भेदक सम्बन्धो चपल, अक्रमाति अत्यन्त॥२॥

भेदकातिशयोक्ति, सम्बन्धातिशयोक्ति, चपलातिशयोक्ति अक्रमातिशयोक्ति और अत्यन्तातिशयोक्ति यही पाँचभेद अतिशयोक्ति अलङ्कार के हैं।

भेदकातिशयोक्ति लक्षण।

दो०—भेदकातिशय उक्ति जहँ, मग में है सब बात।
जग तें यह कछु औरई, सकल ठौर कहिजात॥३॥

सोती=धारा, प्रवाह। सौती=सवति।

उदाहरण ।

कवि०—भावी भूत वर्तमान मानवी न होइ ऐसी, देवी दानवीन हूँ सो न्यारो एक डौरई । या बिधि की बनिता जो बिधना बनायो चहै, दास तौ समुझिये प्रकासै निज बौरई ॥ कैसे लिखै चित्र को चितेरो चकिजात लखि, दिन द्वैक बीते दुति औरै और दौरई । आज भोर औरई पहर होत औरई है, दुपहर औरई रजनि होत औरई ॥४॥

टि०—और और शब्द से भेद प्रकट करना भेदकातिशयोक्ति है।

दो०—अनन्वयहु की व्यंग यह, भेदकातिसय उक्ति ।
उतहि कियो थापित निरखि, परवीनन की जुक्ति ॥५॥

संम्बन्धातिशयोक्ति लक्षण ।

दो०—संबंधातिशयोक्ति को, द्वै बिधि बरनत लोग ।
कहुँ जोग तें अजोग है, कहूँ अजोगै जोग ॥६॥

योग से अयोग का उदाहरण ।

दो०—छामोदरी उरोज तुव, होत जु रोज उतङ्ग ।
अरी इन्हैं या अङ्ग में, नहिँ समान को ढङ्ग ॥७॥

सवै०—घाघरो झीन सो सारी महीन सो, पीन नितम्बन भार उठै खचि । दास सुवास सिँगार सिँगारत बोझनि ऊपर बोझ उठै मचि ॥ स्वेद चलै मुखचन्द ते च्वै डग द्वैक धरै मग फूलन सों

मानवी=मनुष्य बाला । छामोदरी=छोटे उदरवाली ।

सचि। जात है पंकज-पात बयारि सों वा सुकुमारि
को लंक लला लचि ॥८॥

टि०—योग्य बातों में अयोग्यता प्रगट करके सुकुमारता का अतिशय वर्णन सम्बन्धातिशयोक्ति अलंकार है।

अयोग से योग का उदाहरण।

दो०—कोकनि अति सब लोक तें, सुखप्रद रामप्रताप।
बन्यो रहत जिन दंपतिन्ह, आठो पहर मिलाप ॥९॥

यहाँ चक्रवाक के जोड़े का आठों पहर मिलाप अयोग्य है उसको रामचन्द्र के प्रतापकरिके योग्य वर्णन है।

कवि०—कंचनकलित नग लालन बलित सौध, द्वारका
ललित जाकी दीपति अपार है। ताकी बर
वल्लभी विचित्र अति ऊँची जासो, निपटै नजीक
सुरपति को अगार है॥ दास जब जब जाइ सजनी
सयानी संग, रुकमिनी रानी तहाँ करत बिहार है।
तब तब सची सुर-सुन्दरी न संग में कलपतरु
फूल लै लै देती उपहार है ॥१०॥

टि०—अमरावती बहुत ऊँचे स्थल में है, उसके सम्बन्ध से द्वारकापुरी के मन्दिर की ऊँचाई वर्णन में अतिशयोक्ति है।

चपलातिशयोक्ति लक्षण।

निपट शीघ्रता सों जहाँ, बरनत हैं कछु काज।
सो चपलातिशयोक्ति है, सुनो सुकवि सिरताज ॥१६॥

बलित=युक्त, जड़ी हुई। सौध=अटारी। वल्लभी=खिड़की।

उदाहरण ।

काहू कह्यो आय कंसराय के मिलाइबे को, लेन
आयो कान्ह कोऊ मथुरा अलंग तें। त्योंही
कह्यो आली सो तौ गयो वह अब दैव, मिलै
हम कहा ऐसो मूढ़ बिन ढंग तें॥ दास कहै ता
समै सोहागिनि को कर भयो, बलयाबिगत दुहूँ
बातन प्रसंग तें। अधिक ढरकि गई आनँद उमंग
तें ॥१२॥

कवि०—तेरे योग काम यह राम के सनेही जामवन्त
कह्यौ औधिहू को द्योस दस द्वै रह्यो। एती
बात अधिक सुनत हनुमंत गिरि, सुन्दर ते कूदि
के सुबेल पर ह्वै रह्यो। दास अति गति की
चपलता कहाँ लों कहों, भालुकपिकटक अचम्भा
जकि ज्वै हर्यो। एक छिन वार पार लागीपारा-
वार के गगन मध्य कंचन धनुष ऐसो वै रह्यो॥१३

सवै०—चकि चौंकती चित्रहु के कपि सों जकि क्रूर-
कथान सुने जु डरै। सुनि भूत पिसाचन की
चरचान बिमोहित ह्वै अकुलाइ परै॥ चलिबो
सुनि पाइ दुखै तन धाम के नामहि सो श्रम भूरि-

बलया=कंकन। जकि=जजककर।

भरै। तेहि सौंपि चह्यो बन को चलिबो हियरौ धिक तू न अजौं बिहरै ॥१४॥

टि०—इन पदों में कारण के देखते ही सुनते कार्य का प्रगट होना चपलातिशयोक्ति है।

अक्रमातिशयोक्ति लक्षण।

दो०—अक्रमातिशय उक्ति जहँ, कारज कारन साथ।
भू परसत हैं साथ ही, तो सर अरु अरि-माथ ॥१५॥

उदाहरण।

कवि०—राम असि तेरी अस बैरिन को कीन्हों हाल, तातें दोऊ काज एक साथ ही सजत हैं। ज्योंही यह कोस को तजत है दयाल त्योंही, वेऊ सब निज निज कोस को तजत हैं॥ दास यह धारा को सजत जब जब तब तब वै सकल अश्रुधारा कौ सजत हैं। या को तू कँपाइ कै भजावत हौ ज्यों ज्यों त्यों त्यों, वेऊ कँपि कँपि ठौर ठौरन भजत हैं ॥१६॥

अत्युक्ति लक्षण।

दो०—जहाँ दीजिये जोग्य को, अधिक जोग्य ठहराइ।
अलंकार अत्युक्ति तहँ, बरनत हैं कविराइ ॥१७॥

उदाहरण।

सवै०—एती अनाकनी कीबो कहा रघुके कुल बीच कहाय के नायक। आपनो मेरो धौं नाम बिचारो हौं

अनाकनी=टालमटोल।

दीन अधीन तू दीन को दायक ॥ हौँतो अनाथ अनाथन में इक तेरोई नाम न दूजो सहायक। मंगन तेरे के मंगन सों कल्पद्रुम आज है माँगवे लायक ॥१८॥

दो०—सुमनमयी महि में करै, जब सुकुमारि बिहार।
तब सखियाँ सँगही फिरैं, हाथ लिये कचभार ॥१९॥

अत्यन्तातिशयोक्ति लक्षण।

दो०—जहाँ काज पहिले सधै, कारन पीछे होइ।
अत्यन्तातिसयोक्ति तेहि, बरनत हैं सब कोइ ॥२०॥

उदाहरण।

सवै०—जातें सबै हुते माह की राति निदाघ के द्यौस को साज सजावते। फेरि विदेश को नाम न लेते जो स्याम दशा यह देखन पावते ॥ दास कहा कहिये सुनिही सुनि प्रीतम आवते प्रीतम आवते। जात भयो पहिले तन-ताप औ पीछे मिलाप भयो मनभावते ॥२१॥

अन्य भेद।

दो०—अतिसयोक्ति संभावना, संकर करहु निबाहु।
उपमा और अपह्नुत्यो, रूपए उत्प्रेक्षाहु ॥२२॥

सम्भावना अतिशयोक्ति का उदाहरण।

कवि०—सागर सरित सर जहँ लौं जलासै जग, सब में जौ केहूँ किल कज्जल रलावई। अवनि अकास

निदाघ=ग्रीष्म। किल=समूह। रलावई=मिलावे।

होय कागद कलपतरु,-कलम सुमेर सिर बैठक बनवाई ॥ दास दिन रैन कोटि कलप लों सारदा सहस कर ह्वै के लिखवे में चित लावई। होइ हद काजर कलम कागदन को गुपाल गुन-गन को तऊ न हद पावई ॥२३॥

उपमा अतिशयोक्ति लक्षण।

दो०—बुधिबल तें उपमान पर, अधिक अधिकई होइ।
सो उपमातिशयोक्ति है, प्रौढ़ उक्ति है सोइ ॥२४॥

उदाहरण।

सवै०—दास कहै लगे भाँदो कुहू की अँध्यारी घटा घन से कच कारे। सूरजबिम्ब में ईंगुर बोरे बँधूक से हैं अधरा अरुनारे॥ बाड़ौ की आँच तें तापे बुझाये महाविष के जम आप सँवारे। मारन मन्त्र से बीजुरी-सान लगे ये नराच से नैन तिहारे ॥२५॥

सापन्हवातिशयोक्ति लक्षण।

दो०—जहँ दीजै गुन और को, औरहि में ठहराइ।
अतिशयोक्ति सापन्हुतिहि, बरनत हैं कविराइ ॥२६॥

उदाहरण।

सवै०—तेरोई नीके लसैं मृग नैनन तोही को सत्र सुधाधर मानै। तोही सों होति निसा हरि को हम

कुहू=अमावसकी रात। बँधूक=गुड़हर का पुष्प। बाड़ौ=बाड़वाग्नि। नराच=बाण। सत्र=क्षेत्र, भंडार।

तोही कलानिधि काम की जानै ॥ तेरो अनूपम आनन की पदवी वोहि को सब देत अयानै । तूही है बाम गोविन्द को रोचक चन्दहिँ तौ मतिमन्द बखानै ॥२७॥

रूपकातिशयोक्ति लक्षण ।

विदित जानि उपमान को, कथन काव्य में देखि ॥
रूपकातिसयउक्ति सो, बरन एकता लेखि ॥२८॥

उदाहरण ।

दो०—दास देव दुर्लभ सुधा, राहुसंक निरसंक ।
सकल कला कब ऊगिहै, बिगतकलंक मयंक ॥२९॥

सवै०—चन्द में ओप अनूप बढ़ै लगी रागन की उमड़ी अधिकाई । सोती कलिन्दिजा की कछु होति है कोकन के दरम्यान लखाई ॥ दास जू कैसी चमेली खिलै लगी फैली सुबासहु की रुचिराई । खंजन कानन ओर चले अवलोकत ही हरि साँझ सोहाई ॥३०॥

उत्प्रेक्षातिशयोक्ति का उदाहरण ।

सवै०—दास कहाँ लौं कहौं मैं वियोगिन के तनतापन की अधिकाई । सूखि गये सरिता सर सागर स्वर्ग पताल धरा अकुलाई ॥ काम के बस्य भयो सिगरो जग यातें भई मनो संभु-रिसाई । जारि कै फेरि सँवारन को छिति के हित पावक ज्वाल बढ़ाई ॥३१॥

रोचक=मन भानेवाली । ओप=कन्ति, शोभा ।

उदात्तअलंकार लक्षण ।

दो०—संपति की अत्युक्ति को, सबकवि कहैं उदात ।
जहँ उपलच्छन बड़न को, ताहू की यह बात ॥३२

सम्पति की अत्युक्ति का उदाहरण ।

दो०—जगत जनक बरनो कहा, जनक देस को ठाट ।
सहल महल हीरन बने, हाट बाट करहाट ॥३३॥

बड़ों के उपलक्षण का उदाहरण ।

दो०—भूषित संभु स्वयंभु सिर, जिनके पग को धूरि ।
हठकरि पाँव झँवावती, तिन्ह सों तिय मगरूरि ॥३४॥

कवि०—महाबीर पृथ्वीपति दल के चलत ढलकत बैज-
यन्ती खलकत जी सुरेस को । दास कहै बलकत
महा बलधीरन्ह के, धरकत उर में महीप देस देस
को ॥ फलकत पारन के भूरि धूरि धारा उठै,
तारा ऐसो झलकत मंडल दिनेस को । थलकत
भूमि हलकत भूमिधर छलकत सातो सिन्धु दलकत
फन सेस को ॥३५॥

अधिकालंकार लक्षण ।

दो०—अधिकाई आधेय की, जहँ अधार तें होइ ।
अरु अधार आधेय तें, अधिक अधिक ये दोइ ॥३६॥

सहल=स्वाभाविक । करहाट=चौकी, छतरी । झँवावती=
झाँवा से मलवाती, दबआती । खलकत=खटकता है ।
वारन=हाथी ।

आधार से आधेय की अधिकता ।

दो०—सोभा नन्दकुमार की, पारावार अगाध ।
दास ओछरे दृगन में, क्यों भरिये भरि साध ॥३७॥

आधेय से आधार की अधिकता ।

दो०—विश्वामित्र मुनीश की, महिमा अपरंपार ।
करतलगत आमलक सम, जिनके सब संसार ॥३८॥

सवै०—सातों समुद्र घिरी बसुधा यह सातों गिरीश धरे सब ओरे । सातही द्वीप सबै दरम्यान में होहिँगे खंड किते तेहि ठौरे ॥ दास चतुर्दश लोक प्रकाशित है ब्रहमंड इकीसही जोरे । एतही में भजि जैहै कहाँ खल श्रीरघुनाथ सों बैर बिथोरे ॥३९॥

दो०—सुनियत जाके उदर में, सकल लोक विस्तार ।
दास बसै तो उर सदा, सोई नन्दकुमार ॥४०॥

अल्पालंकार लक्षण उदाहरण ।

दो०—अल्प अल्प आधेय तें, सूक्ष्म होइ आधार ।
छला छगुनियाँ छोर को, भुज में करत बिहार ॥४१॥
दास परमतन सुतन-तन, भो परमान प्रमान ।
तहाँ बसतु हौ साँवरे, तुम्ह तें लघु को आन ॥४२॥

सवै०—कोऊ कहै करहाट के तन्तु में काहू परागन में अनुमानी । ढूँढ़ि फिरे मकरंद के बुंद में दास

आमलक=आँवला । करहाट=कमल का छत्ता । तन्तु=तार ।

कहै जलजात न ग्यानी ॥ छामता पाइ रमा है गई परजंक कहा करै राधिका रानी। कौल में दास निवास किये है तलास कियेहूँ न पावत प्रानी ॥४३॥

विशेषालंकार लक्षण।

दो०—अनाधार आधेय अरु, एकहि तें बहु सिद्धि।
एकै सब थल बरनिये, त्रिबिधि विशेषन वृद्धि ॥४४॥

अनाधार आधेय का उदाहरण।

दो०—सुमदाता सूरौ सुकवि, सेतु करै आचार।
बिना देहहूँ दास ये, जीवन एहि ससार ॥४५॥

एक से बहुसिद्धि का उदाहरण।

दो०—तिय तुव तरल कटाक्ष ये, सहैं धीर उर धारि।
सही मानिये तिन सह्यो, तुपक तीर तरवारि ॥४६॥

एकै सब थल का उदाहरण।

दो०—जल में थल में गगन में, जड़ चेतन में दास ॥
चर अचरन में एक ही, परमातमाप्रकास ॥ ४७ ॥

इतिश्रीकाव्यनिर्णये अतिशयोक्ति आदि अलङ्कारवर्णनं नाम एकादशमोल्लासः ॥ ११ ॥

अन्योक्त्यादि अलङ्कारवर्णन।

दो०—अप्रस्तुत परसंस अरु, प्रस्तुत अंकुर लेखि।
समासोक्ति व्याजस्तुत्यो, आक्षेपहि अवरेखि ॥१॥

छामता=दुर्बलता। कौल=कमल।

परजायोक्ति समेत किय, षट भूषन इक ठौर।
जानि सकल अन्योक्त में, सुनहुसुकविसिरमौर ॥२॥

अप्रस्तुतप्रसंसा के पाँच भेद।

दो०—कारज मुख कारन कथन, कारन के मुख काज।
कहुं सामान्य विशेष है, होत ऐस ही साज ॥३॥
कहूँ सरिस सिर डारि के, कहै सरिस सों बात।
अप्रस्तुतपरसंस के, पाँच भेद अवदात ॥४॥
दो०—कविइच्छाजिहिकथनकी, प्रस्तुत ताको जानु।
अनचाहो कहिबे परो, अप्रस्तुत सो मानु ॥५॥

अप्रस्तुतप्रशंसा लक्षण।

दो०—अप्रस्तुत के कहत हीं, प्रस्तुत जान्यो जाइ।
अप्रस्तुतपरसंस तेहि, कहत सकल कविराइ ॥६॥

प्रस्तुताकुरसमासोक्ति लक्षणम्।

दो०—दोऊ प्रस्तुत होत जहँ, प्रस्तुतअंकुर लेखि।
समासोक्ति प्रस्तुतहि ते, अप्रस्तुत अवरेखि ॥७॥
इनमें स्तुति निन्दा मिले, व्याजस्तुति पहिचान।
सब में यह योजित किये, होत अनेक बिधान ॥८॥

अप्रस्तुतप्रशंसा कारज मिस कारन कथन।

कवि०—न्हान समै दास मेरे पायन पर्यो है सिंधु,
तट नररूप ह्वै निपट बेकरार में। मैं कहो तूँ को
है कह्यो बूझत कृपा कै तौ सहाय कछु करो ऐसे

बेकरार=बेचैन।

संकट अपार में ॥ हौं तो बड़वानल बसायो हरि ही को मेरो, बिनती सुनावो द्वारिकेश दरबार में ॥ ब्रज की अहीरिनी को अँसुवाबलित आइ, जमुना जरावै मोहिमहानल झार में ॥९॥

टि०—बड़वानल का जलना कार्य कथन अप्रस्तुत है और गोपी बिरह वर्णन कारण प्रस्तुत है।

अप्रस्तुत प्रशंसा कारण मिस कारज कथन।

सवै०—जोति के गञ्ज में आधो बराइ बिरञ्चि रची वृष-भानकुमारी। आधो रह्यो फिरि ताहू में आधो लै सूरज चन्द प्रभान में डारी ॥ दास दुभाग किये उबरे को तरैयन में छवि एक की सारी। एक ही भाग तें तीनहूँ लोक की रूपवती जुवतीन सँवारी ॥१०॥

टि०—कथा कारण अप्रस्तुत है और नायिका की शोभा वर्णन प्रस्तुत कार्य है।

अप्रस्तुत प्रशंसा सामान्य मिस विशेष कथन।

सवै०—या जग में तिन्हें धन्य गनौ जे सुभाय पराये भले कहँ दौरैं। आपनो कोऊ भलो करै ताको सदा गुन माने रहैं सब ठौरैं ॥ दास जू ह्वै जो सकै तो करैं बदले उपकार के आपु करोरैं। काज हितू के लगे तन प्रान के दान तें नेकु नहीं मन मोरैं ॥११॥

बलित=मिला हुआ।

अप्रस्तुत प्रशंसा विशेष मिस समान्य कथन।

सवै०--दास परसपर प्रेम लखो गुन छीर के नीर मिले सरसात है। नीर बेंचावत आपने मोल जहाँ जहँ जाइ के आप बिकात है॥ पावक जारन छीर लगै तब नीर जरावत आपनो गात है। नीर की पीर निवारन कारन छीर घरीहि घरी उफनात है॥१२॥

अप्रस्तुतप्रशंसा तुल्य प्रस्ताव कथन।

दो०--तुहीं बिसद जस भाद्रपद, जगमें जीवन देत।
रुचै चातिकै कातिकै, बुन्द स्वाति के हेत॥१३॥

शब्दशक्ति से अन्योक्ति।

दो०--गुन करनी गजको धनी, गारोधरै सुसाज।
अहो गृही तिहि राज सों, सधै आपनो काज॥१४॥

सवै०--दास जू जाको सुभाव यहै निज अंक में डारि कितेकन्ह मारै॥ को हरुवो अरु को गरुवो को भलो को बुरो कबहूँ न बिचारै॥ और को चोठ सहाइबे काज प्रहार सहै अपने उर भारै। आइ परो खल खाली के बीच करै अब को तुअ छोह छोहारै॥१५॥

गारो=प्रतिष्ठा, मान।

प्रस्तुतांकुर कारण कारज दोनों प्रस्तुत।

दो०—दास उसासन होत है, सेत कमल बन नील।
राधे तन-आँचन अलो, सूखत अँसुवा झील ॥१६॥

टि०—बिरह का तेज आँसू का अधिकार दोनों प्रस्तुत हैं।

सवै०—आरज आइबो आली कह्यो भजि सामुहें तें गई ओट में प्यारी। एकहि एड़ी महावर दै श्रम तें दुहुँ फैली खरी अरुनारी ॥ दास न जानै धों कौने है दीबो चितै दुहुँ पायन नाइनि हारी। आपु कह्यो अरी दाहिने दै मोहि जानि परै पग बाम है भारी ॥ १७ ॥

टि०—अङ्ग की सुकुमारता और पाँव की ललाई दोनों प्रस्तुत हैं।

कवि०—सिंहिनी औ मृगिनी की ता ढिग जिकिरि कहा, बारहू मुरारहू तें खीन चित्त धरि तू। दूरही तें नेसुक नजरि-भार पावतहीं, लचकि लचकि जात जी में ग्यान करि तू ॥ तेरो परमान परिमानु के प्रमान है पै, दास कहै गरुआई आपनी सँभरि तू। तू तो मन है री वह निपटहि तनु है री, लंक पर दौरत कलंक सो तौ डरि तू ॥ १८ ॥

टि०—कटि का वर्णन और मन का वर्जन दोनों प्रस्तुत हैं।

समासोक्ति लक्षण।

दो०—जहँ प्रस्तुत में पाइये, अप्रस्तुत को ज्ञान।
कहुँ बाचक कहुँ श्लेष तें, समासोक्ति पहिचान ॥१९॥

खरी=चोखी। लङ्क=कमर।

उदाहरण ।

सवै०—आनन में झलकै श्रमसीकर औ अलकैं बिथुरी छबि छाई । दास उरोज घने थहरैं छहरैं मुकतानकी माल सोहाई ॥ नैन नचाइ लचाइ कै लंक मचाइ बिनोद बँचाइ कुराई । प्यारी प्रहार करै करकंज कहा कहौं कन्दुक-भाग भलाई ॥२०॥

टि०—कन्दुक शब्द से पुरुष का अर्थ भासित होना समासोक्ति है ।

दो०—सैशव हति जोबन भयो, अब या तन सरदार ।
छीनि पगन तें द्गन दिय, चंचलता अधिकार ॥२१॥

शैशव और यौवन भूप है । पाँव की चंचलता आँख को देना समासोक्ति है ।

श्लेष पद समासोक्ति ।

सवै०—बहु ज्ञान-कथान लै थाकिहौं मैं कुलकानिहु को बहु नेम लियो । यह तीखी चितौनि के तीरन तें भनि दास तुनीर भयोई हियो ॥ अपने अपने घर जाहु सबै अब लों सखि सीख दियो सो दियो । अब तो हरि भौंह कमानन हेत हौं प्रानन को कुरवार कियो ॥२२॥

भौंह कमान पर प्राण न्योछावर करना प्रस्तुत है, किन्तु कुरबान का धनुष म्यान भा सत होना समासोक्ति है ।

श्रमसीकर=पसीने का बुन्द । कुराई=कुरास्ता, काँटा । कुरवान=न्योछावर।

व्याजस्तुति लक्षण।

अप्रस्तुतपरसंस अरु, व्याजस्तुति की बात।
कहूँ भिन्न ठहरात अरु, कहूँ जुगल मिलि गात ॥२३॥
स्तुति निंदा के व्याज कहुँ, निंदा स्तुति के व्याज।
स्तुति अस्तुति के व्याज कहुं, निंदा साज ॥२४॥

निन्दा के वहाने स्तुति।

कवि०—भौंर-भीर तन भननाती मधुमाखी सम, कानन लौं फाटि फाटि आँखी बँधी लाज की। व्यालिनि सी बेनी खीन लंक बलहीन श्रम, लीन होत संक लहि भूषन समाज की॥ दास चित्त चोर ठहरायो उरजन जग, पाई तव पदवी कठोर सिरताज की। कौन जानै कौन धौं सुकृत की भलाई बस, भामिनी भई तू मनभाई ब्रजराज की॥ २५॥

स्तुति के बहाने निन्दा।

कवि०—गोरस को बेंचिबो बिहाय कै गँवारिन अहीरिनी तिहारे प्रेम पालिबे को क्यों अरै। एते पर चाहिये जो रावरे के कोमल हिये को नित आपने कठोर कुच सों दरै॥ दास प्रभु कीन्हीं भली दीन्हीं जो सजाय अब, नीके निशि बासर बियोगानल में जरै। एहो ब्रजराज सब राजन के राज तुम, बिनु आज एसी राजनीति और को करै ॥२६॥

व्याजस्तुति का उदाहरण ।

दो०—दास नन्द के दास को, सरि न करै पुरहूत ।
विद्यमान गिरिवरधरन, जाको पूत सपूत ॥२७॥

टि०—यहाँ नन्द की स्तुति करि के दास की स्तुति भई है उपरान्त कृष्णचन्द्र की स्तुति है ।

अमल कमल की है प्रभा, बालबदन की डौर ।
ताको नित चुम्बन करै, धन्य भाग तुत्र भौंर ॥२८॥

टि०—पहले में दोनों प्रस्तुतप्रस्तुतांकुर में मिलता है, दूसरे में बदन प्रस्तुत, अप्रस्तुतप्रशंसा में मिलता है ।

व्याजनिन्दा का उदाहरण ।

दो०—नहिँ तेरो यह बिधिहि को, दूषन काग कराल ।
जिन तोकहँ कलरवहु को, दीन्हों बास रसाल ॥२९॥
दई निरदई सों भई, दास बड़ीयै भूल ।
कमलमुखी को जिन कियो, हियो कठिनई मूल ॥३०॥

व्याजस्तुति अप्रस्तुत प्रशंसा से मिश्रित ।

दो०—बात इती तोसों भई, निपट भली करतार ।
मिथ्यावादी काग को, दीन्हों उचित अहार ॥३१॥
जाहि सराहत सुभट तुम, दसमुख बार अनेक ।
सु तो हमारे कटक में, ओछो धावन एक ॥३२॥

कवि०—काहू धनवंत को न कबहूं निहार्यो मुख, काहू
के न आगे दौरबे को नेम लियो तैं । काहू

पुरहूत=इन्द्र । डौर=डौल, रङ्गढङ्ग । कराल=भीषण । कलरव=कोकिल । रसाल=आम ।

को न रिन करै काहू के दिये ही बिन, हरो तिन असन बसन छोड़ि दियो तैं। दास निज सेवक सखा सों अति दूर रहि, लूटै सुख भूरि को हरष पूरि हियो तैं॥ सोवत सुरुचि जागि जोवतो सुरुचि धन्य, बन्धव कुरंग कहु कहा तप कियो तैं॥ ३३॥

सवै०—तैहूँ सबै उपमान तें भिन्न बिचारत ही बहु धोस मरयो पचि। दास जू देखे सुने जे कहूँ अति चिन्तन के ज्वर जात खरो तचि। सोऊ बिना अपनो अनुरूप को नायक भेंटे बिथान रही खचि। ऐ करतार कहा फल पायो तू ऐसी अपूरब रूपवती रचि॥३४॥

आक्षेपालंकार लक्षण।

दो०—जहाँ बरजिये कहि इहै, अवसिकरो यह काज।
मुकर परत जेहि बात को, मुख्य वही जहँ राज॥३५॥
दूषि आपने कथन को, फेरि कहै कछु और।
आक्षेपालंकार को, जानो तीनों ठौर॥३६॥

टि०—उक्ताक्षेप, निषेधाक्षेप और व्यक्ताक्षेप यही तीनों आक्षेप हैं।

उक्ताक्षेप का उदाहरण।

सवै०—जैये बिदेस महेस करैं उत बात तिहारी सबै

तिन=तृण, घास। कुरङ्ग=हरिन, मृग। तचि=तपना, झुलसना।

बनिआवै । प्रीतम को बरजै कछु काम में बाम अयानन को पद पावै ॥ एती बिनै करि दासिन सों कहि जाइबी नेकु बिलंब न लावै । कान्ह पयान करो तुम ता दिन मोहि लै देवनदी अन्हवावै ॥३७॥

निषेधाक्षेप का उदाहरण ।

सवै०—आजु तें नेह को नातो गयो तुम नेह गहौ हम नेम गहैंगी । दास जू भूलि न चाहिये मोहि तुम्हैं अब क्यों हूँ न हौंहूँ चहैंगी ॥ वा दिन मेरे प्रजंक में सोये हौ हैं यह दाँव लहौं पै लहौंगी । मानो भलो कि बुरो मनमोहन सेज तिहारी मैं सोयर हैंगो ॥३८॥

व्यक्ताक्षेप का उदाहरण ।

दो०—तुअमुख बिमल प्रसन्न अति, रह्यो कमल सों फूलि ।
नहिँ नहिँ पूरनचन्द सों, कमल कह्यों मैं भूलि ॥३९
जिय की जीवनमूरि मम, वा रमनी रमनीय ।
यहो कहत हौं भूलि के, दास वही मो जीय ॥४०॥

पर्जायोक्ति अलंकार लक्षण ।

दो०—कहिय लच्छना रीति लै, कछु रचना सों बैन ।
मिसुकरि कारज साधिबो, परजायोक्ति सुअैन ॥४१॥

रचना सेवचन का उदाहरण ।

सवै०—जा तुअ बेनी के बैरी के पक्ष की राजी मनोहर

देवनदी = गङ्गा । प्रजंक=पलँग । तुअ=तुम्हारा । बेनी के बैरी = मुरैला । राजी = पंक्ति, समूह ।

सीस चढ़ाई । दास जू हाथ लिये रहै कंठ उरोज भुजा चखतेरे कै भाई ॥ तेरेही रंग को जाको पटा जिन तो रद-जोति की माल बनाई । तो मुख केतो हरायल आजु दई उनको अति हायलताई ॥४२॥

मिस करि कार्य साधने का उदाहरण ।

कवि०—आजु चन्द्रभागा चंप लतिका विशाखा को पठाई हरि बाग तें कलामैं करि कोटि कोटि । साँझ समै बीथिन में ठानि दृगमीचनो भोराई तिन्ह राधे को जुगुति कै निखोटि खोटि ॥ ललिता के लोचन मिचाइ चन्द्रभागासोंदुराइवे को ल्याई वे तहाँई दास पोटि पोटि। जानि जानिधरी तिय बानी लरबरी तकि, आली तेहि घरी हँसि हँसि परी लोटिलोटि ४३

इति श्री काव्यनिर्णये अन्योक्त्यादिअलंकार वर्णनम् नामद्वाद-शोल्लासः ॥ १२ ॥

विरुद्धालंकार वर्णन

दो०—विविधविरुद्ध विभावना, व्याघातहि उर आनि ।
बिसेषोक्तिरु असंगत्यो, विषम समेत छ जानि ॥१॥

हरायल=परास्त करनेवाले। हायलताई=परेशानी, हार। कलामैं=बात, वादा। दृगमीचनी=आँखमुदौअल। निखोटि=खुल्लमखुल्ला। खोटि=ख़राब। पोटि पोटि=मिला मिला।

विरुद्धालंकार लक्षण ।

दो०–कहत सुनत देखत जहाँ, है कछु अनमिल बात ।
चमत्कारजुत अर्थजुत, सो विरुद्ध अवदात ॥२॥
जातिजाति गुन जाति अरु, क्रियाजाति अवरेखि ।
जातिद्रव्य गुनगुन क्रिया, क्रिया क्रिया गुन लेखि ॥३॥
क्रिया द्रव्य गुन द्रव्य अरु, द्रव्यद्रव्य पहिचानि ।
ये दस भेद विरुद्ध कै, गने सुमति उर आनि ॥४॥

जाति से जाति का विरोध

दो०–प्रानन हरत न धरत उर, नेकु दया को साज ।
एरी यह द्विजराज भो, कुटिल कसाई आज ॥५॥

जाति से क्रिया का विरोध ।

दो०–दरसावत थिर दामिनी, केलि तरुन दुति देत ।
तिलप्रसून सुरभित करत, नूतनबिधि झखकेत ॥६॥

कवि०–पंगुन को पग होत अंधन को आसा-मग, एकै जान ह्वै कै जग कीरति चलाई है। बिरचै बितान बैजयंती वार गहै थामै, बास सी बिलासी विश्व विदित बड़ाई है ॥ छाया करै जग को थहाया करै ऊँच नीच पाई जेहि बन्स में यों बढ़ती सुहाई है। कान्हमुख लागि करै करम

द्विजराज=चन्द्रमा, ब्राह्मण, गरुड़ । झखकेत=कामदेव । जान=विमान, रथ, पालकी आदि । बैजयन्ती=लाठी । बढ़ती = उन्नति, वृद्धि ।

कसाइन को, वाही बंस बाँसुरी जनम जरि जाई है ॥७॥

जाति से द्रव्य विरोध।

दो०—चंदकलङ्कित जिन्ह कियो, कियो सकंट मृनार।
वहै बुधनि बिरही करै, अविवेकी करतार ॥८॥

गुण से गुण विरोध।

दो०—प्रिया फेरि कहिवैसही, करिविय लोचनलोल।
मोहि निपट मीठो लगै, यह तेरी कटु बोल ॥९॥

क्रिया से क्रिया विरोध।

दो०—शिव साहिब अचरज भरो, सकल रावरो अङ्ग।
क्यों कामहिं जारयोकियो, क्यों कामिनि अरधंग॥१०॥

गुण से क्रिया विरोध।

सवै०—दच्छिन पौन त्रिसूल भयो त्रिगुनै नहिँ जानै कि सूल है कैसो। सीरो मलै जगती में बहै दुख देन को भो अहि संगी अनैसो॥ बारिज हू विष रीति लियो अब दास भयो यह अवसर ऐसो। जाहि पियूष मयूष कहैं वह काम करै रजनीचर कैसो॥११॥

गुण से द्रव्य विरोध।

दो०—दास छोड़ि दासीपनो, कियो न दूजो तंत।
भावी-बस तेहि कूबरी, लहया कंत जगकंत ॥१२॥

मृनार=मृणाल, कमलनाल। बुधनि=पण्डितों वा विद्वानों को। विय=दोनों। सीरो=शीतल। मलै=मलय, सुगन्ध। जगती=पृथ्वी। अनैसो=दुष्टता करने वाला।

क्रिया से द्रव्य विरोध।

दो०—केस मेद कच हाड़ जो, बवै तृबेनी खेत।
दास कहा कौतुक कहौं, सुफल चारिलुनिलेत॥१३॥

द्रव्य से द्रव्य विरोध।

दो०—ज्यों पट लियो बघम्बरी, सज्यो चन्द्रवत भाल।
डमरु व्यालत्यों संग्रहो, तजिमुरली बनमाल॥१४॥

सवै०—नेह लगावत रूखी परीतन देखिगही अति उन्नत-ताई। प्रीति बढ़ावत बैर बढ़ायो तू कोमल बानि गही कठिनाई॥ जेती करी अनभावती तू मन-भावती तेती सजाइ को पाई। भाकसी-भौन भयो ससि सूर मलै विष ज्यों सरसेज सोहाई॥१५॥

विभावनालंकार वर्णन।

दो०—बिनुकैलघु कारनन्ह तें, कारज परगट होइ।
रोकतहू करि कारनी, वस्तुन्ह तें विधि सोइ॥१६॥

विशेष।

किसी घटना के कारण के सम्बन्ध में कोई विलक्षण कल्पना करना विभावना अलंकार है। मुद्रित प्रतियों से हस्तलिखित प्रति में यहाँ कई दोहे अधिक हैं, जो प्रसंगानुकूल उपयुक्त जान पड़ते हैं। परन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि वे दास कवि के बनाये हैं या किसी और के हैं। हम उन दोहों को यथा-तथ्य उद्धृत करते हैं, विज्ञ पाठक इसका स्वयम् विचार कर लेंगे।

लुनिलेत=लवता है, करता है। भाकसी-भौन=भरसाई का घर। मलै=सुगन्ध। सरसेज=बाण शय्या।

कारन तें कारज कछू, कारजहीं तें हेतु।
होती छः बिधि बिभावना, उदाहरन कहि देतु ॥१७॥

प्रथम विभावना का उदाहरण।

कवि०—पीरीहोत जात दिन रजनो के रंग बिन मन रहै बूड़त तरत बिनु बारिहीं। बिस के बगारे बिनु वाके सब अंगन्ह बिसारे करि डारे हैं बिलोकनि तिहारिहीं॥ दास बिनु चले ब्रज बिनहीं चलाये यह, चरचा चलैगी लाल बीते दिन चारिहीं। हाय वह बनिता बरी है बिनु बारेहीं जरी है बिनु जारेहीं मरी है बिनु मारिहीं ॥१८॥

टि०—इस कवित्त में बिना कारण के कार्य की सिद्धि है।

द्वितीय विभावना का उदाहरण।

सवै०—राखत है जग को परदा कहँ आपु सजे दिग अम्बर राखैं। भाँग बिभूति भँडार भरो पै भरैं गृह दास के जो अभिलाखैं॥ छाँह करैं सिगरे जग को निज छाँह को चाहत हैं बटसाखैं। बाहन है बरदा इक पै बरदायक बाजि औ बारन लाखैं ॥१९॥

पीरी = पीली। बूड़ततरत = बुड़त उतरात। विस = विष। बगारे = फैलाये। बिसारे = विषैले। दिगअम्बर = विना वस्त्र। बारन = हाथी। गुन = तागा। राखैं = राख। साखे = डाली।

टि०—यहाँ अपूर्ण कारण से कार्य का सिद्ध होना वर्णन है।

तृतीय विभावना का उदाहरण।

दो०—तुव बेनी ब्याली रहै, बाँधो गुनन्ह बनाइ।
तऊ बाम ब्रज चन्द्र को, बदाबदी डसि जाइ ॥२०॥

टि०—वेणी रूपिणी नागिन धागों से खूब बँधी रहने पर ललकार कर ब्रजचन्द्र को डस लेती है। रुकावट रहते कार्य्य का होना वर्णन है।

चतुर्थ विभावना का उदाहरण

सवै०—पाहन पाहन तें कढ़ै पावक केहू कहू यह बात फबै सी। काठहू काठ सों भूठो न पाठ प्रतीति परै जग जाहिर जैसी ॥ मोहन पानिप के सरसे रसरंग की राधे तरंगिनि ऐसी। दास दुहूँ को लगालगी में उपजी यह दारुन आगि अनैसी ॥२१॥

टि०—मोहन की शोभा की अधिकता पर राधिका को प्रीति की नदी कहना रूपक का अपरांग है। प्रीति भीषण अग्नि उत्पन्न करने का कारण नहीं है यही वर्णन किया गया है।

पुनः

दो०—श्रीहिन्दूपति तेगतुअ, पानिपभरी सदाहिँ।
अचरज याकीआँचसों, अरिगन जरिजरिजाहिँ ॥२२॥

वाम=टेढ़ी। बदाबदी=ललकार कर। पाहन=पत्थर तरंगिनि=नदी। लगालगी=परस्पर प्रेम।

पंचम विभावना का उदाहरण।

सवै०—सखि चैत है फूलन को करता करने सो अचेत अचैन लग्यो। कहि दास कहा कहिये कलरौहिँ जो बोलन वै कलबैन लग्यो ॥ जग प्रान कहावत पौन के गौनहुँ प्रानन्ह को दुख दैन लग्यो। यह कैसो निसाकर मोहिँ बिना पिय साँकर कै जिय लैन लग्यो ॥२३॥

पुनः

दो०—दास कहा कौतुक कहौं, डारि गरे निज हार।
जैतवार संसार को, जीति लेत यह दार ॥२४॥

टि०—दोनों छन्दों में विपरीत कारण से कार्य प्रकट होना वर्णन है।

षष्ठ विभावना का उदाहरण

दो०—चंद निरखि सकुचतकमल, नहिँ अचरज नदनंद।
यह अद्भुततियमुखकमल, निरखिजुसकुचतचंद ॥२५॥
फेरि काढ़बी बारितें, बारिजात दनुजारि।
चलि देखो दृगजेहि कढ़त, बारिजात तें बारि ॥२६॥

टि०— कार्य से कारण की उत्पत्ति वर्णन है।

व्याघात अलंकार लक्षण

दो०—जाहि तथाकारी गनै, करै अन्यथा सोउ।
काहू सुद्ध बिरुद्ध सों, है व्याघातै दोउ ॥२७॥

कलरौहिँ=कोकिलों को। कलवैन=सुन्दर बाणी। निसाकर=चन्द्रमा। साँकर=संकट। जैतवार=जीतनेवाला दार=स्त्री। बारिजात=कमल। दनुजारि=श्रीकृष्णचन्द्र। तथाकारी=सच्चाकर्त्ता।

प्रथम व्याघात का उदाहरण

दो०—जेजे बस्तु सँयोगिनिन्ह, होत परम सुखदानि।
ताही चाहि वियोगिनिन्ह, होत प्रान की हानि ॥२८॥
दास सपूत सपूतही, गथ बल होइ न होइ।
इहै कपूतहु की दसा, भूलि न भूलै कोइ ॥२९॥
तौ सुभाव भामिनि वहै, मो हिय है सन्देह।
सौतिन्ह को रूखी करै, पिय हिय करै सनेह ॥३०॥

टि०—इन दोहों में तथाकारी का अन्यथा करना वर्णन है।

द्वितीय व्याघात का उदाहरण

दो०—लोभी धनसंचय करै, दारिद को डर मानि।
दास वहै डर मानि के, दान देत हैं दानि ॥३१॥
मुनि जन जप तप करि चहैं, सूली-दरसन चाउ।
जे हिन लहै सूली वहै, तसकर चहै उपाउ ॥३२॥

टि०—यहाँ विरुद्ध से शुद्ध का वर्णन है।

पुनः

सवै०—वा अधरारस रागी हियो जिय पागी वहै छबि दास बिसाली। नैनन्ह सूझि परै वह सूरति बैनन्ह बूझि परै वह आली॥ लोग कलंक लगावत हैं औ लुगाई कियो करैं कोटि कुचाली। बादि बिथा सखि क्यों बसिहै री गहै न भुजा भरि क्यों बनमाली ॥३३॥

चाहि=देख कर। सूली=शिव और फाँसी। रागी=प्रेमी।

विशेषोक्ति अलंकार लक्षण ।

दो०—हेतु घनेहूँ काज नहिँ, विशेषोक्ति न सँदेह ।
देह दिया निसि दिन बरै, घटै न हिय को नेह ॥३४॥

पुनः उदाहरण ।

सवै०—नाभि सरोवरी औ त्रिवली की तरंगन्ह पैरतही दिन राति है। बूड़ो रहै तन पानिपही में नहीं वनमालहु ते बिलगाति है॥ दास जू प्यासी नई अँखियाँ घनस्याम बिलोकत ही अकुलाति हैं। पीबो करैं अधरामृतहूँ को तऊ इनकी सखि प्यास न जाति है ॥३५॥

असंगति अलंकार लक्षण

दो०—जहँ कारन है और थल, कारज औरै ठाम ।
अनत करन को चाहिये, करै अनतही काम ॥३६॥
और काज करने लगै, करै जु औरै काज ।
त्रिबिधि असंगति कहत हैं, सुकविन्ह के सिरताज॥३७॥

प्रथम असंगति का उदाहरण

दो०—दास द्विजेस घरान में, पानिप बढ़्यो अपार ।
जहाँ तहाँ बूड़े अमित, बैरिन्ह के परिवार ॥३८॥

टि०—कार्य कहीं और कारण कहीं वर्णन की असंगति है।

पुनः

कवि०—रीति तुअ सौतिन की कैसी तुअ माड़ै मुख, केसरि सों उनको बदन होत पियरो। तेरे उर

नाभि=बोड़री। सरोवरी=तलैया। द्विजेस=चन्द्रमा, ब्राह्मण।

माँझ उरजातन्ह को अधिकार, उनको दरकि एकै अकुलात हियरो ॥ दास तुअ नैनन्ह में विधि ने लोनाई भरी, उनको किरिकिरी तें सूझत न नियरो । पानिप समूह सरसात तुअ अंगन्ह में, बूड़िबूड़ि आवत है उनको क्यों जियरो ॥३९॥

पुनःअन्य

सवै०—मो मति पैरन लागी अली हरि प्रेम पयोधि की बात न जानी । दास थक्यो मन संगति ह्वै गई बूड़ी सबै कुलरीति कहानी ॥ फूलि उठ्यो हियरो भरि पानिप लाजभरी बहतै उतरानी । अंग दहै उपचार की आँच सुकैसी नई भई रीति सयानी ॥४०॥

टि०—इन दोनों में भी कारण कहीं और कार्य कहीं वर्णन है।

द्वितीय असंगति का उदाहरण ।

सो०—मैं देख्या बन न्हात, रामचन्द्र तुअ अरितियन्ह ।
कटितट पहिरे पात, दृग कंकन कर में तिलक ॥४१॥

टि०—पात कटि में, कंकण आँख में और तिलक हाथ में धारण करने का स्थान नहीं है । दूसरे स्थल का दूसरी जगह वर्णन है । इसी प्रकार नीचे की सवैया में भी है ।

सवै०—लाहु कहा कर बेंदी दिये औ कहा है तरौना के बाहु गड़ाये । कंकन पीठि हिये ससिरेख

मोड़ै=लगावै । लोनाई=शोभा । सरसात=अधिकाता है । पैरन=तैरने । पानिप=पानी, कान्ति । तरौना=तरकी, कर्णफूल । गड़ाये=बाँधे ।

की बात बनै बलि मोहि बताये ॥ दास कहा गुन ओठ में अंजन भाल में जावकलीक लगाये । कान्ह सुभायही बूझत हौं मैं कहा फल नैनन्ह पान खवाये ॥४२॥

तृतीय असंगति का उदाहरण ।

दो०—प्रगट भये घनस्याम तुम, जग प्रतिपालन हेत ।
नाहक बिथा बढ़ाइ के, अबलन को जिय लेत ॥४३॥

पुनः

सवै०—आनँद-बीज बयो अँखियाँन जमाइ बिथान की जी में जई है । वेलि बढ़ाइ चवाइ कै जो ब्रजधामन धामन फैलि गई है ॥ दास देखाइ के तूँ बरि फूल फलै दियो आनक सान मई है । प्रीति बिहारी की मालिनि ह्वै एहि बारी में रीति बगारो नई है ॥४४॥

टि०—इसमें रूपक का संकर है । जगपालन के लिये प्रकट होकर अबलाओं का प्राण लेना विरुद्ध कार्य है । इसी प्रकार सवैया में भी विरुद्ध कथन है ।

विषमालंकार का लक्षण ।

दो०—अनमिल बातन्ह को जहाँ, परत कैसहूँ संग ।
कारन को रँग औरई, कारज औरै रंग ॥४५॥

जावकलोक=महावर का निशान । जई=उत्पन्न हुई । तूँबरि=तितीलौकी । आनक=दुन्दुभी, नगारा । सानमई=चोखा, देखने लायक़ ।

कर्ता को न क्रिया फलै, अनरथही फल होइ ।
विषमालंकृत तीनिबिधि, बरनत हैं सब कोइ ॥४६॥

टि०—अनमेल बातों का वर्णन प्रथम, कारण का रूप दूसरा और कार्य का दूसरा द्वितीय तथा कर्त्ता को उत्तम क्रिया से बुरा फल प्रगट होना तृतीय विषम अलंकार है ।

प्रथम विषम का उदाहरण ।

सवै०—कल कंचन सों वह अंग कहाँ औ कहाँ यह मेघन सों तनु कारो । कहँ कौलकली विकसी वह होय कहाँ तुम सोइ रहे गहि डारो ॥ नित दास जू ल्यावहि ल्याउ कहौ कछु आपनो वाको न बीच बिचारो । वह कोमल गोरी किसोरी कहाँ औ कहाँ गिरिधारन पानि तिहारो ॥४७॥

टि०—अनमोल बातों का वर्णन है ।

द्वितीय विषम का उदाहरण ।

सवै०—नैन बहैं जल कज्जलसंयुत पी अधरामृत की अरुनाई । दास भई सुधि बुद्धि हरी लखि केसरिया पट सोभ सोहाई ॥ कौन अचम्भो कहूँ अनुरागी भयो हियरो जस उज्जलताई । साँवरे रावरे नेहपगे ही परी तिय अंगन्ह में पियराई ॥४८॥

टि०—कारण का रूप और तथा कार्य का और है ।

तृतीय विषम का उदाहरण ।

दो०—सर तट जलचर हनन को, धरे हुतो बक ध्यान ।

कौल=कमल ।

लीन्हों झपटि सचान तेहि, गयो ऊपरहि प्रान ।।४९।।
तुअ कटाक्ष-डरमन दुरयो, तिमिर-केस मैं जाइ ।
तहं व्यालिन बेनी डस्यो, कीजै कहा उपाइ ।।५०।।
सिंहीसुत को मानि भय, ससा गयो ससि पास ।
ससि समेत तहँ ह्वै गयो, सिंहीसुत को ग्रास ।।५१।।
सवै०-जेहि मोहिबे काज सिँगार सज्यो तेहि देखत मोह में आय गई । न चितौनि चलाय सकी उनहीं की चितौनि के भाय अघाय गई ।। वृषभानलली की दसा यह दास जू देत ठगौरी ठगाय गई । बरसाने गई दधि बेचन को तहँ आपुही आपु बिकाय गई ।।५२।।

इतिश्री काव्यनिर्णये विरुद्धाद्यलंकार वर्णनंनाम त्रयोदशमोल्लासः ।।१३।।

उल्लास अलंकार ।

छप्पै०-बिबिध भाँति उल्लास अवग्याअनुअज्ञा गनि ।
बहुरयो लेसविचित्र तदगुनो सुगुन दास भनि ।।१।।
और अनदुगुन पूर्वरूप अनुगुन अवरेखहि ।
मिलितऔर सामान्य जानि उन्मिलितविशेषहि ।।२।।
ए होत चतुर्दश भाँति के, अलंकार सुनियेसुमति ।
सबगुनदोषादिप्रकारगनि, कियेएकहीठौरथिति ।।३।।

सचान=बाजपक्षी । तिमिर=अन्धकार, काला । ससा=खरहा । ससि=चन्द्रमा का बाहन, मृग । सिंहीसुत=सिंह ।

उल्लास अलंकार लक्षण।

दो०—औरै के गुन दोष तें, औरै के गुन दोष।
बरनत यों उल्लास है, कवि पंडित मतिकोष॥ ४॥

टि०—और के गुण से और का गुणवान होना प्रथम, दूसरे के दोष से दूसरे को दोष होना द्वितीय, दूसरे के गुण से दूसरे को दोष होना तृतीय, दूसरे के दोष से दूसरे को गुण होना चतुर्थ उल्लास अलंकार है।

प्रथम उल्लास का उदाहरण।

दो०—औरै के गुन और को, गुन पहिलो उल्लास।
दास सपूरन चंद लखि, सिंधु हिये हुल्लास॥ ५॥
कह्यो देवसरि प्रकट ह्वै, दास जोरि जुग हाथ।
भयो सीय तुव न्हान तें, मेरो पावन पाथ॥ ६॥

टि०—दूसरे के गुण से दूसरे का गुणी होना वर्णन है।

द्वितीय उल्लास का उदाहरण।

दो०—औरै के गुन और कों, दोष उलासै होत।
बारिद जग जीवन भरत, मरत आक के गोत॥७॥
बास बगारत मालती, करि करि सहज बिकास।
पिय बिहीन बनितन्हहिये, बिथा बढ़त अनयास॥८॥

टि०—दूसरे के गुण से दूसरे को दोष होना वर्णन है।

तृतीय उल्लास का उदाहरण।

दो०—उल्लासै जहँ और के, दोष और को दोष।
भयेसंकुचितकमलनिसि, मधुकर लह्यो न मोष॥९॥

टि०—दूसरे के दोष से दूसरे में दोष होना वर्णन है।

हुल्लास = आनन्द। पाथ=जल। जीवन = जल। आक=मदार। गोत=वंश। वलित=युक्त। मधुकर=भ्रमर। मोष=छुटकारा।

चतुर्थ उल्लास का उदाहरण।

दो०—दोष और के और कों, गुन उल्लासै लेखि।
रघुपति को बनवास भो, तपसिन सुखद विसेखि।१०
भलो भयो करता कियो, कंटकवलित मृनाल।
तुव भुजान समजानि कवि, उपमा देते बाल ॥११॥

संकर उल्लास लक्षण।

दो०—अप्रस्तुत परसंस जहँ, अरु अर्थान्तरन्यास।
तहाँ होत अनचाहेहूं, बिबिध भाँति उल्लास ॥१२॥

टि०—और दोष से और का गुणवान होना वर्णन है।

विविध उल्लास का उदाहरण।

सवै०—है यह तो बन बेनु को जो लखि ये सह गाँठि असार कठोरै। दास ये आपस में एहि भाँति करैं रगरो जेहि पावक दौरै॥ आपनऊँ कुल संकुल जारि जरावतु है सहबास के औरै। रे जगवंदन चंदन तोहि बिनास कियो यह ठौर कुठौरै ॥१३॥

टि०—अप्रस्तुतप्रशंसा अर्थान्तरन्यास और उल्लास का संकर है।

प्रथम अवज्ञा लक्षण उदाहरण।

दो०—औरै के गुन और को, गुनन अवज्ञा पाइ।
बड़े हमारे नैन तौ, तुम्हें कहा जदुराइ ॥१४॥

वलित=युक्त। बेनु=बाँस। असार=पोपला। संकुल=समूह। सहवास=पास के दूसरे वृक्ष।

निज सुघराई को सदा, जतन करै मतिमान।
पितु-प्रवीनता को गरब, कीबो कौन सयान ॥१५॥

टि०—दूसरे के गुण से दूसरे का गुणी न होना वर्णन है।

द्वितीय अवज्ञा लक्षण उदाहरण।

दो०—औरहि दोष न और के, दोष अवज्ञा सोउ।
मूढ़ सरित डारै सुरा, भूलि न त्यागत कोउ ॥१६॥

कवि०—आक औ कनकपात तुम जो चबात हौ तो, षट रस व्यंजन न केहूँ भाँति लटिगो। भूषन वसन कीन्हों व्याल गजखाल को तो, साल सुबरन को न धारिबो उलटिगो॥ दास के दयाल हौ सुरीतिही उचित तुम्हें, लीन्हो जौ कुरीति तौ तिहारो ठाट ठटिगो। ह्वै के जगदीस कीन्हों बाहन वृषभ को तौ, कहा सिव साहेब गयन्दन्ह को घटिगो।१७

तृतीय अवज्ञा लक्षण उदाहरण।

दो०—जहाँ दोष तें गुन नहीं, यहौ अवज्ञा दास।
जहाँ लखन को गनबसै, तहाँ न धर्म्म प्रकास।१८।
काम क्रोध मद लोभ की,जा-हिय बसी जमाति।
साधु भावती भक्ति तहँ, दास बसै केहि भाँति।१९।

चतुर्थ अवज्ञा लक्षण उदाहरण।

दो०—जहँ गुन ते दोषौ नहीं, यही अवज्ञाबेस।
राम नाम सुमिरन जहाँ, तहाँ न संकट लेस॥२०॥

साल=दुशाला। गयन्द=हाथी।

सवै०--कोरी कबीर चमारहु दास ह्वै जाट धंना सधनाहूँ कसाई। गीध गुनाहभरोई हुत्यो भरि जन्म अजामिल कीन्ही ठगाई॥ दास दई इनको गति जैसी न तैसी जपीन्ह तपीन्हहू पाई। साहेब साँचो न दोष गनै गुन एक गहै जो समेत सचाई॥२१॥

अनुज्ञा अलंकार लक्षण उदाहरण।

दो०--दोषहु में गुन देखिये, ताहि अनुज्ञा नाम।
भलो भयो मगभ्रम भयो, मिले बीच घनस्याम॥२२॥
कौन मनावै मानिनी, भई और की ओर।
लालरहे छकि लखि ललित, लालबालदृगकोर॥२३॥

टि०—मार्ग का भूलना और मानरूमी दोष का गुण मानना अनुज्ञा है।

लेसालंकार लक्षण उदाहरण।

दो०—जहाँ दोष गुन होत है, लेस वहै सुखकंद।
छीनरूप ह्वै द्वैज दिन, चन्द भयो जगबन्द॥२४॥
ललित लाल मुख मेलि कै, दियो गँवारन्ह फेरि।
लीलि न लीन्ह्यो यह बड़ो, लाभ जौहरी हेरि॥२५॥

टि०—उपर्युक्त दोहों में दोष को गुण मानना वर्णन है।

अन्यप्रकार।

दो०—गुनौ दोष ह्वै जात है, लेस रीति यह और।
फले सुहाये मधुर फल, आम गये झकझौरि॥२६॥

टि०—इसमें गुण को दोष मानना कथन है।

छकि=छकजाना, अघाना। ललित=सुन्दर। लाल=सुर्ख़। बाल=स्त्री। दृगकोर=आँख का कोना। लाल=माणिक।

विचित्रालंकार लक्षण।

दो०—करत दोष की चाह जहँ, ताही में गुन देखि।
तेहि विचित्र भूषन कहो, हिये चित्र अवरेखि ॥२७॥

उदाहरण

दो०—जीवन हित प्रानहिँ तजैँ, नवैं उँचाई हेत।
सुखकारन दुख संग्रहैं, ऐसे भृत्य अचेत ॥२८॥
दोष विरोधी केवलै, गनो न गुन उद्दोत।
कछु भूषन उद्धरन गुन, रूप रंग से होत ॥२९॥

टि०—यहाँ उद्यम से विपरीत फल चाहना कथन है।

तद्‌गुण अलंकार लक्षण

तद्गुन तजि गुन आपनो, संगति को गुन लेत।
पाये पूरबरूप फिरि, स्वगुन सुमति कहि देत ॥३०॥

उदाहरण

कवि०—पन्ना संग पन्ना ह्वै प्रकासत छनक लै कनक
रंग पुनि पै कुरंगन पलत है। अधर ललाई
लावै लाल की ललक पाये, अलक झलक मर-
कत सों ढलत है॥ ऊदो अरुनौहैं पीत पाटल
हरौहैं ह्वै कै, दुति लै दुहूंघा दास नैनन छलत है।

जीवन=ज़िन्दगी, जल। भृत्य=सेवक, नौकर। पन्ना=मरकत; जमुर्रद। कुरंगन=हरिण गण। अलक=केश। ऊदो=बैंगनी रंग। अरुनौहैं=लाल रंग के। पीत=पीली। पाटल=गुलाबी। हरौहैं=हरे रंग के।

समरथ नीके बहुरूपिया लौं थानही में, मोती
नथुनी के बर बानो बदलत है ॥२९॥

टि०—इसमें उपमा का अपरांग अङ्गाङ्गि संकर है और अपना गुण छोड़ संगगुण ग्रहण वर्णन है।

पुनः

दो०—सखि तू कहै प्रबाल भो, मुकता हाथ प्रसंग।
लख्यो दीठि चिहुँटाइ हौ, सुतो चिहुटनी रंग ॥३०॥

सवै०—भावतो आवतो जानि नवेली चमेली के कुंज जो
बैठत जाइकै। दास प्रसूनन सोनजुही करै कंचन
सी तन जोति मिलाइ कै॥ चौंकि मनोरथहू हँसि
लेन चलै पगु लाल प्रभा महि छाइ कै। बीर
करै करबीर झरै निखिलै हरखै छबि आपनी
पाइ कै ॥३१॥

अतद्गुण पूर्वरूप का लक्षण

दो०—सोइ अतद्गुन है नहीं, संगति को गुन लेत।
पूर्वरूप गुन नहिं मिटै, भये मिटन के हेत ॥३२॥

अतद्गुण का उदाहरण

सवै०—कौवा जवादिन सों उबटो सजो केसरि के अँगराग
अपारो। न्हान अनेक विधान सरै रसा

प्रवाल=मूँगा। मुकता=मोती। चिहुँटा = चिपटना, लपटना। चिहुँटनी=गुञ्जा, घुँघची। भावतो=प्रीतम। करवीर=कनैल। निखिल=समूह। अंगराग=लेप। सरै=तालाब।

सान्त लौं सान्त करै नित डारो ॥ दास जू त्यों अनुराग भरो हिय बीच बसाइ करो नहिं न्यारो । लीन सिँगार न होत तऊ तन आपनो रंग तजै नहिँ कारो ॥३३॥

टि०—इसमें संग का गुण न ग्रहण करना वर्णन है ।

पूर्वरूप का उदाहरण

सवै०—सारी सितासित पीरो रतीलिहु में बगरावै वहै छबि प्यारी । आभा समूह में अम्बर को पहिचानिये दास बड़ी किन्हवारी ॥ चन्द मरीचिन सों मिलि आँगन अंगन फैलि रहै दुति न्यारी । भौन अँध्यारहु बीच गये मुख जोति तें वैसिये होति उँज्यारी ॥३४॥

दो०—हरि खड्गी अरु ब्यालगन, आगे दौरत राज ।
राज छुटेहूँ तुअ दुवन, बन लिय राज क साज ॥३५॥

टि०—मिटने का कारण होने पर भी पहले का गुण न मिटना वर्णन है ।

अतद्गुण लक्षण उदाहरण

दो०—अनुगुन संगति तें जहाँ, पूरन गन सरसाइ ।
नील सरोज कटाच्छ लहि, अधिक नील ह्वै जाइ ॥३६॥

रतीली=शोभायुक्त । अम्बर=वस्त्र, आकाश । किन्हवारी=चिह्नवाली । मरीचि=किरण । हरि=घोड़ा । खड्गी=तलवार धारी पैदल, सवार । व्यालगन=हाथियों का झुंड । राज=शोभित । दुवन=शत्रु ।

जदपि हुती फीकी निपट, सारी केसरि रंग।
दास तासु दुति ह्वै गई, सुन्दर रंग प्रसंग ॥३७॥

टि०—सङ्ग के गुण से पूर्ण गुणवान होना वर्णन है।

मीलित और सामान्य अलंकार लक्षण

दो०—मिलित जानिये जहँ मिलै, छीर नीर के न्याय।
है सामान्य मिलै जहाँ, हीरा फटिक सुभाय ॥३८॥

मीलित का उदाहरण

सवै०—हुती बाग में लेत प्रसून अली मनमोहनऊँ तहँ आइ परयो। मनभायो घरीक भयो पुनि गेह चवाइन में मन जाइ परयो॥ द्रुत दौरि गई गृह दास तहाँ न बनाइये नेकु उपाइ परयो। धक स्वेद उसास खरोटन को कछु भेद न काहू लखाइ परयो ॥३९॥

सामान्य का उदाहरण।

दो०—केसरिया-पट कनकतन, कनकाभरन सिँगार।
गत केसर केदार में, जानी जात न दार ॥४०॥

रूपघ०—आरसी को आँगन सुहायो मन भायो न हरन में भरायो जल उज्ज्वल सुमन माल। चाँदनी विचित्र लखि चाँदनी बिछौने पर, दूरि कै सहेलिन को बिलसै अकेली बाल॥ दास आप पास बहु भाँतिन

चवाइन=चर्चा करनेवाली। धक=छाती धड़कना। स्वेद=पसीना। खरोटन=खरबोट। केदार=खेत। दार=स्त्री। आरसी=दर्पण, शीशा।

विराजैं धरे, पन्ना पुखराज मोती मानिक पदिकलाल।
चन्द्र प्रतिबिम्ब तें न न्यारो होत मुख औ न, तारे
प्रतिबिम्बन तें न्यारो होत नगजाल ॥४१॥

टि०—दो वस्तुओं का एक आकार भेद न दिखाई पड़ना वर्णन है।

उन्मीलित विशेष लक्षण

दो०—जहँ मीलित सामान्य में, भेद कछू ठहराइ।
तहँ उन्मिलित विशेष कहि बरनत सुकवि सुभाइ ॥४२॥

उन्मीलित का उदाहरण

कवि०—सिख नख फूलन तें भूषन विभूषित कै, बाँधि
लीन्ही बलया बिगत कीन्हीं बजनी। तापर सँवारे
सेत अम्बर को डम्बर सिधारी स्याम सन्निधि नि-
हारी काहू नजनी॥ छीर के तरंग की प्रभा को
गहि लीनी तिय, कीन्ही छीर सिन्धुछिति कातिक की
रजनी। आनंद प्रभा सों तन छाँहहू छपाये जात,
भौंरन की भीर संग लये जाति सजनी ॥ ४३ ॥

दो०—जमुना-जल में मिलि चली, उन अँसुवनकी धार।
नीर दूरि तें ल्याइयत, जहँ न पाइयत खार ॥४४॥

बलया=वलय, ककण। बजनी=झाँझ, पायजेब। अम्बर=वस्त्र, साड़ी। डम्बर=आडम्बर, पहिनावा,। नजनी=नाजनी, सुन्दर स्त्री। छिति=धरती।

विशेषक अलंकार का उदाहरण

दो०—मनमोहन मनमथन को, द्वै कहतो को जान।
जौ इनहूँ कर कुसुम को, होतो बान कमान ॥४५॥
भई प्रफुल्लित कमल में, मुख छबि मिलित बनाय।
कमलाकर में कामिनी, बिहरत होत लखाय ॥४६॥

इतिश्री काव्यनिर्णये उल्लासालंकारादि गुण दोष वर्णनं नाम चतुर्दशोल्लासः ॥ १४ ॥

अथ समालङ्कार आदि वर्णन

दो०—उचित अनुचितौ बात में, चमतकार लखि दास।
अरु कछु मुक्तक रीति लखि, कहत एक उल्लास ॥ १ ॥
सम समाधि परिवृत्त गनि, भाविक हरष बिषाद।
असम्भवो सम्भावना, समुच्चयो अविवाद ॥ २ ॥
अन्योन्यरु विकल्प पुनि, सह विनोक्त प्रतिषेध।
बिधि काव्यार्थापत्ति जुत, सोरह कहत सुमेध ॥ ३ ॥

समालंकार लक्षण

दो०—जाको जैसो चाहिये, ताको तैसो संग।
कारज में सब पाइये, कारनही को अंग ॥ ४ ॥

प्रथम समालंकार का उदाहरण

सवै०—अंग अंग बिराजत है उनके इनहीं के कनीनिका

मनमथन=कामदेव। मिलित=मिली हुई। कमलाकर=कमल का समूह। कामिनी=स्त्री। सुमेध=सुन्दर बुद्धि-वाले।

रंग सन्यौ। उन्हैं भौंर की भाँति बसाइबे कारन
दास इन्हैं कलकंज भन्यौ॥ लखुरी उनको बस
कीबेहि को इनको इनमें गुन जाल तन्यौ। घन-
स्याम को स्याम सरूप अली इन आँखिन के अनु-
रूप बन्यौ॥ ५॥

दो०—उद्दिमकरि जो है मिल्यो, वहै उचित धरि चित्त।
है बिषमालङ्कार को, प्रतिद्वन्दी सम मित्त॥ ६॥
हरि किरीट केकी पखन, निज लायक थल पाइ।
मिल्यो चंद्रकी चंद्रिकन, अनु अनु ह्वै मनुजाइ॥ ७॥
टि०—उपर्युक्त पदों में यथायोग्य का सङ्ग वर्णन है।

द्वितीय समालकार का उदाहरण

सवै०—चंचलता सुरबाजि तें दास जू सैलनि तें कठि-
नाई गही है। मोहन रीति महा विष की दई माद-
कता मदिरा सों लही है॥ धीवर देखि डरैं जड़
सों बिहरै जलजन्तु की रीति यही है। न्यायही
नीचन्ह संग फिरै यह इन्दिरा सागर बीच
रही है॥ ८॥

दो०—जो कानन तें उपजिकै, कानन देत जराय।
ता पावक सों उपजिघन, हनै पावकहि न्याय॥ ९॥

मधुप तुम्हैं सुधि लेन को, हम पै पठये स्याम ।
सब सुधि लै बिसुधी करी, अब बैठे केहि काम ॥१०॥

टि०—कारण के समान कार्य का वर्णन है ।

समाधि अलंकार का लक्षण

दो०—क्यों हूँ कारज को जतन, निपट सुगम ह्वै जाय ।
तासों कहत समाधि लखि, काक ताल के न्याय ॥११॥

समाधिअलंकार का उदाहरण

दो०—धीरधरहिकत करहि अब, मिलन जतनकीचाह ।
होन चहत कछु घोस में, तो मोहन को व्याह ॥१२॥

सवै०—काहे को दास महेस महेस्वरी पूजबे काज प्रसूनन तूरति । काहे को प्रात अन्हान कै तू बहु दानन दै ब्रत संजम पूरति ॥ देखु री देखु भटू भरि नैनन कोटि मनोज मनोहर मूरति । आये हैं लाल गुपाल अली जेहि लागि रहै दिन रैन बिसूरति ॥१३॥

टि०—अन्य हेतु के मिलने से कार्य का सुगम होना वर्णन है ।

परिवृत्तालंकार लक्षण

दो०—कछु लीबो दीबो अधिक, ताके बदले जान ।
अलंकार परिवृत्त तहँ, बरनत सुकबि सुजान ॥१४॥

मधुप=भ्रमर । बिसुधी=भुला दिया । काकतालीय=न्याय । तूरति=तोड़ती है । बिसूरति=सोच करती है ।

परिवृत अलंकार का उदाहरण

सवै०—तिय कंचन सों तनु तेरो उन्हें मिलबो भयो सौंतुख को सपनो। उनको नग नील सो गात है तैसही तो बस दास कहा लपनो॥ इन बातन तेरो गयो न कछू उनहीं डहकायो अली अपनो। निज हीरा अमोल दयो औ लयो यह द्वै पल को तुअ प्रेमपनो॥१५॥

टि०—अमूल्य हीरा देकर प्रेम का पना लेना 'परिवृत अलंकार है।

भाविक अलंकार लक्षण

दो०—भूत भविष्यहु बात को, जहँ बोलत ब्रतमान।
भाविक भूषन कहत हैं, ताको सुमति सुजान॥१६॥

भूत भाविक का उदाहरण

कवि०—आजु बाँकी भृकुटी गड़ी है मेरे नैन अजौं, कसकै चितौनि उर छेदि पार ह्वै भई। कज्जल जहर सों कहर करि डारे हुतो, मंद मुसुकान जो न होती वा सुधामई॥ दास अजहूँ लों दृग आगे तें न न्यारी होति, पहिरे सुरंग सारी सुंदरि वरनई। मोही मोद दैकरि सनेह बीज बैकरि

नगनील=श्यामगणि। लपनो=ललचाना। द्वैपल=दस तोला वा दो दंड। कहर=आफ़त। वरनई=वदनवाली।

जु, कज ओट कै करि चितैकरि चली गई ॥१७॥

टि०—पूर्व की बात का वर्तमान सा वर्णन है।

भविष्य भाविक का उदाहरण

सवै०—आजु बड़े बड़े भागन चाहि बिराजत मेरोई भाग बिचारो। दास जू आज दयो बिधि मोहि सुरालय के सुख तें सुख न्यारो॥ आजु मों भाल उदैगिरि में उयो पूरब पुन्य को तारो उँज्यारो। मोद में अंग बिनोद में जी चहुँकोद में चाँदनी गोद में प्यारो ॥१८॥

टि०—होनेवाली बात का वर्तमान सा वर्णन है।

प्रहर्षन अलंकार लक्षण

दो०—जतन घनी करि थापिये, बांछित योंही साज।
बांछित थोरा लाभ बहु, दैवजोग तें आजु ॥१९॥
जतन ढूंढ़ते बस्तु की, बस्तुहि आवै हाथ।
त्रिबिधिप्रहर्षन कहत हैं, लखिलखिकबिता गाथ ॥२०॥

टि०—बिना यत्न के चितचाही बात होना प्रथम, चितचाही बात से अधिक अर्थ सिद्ध होना द्वितीय और जिसको ढूँढ़ते हैं वह हाथ में आजाय तृतीय प्रहर्षण अलङ्कार है।

बैकरि=बोकर। चाहि=आशा रखकर। चहुँकोद=चारों दिशा

प्रथम प्रहर्षण का उदाहरण ।

सवै०—ज्वाल के जाल उसासन तें बढ़ै देखी न ऐसी
बिहाल बिथा ती । सीर समीर उसीर गुलाब
के नीर पटीरहु तें सरसाती ॥ श्रीब्रजनाथ सनाथ
कियो मोहि ज्याइ लियो गहि लाइ कै छाती ।
आजुही याके तनै पतनै जतनैं सब मेरी धरी रहि
जाती ॥२१॥

टि० - छाती लगने के लिये दुखी थी, बिना यत्न ब्रजराज ने छाती से लगा लिया प्रहषण है ।

द्वितीय प्रहषण का उदाहरण ।

दो०—जो परिछाहीं लखन को, हारे परिपरि पाय ।
भाग भलाई रावरी, वहै मिली अब आइ ॥२२॥

ठि०—परछाहीं देखना चाहते थे वही आकर मिल गयी अधिक अर्थ सिद्ध है ।

तृतीय प्रहर्षण का उदाहरण ।

सवै०—भोरही आइ जनीमो निहोरि कै राधे कह्यो मोहि
माधो मिलावै । ताहि तकाइ कै भौन गई वह आप
कछू करिबे को उपावै ॥ ताही समै तहँ माधौ गये
दुख राधे बियोग को वाहि सुनावै । पाइ कै सूनो
निलै मिलि दूनौं बढ़ै सुख दूनौं दुहूँ उर
लावै ॥२३॥

ती=स्त्री । सीर=शीतल । समीर=पवन । उसीर=खस । गुलाब के नीर=गुलाब जल । पटीर=चन्दन । सरसाती=बढ़ती है । तनै=रुष्ट वा उदासीन होने से । पतनै=नाश, अवनति ।जनो=दूतिका । तकाइ=दिखाकर । निलै=घरा ।

विषादनालङ्कार लक्षण उदाहरण।

दो०—सो विषाद चित चाहते, उलटो कछु ह्वै जाइ।
सुरत-समय पिकपातकी, कुहूँ दियो समझाय ॥२४॥

टि०—कुहू अमावश्या को कहते हैं। कोकिल ने सुरत समय कुहू समझा दिया। क्योंकि पर्व में सुरत का निषेध है, यह चाह से उलटा हुआ।

सवै०—मोहन आयो इहाँ सपने मुसकात औ खात बिनोद सों बीरो। बैठी हुती परजङ्क पै हौंहूँ उठी मिलबे कहँ कै मन धीरो॥ ऐसे में दास बिसासिन दासी जगायो डुलाइ केवार जँजीरो। हाय अकारथ भो सजनी मिलिबो ब्रजनाथ को हाथ को हीरो ॥२५॥

टि०—पूर्वार्द्ध के दोनों चरण में तृतीय प्रहर्षण है।

असम्भव और सम्भावनालङ्कार लक्षण।

दो०—बिन जाने ऐसो भयो, असंभवै पहिचान।
जो यों होइ तो होइ यों, संभावना सुजान ॥२६॥

असम्भवालङ्कार का उदाहरण।

दो०—छवि-मैं ह्वैहै कूबरो, पवि ह्वै हैं ये अङ्ग।
ऊधो हम जान्यो न यह, तुम ह्वै हरि सङ्ग ॥२७॥

बीरो=पान का बीड़ा। परजंक=पलँग। बिसासिन=विश्वासपात्री। पवि=वज्र।

हरि-इच्छा सब तें प्रबल, विक्रम सकल अकाथ।
को जानत लुटि जाहिँगी, अबला अर्जुन साथ।२८।

टि०—इसमें अर्थान्तरन्यास का सङ्कर है।

संभावनालङ्कार का उदाहरण।

दो०—कस्तूरीथपिनाभि बिधि, वादि दियो मृगमीच।
मैं बिधि होंउतो वहि धरौं, खलजीभन के बीच ॥२९॥
हुतो तोहि दीबे हरिहि, जौपै बिरह संताप।
कुच संकर दैबी चबलि, तो क्यों कियो मिलाप।३०।

कवि०—आई मधुजामिनी न आए मधुसूदन जू, रात न सिराति द्यौस बीतत बलाइ मैं। करते भली जो प्रान करते पयान आजु, ऐसे में न आली और देखती उपाइ मैं॥ कहा कहौं दास मेरी होती तबै निसा जब, राहु ह्वै निसाकर को ग्रसती बनाइ मैं। हर ह्वै कै जारि डारि मनमथ हरि जू के, मन मथबे को होती मनमथ जाइ मैं ॥३१॥

समुच्चयालंकार लक्षण।

दो०—एकै करता सिद्धि को, औरै होंहिँ सहाइ।
बहुत होहिँ इकबार कै, द्वै अनमिल इक भाइ ॥३२॥

अकाथ=व्यर्थ। मधुजामिनी=वसन्त की रात। निसाकर=चन्द्रमा।

ऐसी भाँतिन जानिये, समुच्चयालङ्कार।
मुख्य एक लच्छन यही, बहुत भये इक बार ॥३३॥

टि०—बहुत भावों का साथ ही गुंफन होना प्रथम और एक कार्य होने के लिये अनेक कारण का साथ होना द्वितीय समुच्चय अलंकार है।

प्रथम समुच्चय का उदाहरण।

कवि०--दौरन सितारन के तारन की तानैं मंजु, तैसिये मृदगन की धुनि धुधुकारती। चमकैं कनक नग भूषन बनकवारे, तैसी घुघुरून की झनक झनकारती। दास गरबीली पग ठौन बंक भ्रुव नैन, तैसिए चितौन सहसन मोहि मारती। बाँकी मृगनैनी की अचूक गति लीन मृदु, हीरा से हिये को टूक टूक करि डारती ॥३४॥

दो०--धन जोवन बल अज्ञता, मोह मूल इक एक।
दास मिलैं चारचो जहाँ, पैये कहाँ बिवेक ॥३५॥
नातो नीचो गर परो, कुसँग निवास कुभौन।
बंध्या तिय के कटु बचन, दुखद घायको लौन ॥३६॥
पूत सपूत सुलच्छनी, तनु अरोग धन धन्ध।
स्वामि-कृपा संगति सुमति, सोनो और सुगन्ध ॥३७॥

टि०—सोना और सुगन्ध में दृष्टान्त का, अपरांग है। सब पदों में बहु भाव का गुम्फन है।

धन्ध=व्यवसाय, काम काज। दारन=दारण, चीरने का काम। ठौन=ढंग। भ्रुव=भृकुटी।

द्वितीय समुच्चय का उदाहरण ।

दो०--संसय सकल चलाइकै,चली मिलन पिय बाम ।
अरुनबदनकरिआपनो, सौति-बदनकरिस्याम ॥३८॥

अन्योन्यलङ्कार का लक्षण उदाहरण ।

दो०--होत परस्पर जुगल सों, सो अन्योन्य सुछन्द ।
लसत चंद सों जामिनी, जामिनि हू सों चन्द ॥३९॥
मोल तौल के ठीक निज, यह किय साहस काम ।
वह निसि बढ़वत लेत गथ, कहि कहि लालहि स्याम ॥४०॥
हर की औ हरिदास की, दास परस्पर रीति ।
देत वै उन्हैं वै इन्हैं, कनक बिभूति सप्रीति ॥४१॥
ज्यों ज्यों तन धारा किये, जल प्यावति रिझवारि ।
पिये जात त्यों त्यों पथिक, बिरलो बेष सँवारि॥४२॥

कवि०--बातें स्यामा स्याम की न वैसी अब आली स्याम,
स्यामा तकि भाजैं स्यामा स्याम सों जकी रहै ।
अब तो लखोई करैं स्यामा को बदन स्याम, स्याम
के बदन लागी स्यामा की टकी रहै । दास अब
स्यामा के सुभाय मद छाके स्याम, स्यामा स्याम
सोभन के आसव छकी रहै । स्यामा के बिलोचन
के हैं री स्याम

जकी=चकपकाई हुई । मद=मदिरा । छाक=पान किये ।

तारे अरु, स्यामा स्याम-लोचन की लोहित लकीर है ॥४३॥

टि०—उपर्युक्त दोहा और कवित्त में परस्पर शोभित होना वर्णन है।

विकल्पालंकार लक्षण उदाहरण।

है विकल्प यह कै वहै, यह निश्चय जहँ राजु।
शत्रुसीस कै शस्त्र निज, भूमि गिराऊँ आज ॥४४॥

सवै०—जाइ उसासन के संग छूटि कि चचला के चय लूटि लै जाहीं ॥ चातक पातक लोहि मनो कि घनाघन जौन घने घहराहीं ॥ दास जू कौन कुतर्क कियो करै जीव है एक ही दूसरो नाहीं। पौन लै अन्तक भौन सिधारै कि मारै मनोभव लै सिर माहीं ॥४५॥

टि०—या तो वह या यह विकल्प वर्णन है।

सहोक्ति बिनोक्ति प्रतिषेध लक्षण।

दो०—कछुकछु संग सहोक्ति कछु, बिन सुभ असुभ बिनोक्ति।
यह नहिँ यह प्रत्यक्षही, कहिये प्रतिषेधोक्ति ॥४६॥

टि०—बहुत सी मनोरञ्जन बात एक साथ वर्णन सहोक्ति अलङ्कार है। बिना कुछ के वर्णनीय की शोभा न्यूनाधिक होना विनोक्ति है। प्रसिद्ध वस्तु का निषेध करना प्रतिषेध अलङ्कार है।

आसव=मदिरा। लोहित=लाल। चञ्चला=बिजली। चय=समूह। अन्तक=यमराज।

सहोक्ति अलङ्कार का उदाहरण।

सवै०—जोग बियोग खरो हम पै वह क्रूर अक्रूर के साथहि आये। भूख औ प्यास सों भोग बिलास लै दासत्वै आपने सङ्ग सिधाये। चीठी के सङ्ग बसीठी लै आइ कै ऊधो हमैं वह आजु बताये। कान्ह के सङ्ग सयान तुम्हैं निज कूबरी-कूबर बोच बिकाये ॥४७॥

फूलन के सँग फूलि है रोम परागन के सङ्ग लाज उड़ाइहै। पल्लव पुञ्ज के संग अली हियरो अनुराग के रङ्ग रँगाइ है॥ आयो बसन्त न कन्त हितू अब बीर बँदोंगी जो धीरधराइ है। साथ तरून के पातन के तरुनीन के कोप निपात ह्वै जाइहै ॥४८॥

बिनोक्ति अलंकार का उदाहरण

सवै०—सूधे सुधासने बोल सुहावने सूधो निहारबो नैन सुधो हैं। सुद्ध सरोज बँधे से उरोज हैं सूधो सुधा-निधि सों मुख जोहैं॥ दास जू सूधे सुभाय सों लीन सुधाई भरे सिगरे अँग सोंहैं। भावती चित्त भ्रमावती मेरो कहाँ ते भई ये सुधाई की भौंहैं ॥ ४९ ॥

कवि०—देसबिनु भूपति दिनेस बिनु पङ्कज फनेस बिनु मनि और निसेस बिनु जामिनी। दीप बिनु

खरो=कठिन, कड़ुआ। बसीठी=दूत। पराग=फूलों की धूलि।

नेह औ सुगेह बिनु संपति सुदेह बिनु देहीघन मेह बिनु दामिनी ॥ कबिता सुछन्द बिनु मीन जल वृन्द बिनु, मालती मलिन्द बिनु होती छवि छामिनी । दास भगवन्त बिनु संत अति व्याकुल बसन्त बिनु लतिका सुकन्त बिनु कामिनी ॥५०॥ नेगी बिनु लोभ को पटैत बिनु छोभ को तपस्वी बिनु सोभ को सतायो ठहराइये । गेह बिनु पंक को सनेह बिनु संक को सदा बिनु कलंक को सुबंस सुखदाइये ॥ विद्या बिनु दंभ सूत आलस बिहीन दूत, बिना कुव्यसन पूत मन मध्य ल्याइये । लोभ बिनु जप जोग दास देह बिनु रोग, सोग बिनु भोग बड़े भागन तें पाइये ॥५१॥

प्रतिषेध का उदाहरण

कवि०—गैअन चरैबो नहीं गिरि को उठैबो नहीं, पावक अचैबो है न पाहन को तारिबो । धनुष चढ़ैबो नहीं बसन बढ़ैबो नहीं, नाग नथि लैबो है न गनिका उधारिबो ॥ मधुसुर मारबो

नेह=तेल, घी । देही=जीव । मलिन्द=भ्रमर । छामिनी=छाम, दुर्बल । लतिका=लता । नेगी=नेगपानेवाला । पटैत=पटेबाज़, लड़नेवाला । छोभ=भय, शङ्का । सोभ=शोभा । पंक=लीपापोता, कीचड़ । सूत=सारथी, रथवाहक । पाहन=अहल्या ।

बकासुर बिदारबो न, वारन उधारबो न मन में बिचारिबो। ह्वाँते तो नजैहौ पेस सुनो राम भुवनेस, सब तें कठिन बेस मेरो क्लेस टारिबो ॥ ५२ ॥

टि०—ईश्वर भक्त भयहारी प्रसिद्ध हैं उसका प्रतिषेध वर्णन है।

विधि अलङ्कार लक्षण उदाहरण।

दो०—अलङ्कार बिधि सिद्धिको, फेरि कीजिये सिद्धि।
भूपति है भूपति वही, जाके नीति समृद्धि ॥५३॥
धरै काँच सिर औ करै, नग को पगन्ह बसेर।
काँच काँच है नग नगै, मोलतोल की बेर ॥५४॥

सवै०—रे मन कान्ह में लीन जौ होइ तौ तोहू को मैं मन में गुनि राखों। जीव जो हाथ करै ब्रजनाथ तौ तोहि मैं जीवन में अभिलाखों॥ अंग गुपाल के रंग रँगै तहूँ अङ्ग लहे को महाफल चाखों। दास जू धाम ह्वै स्याम को राखै तो तारिका तोहि मैं तारिका भाखों॥ ५५ ॥

काव्यार्थापत्ति लक्षण।

दो०—यहै भयो तो यह कहा, एहि बिधि जहाँ बखान।
कहत काव्य पद सहित तेहि, अर्थापत्ति सुजान ॥५६॥

मोलतोल=मोलचाल और नापजोख। तारिका=तारा, आँख की पुतरी।

काव्यार्थापत्ति अलङ्कार का उदाहरण ।

दो०—बन्धु जीव को दुखद है, अरुन अधर तुव बाल ।
दास देत यह क्यों डरै, पर जीवन दुख जाल ॥५७॥
मैं वारों वा बदन पर, कोटि कोटिसत चंद ।
ता पर ये वारैं कहा, दास रुपैया वृन्द ॥५८॥

सवै०—चंदकला सों कहायो कहूँ तें नखक्षत पङ्क लग्यो उर तेरे । सौतिन को मुख पूरनचन्द सो जोति बिहीन भयो जेहि नेरे । कातिकहू को कलानिधि पूरो कहा कहि सुन्दरि तो मुख हेरे । दास इहै अनुमानि कै अंग सराहिबो छोड़ दियो मन मेरे ॥ ५९ ॥

इति श्रीकाव्यनिर्णये समालङ्कारादि वर्णनं नाम पञ्च-दशमोल्लासः ॥ १५ ॥

सूक्ष्मालंकार वर्णन

दो०—सूछम पिहितो युक्ति गनि-गूढ़ोत्तर गूढ़ोक्ति ।
मिथ्याध्यवसित ललित अरु, बिवृतोक्तिव्याजोक्ति ॥१॥
परिकर परिकर-अंकुरो, इग्यारह अवरेखि ।
ध्वनि के भेदन में इन्हैं, बस्तुव्यंग कै लेखि ॥२॥

सूक्ष्मालंकार लक्षण ।

दो०—चतुर चतुर बातैं करैं, संज्ञा कछु ठहराइ ।
तेहि सूक्षम भूषन कहैं, जे प्रवीन कविराइ ॥३॥

बंधुजीव=दुपहरिया का फूल । नखक्षत=वह चिह्न जो नखों के गड़ने से हो । पङ्क=लेप ।

सूक्ष्मालंकार का उदाहरण

कवि०—आज चन्द्रभागा वहि चन्द्रबदनी पै आली,
निरति करत आये मोर के परन को। वह धौं
समुझि कहा बेनी गहि रही तब, वाहू दरसायो री
बँधूक के दरन को॥ दास वह परस्यो कहा धौं
उरजात वहि, परस्यो कहा धौं दोऊ आपने करन
को। नागरी गुनागरी चलत भई ताही छन,
गागरी लै तीर जमुनाजल भरन को॥४॥

पिहितालंकार लक्षण

दो०—जहाँ छिपी परबात को, जानि जनावै कोइ।
तहाँ पिहित भूषन कहैं, छपी पहेली सोइ॥५॥

उदाहरण

लाल–भाल रँगलाल लखि, बाल न बोली बोल।
लजित कियो ता द्दगन को, कै सामुहे कपोल॥६॥
परम पियासी पद्मद्दग, प्रविसी आतुर तीर।
अञ्जुलिभरि क्यों तजिदियो, पियो न गङ्गानीर॥७॥
केलि फैलहूँ दास जू, मनिमय मंदिर दार।
बिनपराध क्यों रमनको, कीन्हों चरनप्रहार॥८॥

निरति=प्रीति, प्रेम। बँधूक=गुड़हर, दुपहरिया का फूल। दरन=दलना, पीसना। उरजात=उरोज, कुच। करन=कान। दार=स्त्री। रमन=प्रीतम।

युक्ति अलङ्कार लक्षण ।

क्रियाचातुरी सो जहाँ, करै बात को गोप ।
ताहि उक्ति भूषन कहैं, जिन्हैं काव्य की चोप ॥ ९ ॥

युक्ति अलङ्कार का उदाहरण ।

सवै०—होरी की रैन बिताय कहूँ प्रियप्रीतम भोरहि आवत जोयो । नेकु न बाल जनाय भई जऊ कोप को बीज गयो हित बोयो ॥ दासजू दैदै गुलाल की मींस्न अंकुरबो यहि बीज को खोयो । भावते भाल को जावक ओठ को अञ्जन हू को नखक्षत गोयो ॥१०॥

गूढ़ोत्तर लक्षण ।

दो०—अभिप्राय के सहित जो, उत्तर कोऊ देइ ।
ताहि गूढ़उत्तर कहत, जानि सुमति जन लेइ ॥११॥

गूढ़ोत्तर का उदाहरण ।

सवै०—नीर के कारन आई अकेलियै भीर परे सँग कौन को लीजै । छाँउ न कोऊ न घौस कछू है अकेले उठाये घड़ो पट भींजै ॥ दास इतै लेरुवान को ल्याइ भलोजल छाँह को प्याइय पीजै । एतो निहोरो हमारो करो घट ऊपर नेकु घटो धरि दीजै ॥१२॥

जोयो=देखा । जावक=महावर । नखक्षत=नखके लगे घाव । लेरुवान=बछड़ों । निहोरो=एहसान ।

गूढ़ोक्ति लक्षण

दो०—अभिप्राय-युत जहँ कहिय, काहू सों कछु बात।
तहँ गूढ़ोक्ति बखानहीं, कबि पण्डित अवदात ॥१३॥

गूढ़ोक्ति का उदाहरण।

सवै०—दास जू न्योते गई घर की सब काल्हि तें ह्याँ न परोसिनौ आवति। हौंही अकेली कहाँ लौं रहौं इन अंधी अँधान को जी बहरावति॥ प्रीतम छाइ रह्यो परदेस अँदेस इहै जू सँदेस ना पावति। पण्डित हौ गुनमंडित हौ महिदेव तुम्हैं सगुनौतिऔ आवति ॥१४॥

मिथ्याध्यवसित लक्षण

दो०—एक झुठाई-सिद्धि को, झूठो बरनै और।
सो मिथ्याध्यवसित कहैं, भूषन कबि सिरमौर ॥१५॥

मिथ्याध्यवसित का उदाहरण

सवै०—सेज अकास के फूलन की सजि सोवती दीन्ह प्रकास किवारे। चौकी में बाँझ के पूत रहैं बहु पाय पलोटत भूमि के तारे। नीर में दास बिहार करो अहिरोम दुसालन यों सिर डारे। कौन कहै तुम झूठी कहौ मैं सदा बसती उर लाल तिहारे ॥१६॥

पलोटत=मींजत। तारे=तारागण। अहिरोम=सर्प का रोवाँ।

ललितालङ्कार लक्षण उदाहरण

दो०—ललित कह्यो जो चाहिये, कहिय तासु प्रतिबिंब ।
दीप बारि देख्यो चहै, कूर जु सूरजबिंब ॥१७॥

सवै०—कंट कटीलिका बागन में बवो दास गुलाबन दूरि कै दीजै । आजु तें सेज अँगारन की करो फूलन को दुखदानि गनीजै ॥ ऊधो अहीरन के गुरु हैं इनकी सिर आयसु मानिही लीजै । गुंजके गंज गहो तजि लालन डारि सुधा बिष संग्रह कीजै ॥१८॥

सवै०—बोलन में कल कोकिल के कुल की कलई कबधौं उघरैगी । कौन घरी यह भौन जरे उजरे में बसंत प्रभान भरैगी ॥ हाय कबै यह कूर कलङ्की निसाकर के मुख छार परैगी । प्रानप्रिया इन नैनन को केहि द्यौस कृतारथ रूप करैगी ॥१९॥

बिवृतोक्ति लक्षण

दो०—जहाँ अर्थ गूढ़ोक्ति को, कोऊ करै प्रकास ।
बिबृतोक्ति तासों कहैं, सकल सुकवि जनदास ॥२०॥

टि०—कहे हुए गुप्त अर्थ को श्लिष्ट शब्दों द्वारा कवि स्वयं खोल दे उसे बिवृतोक्ति कहते हैं ।

कंट=काँटा । कटीलिका=चोखा । बवो=बोओ । गुंज=गुञ्जा, घुंघुची । लालन=मानिकों को । कलई=ऊपरी बनावट ।

विवृतोक्ति का उदाहरण

सवै०—नैन नचौहैं हँसोहैं कपोल अनन्द सों अंगन अङ्ग अमात है। दास जू स्वेदन सोभ जगी परै प्रेम पगी सी ठगी ठहरात है॥ मोह भुलावै अटारी चढ़ी केहि कारी बगपाँति सोहात है। कारी घटा बगपाँति लखे एहि भाँति भये कहु कौन को गात है॥२१॥

दो०—किये सरस तनको रही, तन को रही न ओट।
लखिसारी कुच में लसी, कुच में लसी खरोट॥२२॥

कवि०—द्वार खरी नवला अनूपम निरखि उतरत भो पथिक तहँ तन मन हारि कै। चातुरी सों कह्यो इत रह्यो हम चाहैं नहीं, जायो जात उन्नत पयो-धर निहारि कै॥ दास तेहि उत्तर दयो है यों बचन भाखि, राखि कै सनेह सखी मति को निवारि कै। ह्याँ तो है पखान सब मसक न दैहैं कल, रहिये पथिक सुभ आश्रम बिचारि कै॥२३॥

टि०—इन दोनों छन्दों में गुप्त अर्थ को श्लिष्ट शब्दों द्वारा खोल कर वर्णन है।

व्याजोक्ति लक्षण

दो०—बचन चातुरी सों जहाँ, कीजै काज दुराय।
सो भूषन व्याजोक्ति है, सुनो सुमति-समुदाय॥२४॥

उन्नत=ऊँचे, बड़े।

व्याजोक्ति अलंकार का उदाहरण

सवै०—अबहीं कि है बात हौं न्हात हुती भ्रमते गहिरे पग जात भयो। गहि ग्राह अथाह को लैही चल्यो मनमोहन दूरहि तें चितयो॥ द्रुत दौरि कै पौरि कै दास मरोरि कै छोरि कै मोहि जिआइ लयो। इन्हें भेंटि के भेंटिहौं तोहि अली भयो आजु तो मो अवतार नयो॥२५॥

कवि०—तेरी खीझबे की रुचि रीझ मनमोहन की, यातें वहै स्वाँग सजि सजि नित आवते। आपुही तें कुंकुम की छाप नखछत गात, अंजन अधर भाल जावक लगावते॥ ज्यों ज्यों तैं अयानी अनखानी दरसावै त्यों त्यों, स्याम कृत आपने लहे को सुख पावते। उन्हें खिसिआवै दास हास जो सुनावै तुम्हें, वाहू मनभावते हमारे मन भावते॥२६॥

परिकर परिकरांकुर वर्णन

दो०—परिकर परिकर अंकुरो, भूषन युगल सुबेस।
साभिप्राय बिशेषनो, साभिप्राय विशेष॥२७॥

परिकरालङ्कार लक्षण

दो०—बर्ननीयके साज को, नाम विसेषन जानि।
सो है साभिप्राय जहँ, परिकर भूषन मानि॥२८॥

टि०—जहाँ कोई ऐसा बिशेषण लाया जाय जो उस पद

ग्राह=मगर। द्रुत=शीघ्र, जल्दी।

की क्रिया से सम्बन्ध रखता हो वह परिकर है और जहाँ क्रिया का अभिप्राय विशेष्य पद में रहता है उसको परिकरांकुर अलङ्कार कहते हैं।

परिकर अलङ्कार का उदाहरण

सवै०—भाल में जाके कलानिधि है वह साहेब ताप हमारो हरैगो। अंग में जाके विभूति भरो वहै भौन में संपति भूरि भरैगो॥ घातक है जु मनोभव को मन पातक वाही के जारे जरैगो। दास जो सीस पै गङ्ग धरे रहैं ताकी कृपा कहु को न तरैगो? ॥२९॥

टि०—सिर में गङ्ग धारण करनेवाले की कृपा से तरना ठीक ही है।

परिकरांकुर लक्षण

दो०—बर्ननीय जु विशेष है, सोई साभिप्राय।
परिकर-अंकुर कहत हैं, तिहि प्रवीन कविराय॥३०॥

परिकरांकुर का उदाहरण

सवै०—भाल में बाम के ह्वै कै बलो बिधो बाँकी भ्रुवैं बरुनीन में आइ कै। ह्वै कै अचेत कपोलन छ्वै बिछुरे अधरा को सुधा पियो धाइ कै॥ दास जू हास छटा मन चौंकि घरीक लौं ठोढ़ी के बीच बिकाइ कै। जाइ उरोज सिरै चढ़ि कूद्यो गयो कटि सों त्रिवली में नहाइ कै॥३१॥

कलानिधि=चन्द्रमा। बिधो=जड़ा हुआ। ठोढ़ी=ठुड्डी। त्रिवली=पेट पर पड़नेवाली रेखाएँ।

टि०—इसमें लुप्तोपमा का समप्रधान संकर है। यहाँ क्रिया का अभिप्राय वर्णनीय में वर्तमान है।

पुनः

बर तरुवर तुअ जन्म भो, सफल बीसहूँ बीस।
हमैं न अँबिया बाग कौ, कियो असोको ईस ॥३२॥

टि०—बर वृक्ष को स्त्री भाँवरें देती हैं और अशोक को लात मारती हैं। तरुवर और अशोक संज्ञा साभिप्राय परिकरांकुर अलङ्कार है।

इति श्रीकाव्यनिर्णये सूक्ष्मअलङ्कारादिवर्णनंनामषोडसोल्लासः ॥१६॥

—:o:—

स्वभावोक्ति अलङ्कारादि वर्णन।

दो०—स्वभावोक्ति हेतुहिसहित, जे बहुभाँति प्रमान।
काव्यलिंगनिरउक्तिगनि, अरुलोकोक्तिसुजान ॥१॥
पुनिछेकोक्ति बिचारि कै, प्रत्यनीक समतूल।
परिसंख्या प्रश्णोत्तरो, दस बाचक पदमूल ॥२॥
सत्य सत्य बरनन जहाँ, स्वभावोक्ति सो जान।
ता संगी पहिचानिये, बहुबिधि हेतु प्रमान ॥३॥

स्वभावोक्ति लक्षण

जाको जैसो रूप गुन, बरनत ताही साज।
तासों जाति स्वभाव कहि, बरनत सब कबिराज ॥४॥

स्वभावोक्ति का उदाहरण

सवै०—लोचन लाल सुधाधरबाल हुतासन ज्वाल सुभाव

अँबिया=आम। सुधाधरबाल=बालचन्द्रमा।

भरे हैं। मुंड की माल गयन्द की खाल हलाहल काल कराल गरे हैं॥ हाथ कपाल त्रिसूल जु हाल भुजान में व्याल बिसाल जरे हैं। दीन-दयाल अधीन को पाल अधंग मों बाल रसाल धरे हैं॥५॥

पुनः

कवि०—बिमल अँगोछि पोछि भूषन सुधारि सिर, आँगुरिन फोरि त्रिन तोरि तोरि डारती। उर नखछद रद छदन में रदछद, पेखि पेखि प्यारे को झकत झझकारती॥ भई अनखोहीं अवलोकत लला को फेरि, अञ्जन सँवारती दिठौना दै निहारती। गात की गुराई पर सहज भोराई पर, सारी सुन्दराई पर राई लोन वारती॥६॥

हेतु लक्षण।

दो०—या कारन को है यही, कारज यह कहि देतु।
कारज कारन एक ही, कहे जानियत हेतु॥७॥

हेतु अलङ्कार का उदाहरण।

कवि०—सुधि गई सुधि की न चेत रह्यो चेत हो में, लाज तजि दीन्हो लाज साज सब गेह को। गारी भये भूषन भयो है उपहास बास, दास कहै देह में न तेह रह्यो तेह को॥ सुख की कहानी

बास = स्थान। तेह = क्रोध, गर्व।

हमैं दुख की निसानी भई, झार भये अनिल
अनल भये मेह को। कुल के धरम भये घावरे
परम यहै, साँवरे करम सब रावरे सनेह को ॥८॥

टि०—यहाँ लक्षणाशक्ति से अतिशयोक्ति व्यंग है। यह कर्म आप के स्नेह का है। कारज कारण एक साथ वर्णन हेतु अलंकार है।

पुनः।

सवै०—आजु सयान इहै सजनी न कहूँ चलिबो न कहूँ
को बुलैबो। दास ह्याँ काहु के नाम को लीबो है
आपनी बात को पेंच बढ़ैबो॥ होत इहाँ तौ अरीति
अबै री गुपाल को आलिन ओर चितैबो। अंतर
प्रेम प्रकासक है यह तेरोई लाल को देखि
लजैबो ॥९॥

प्रमानालंकार वर्णन।

दो०—कहुँ प्रतच्छ अनुमान कहुँ, कहुँउपमान दिखाइ।
कहूँ बड़न को वाक्य लै, आत्मतुष्टि कहुँ पाइ ॥१०॥
अनुपलब्धि संभव कहूँ, कहुँ लहि अर्थापत्य।
कबि प्रमान भूषन कहैं, बात जु बरनै सत्य ॥११॥

प्रत्यक्ष प्रमाण का उदाहरण।

दो०—बाल रूप जोबनवती, भव्य तरुन को संग।
दीन्हों दई स्वतंत्र कै, सती होय केहि ढंग ॥१२॥

अनिल=पवन। अनल=अग्नि। मेह=मेघ। पेंच=उलझन। भव्य=सुन्दर। तरुन=युवा।

टि०—ये बातें प्रत्यक्ष सत्य मानी जाती हैं।

अनुमान प्रमाण का उदाहरण।

दो०--यह पावस तम साँझ नहिं, कहा दुचित मतिभूलि।
कोक असोक बिलोकिये, रहै कोकनद फूलि ॥१३॥

टि०—कोक अशोक और कमल के फूलने से दिन का अनुमान है।

उपमान प्रमाण का उदाहरण।

दो०—सहस घटन्ह में लखि परै, ज्यों एकै रजनीस।
त्यों घट घट में दास है, प्रतिबिम्बित जगदीस ॥१४॥

टि०—इसमें उपमान प्रमाण है।

शब्द प्रमाण का लक्षण।

दो०--श्रुति पुरान की उक्ति को, लोक उक्तिदै चित्त।
वाच्य प्रमान जु मानिये, शब्द प्रमान सुमित्त ॥१५॥

श्रुतिपुराणोक्ति का उदाहरण।

सो०-तुम जु हरी पर बाल, ताते हम यहि हाल में।
नाथ बिदित सब काल, जो हन्यात सो हन्यते ॥१६॥

लोकोक्ति प्रमाण का उदाहरण।

दो०--कान्ह चलो किन एक दिन, जहँ परपंचो पाँच।
देहु कहैं तो लीजियो, कहा साँच को आँच ॥१७॥

आत्मतुष्टि प्रमाण का लक्षण।

दो०—अपने अङ्ग सुभाव को, दिढ़ बिश्वास जहाहिँ।
आतम तुष्टि प्रमान कबि, कोबिद कहत तहाहिँ ॥१८॥

पावसतम=वर्षाऋतु का अन्धकार। कोक=चकवा। कोकनद=कमल। हन्यात=मारता है। हन्यते=मारा जाता है।

आत्मतुष्टि प्रमाण का उदाहरण।

मोहि भरोसो जाऊँगी, स्याम किसोरहिँ ब्याहि।
आली मों अँखियाँ नतरु, इती न रहती चाहि ॥१९॥

अनुपलब्धि प्रमाण का उदाहरण।

दो०—योंजु कहो कटि नाहिँ तो, कुच हैं केहि आधार।
परम इन्द्रजाली मदन, बिधि को चरित अपार ॥२०॥

टि०—कल्पित कारण मान लेना अनुपलब्धि है।

संभव प्रमाण का उदाहरण।

दो०—होती बिकल बिछोह की, तनक भनक सुनिकान।
मास आस दै जात हो, याहि गनो बिन प्रान ॥२१॥
उपजहिँगे ह्वै हैं अजौं, हिंदूपति से दानि।
कहियकालनिरवधिअलख, बड़ी बसुमती जानि ॥२२॥

अर्थापत्ति प्रमाण का उदाहरण।

दो०—तिय-कटिनाहिँ न जे कहैं, तिन्हैं न मति की खोज।
क्यों रहते आधार बिनु, गिरि से जुगल उरोज ॥२३॥

वचन प्रमाण का उदाहरण।

दो०—इतो पराक्रम करि गयो, जाको दूत निसंक।
कन्त कहो दुस्तर कहा, ताहि तोरिबो लंक ॥२४॥

काव्यलिङ्ग और निरुक्ति का लक्षण।

दो०—जहँ सुभाव के हेतु को, कै प्रमान जो कोइ।
करै समर्थन जुक्तिबल, काव्यलिङ्ग है सोइ ॥२५॥
कहुँ वाक्यार्थ समर्थिये, कहुँ सब्दार्थ सुजान।
काव्यलिंगकबि जुक्ति गनि, वहैनिरुक्ति न आन ॥२६॥

काव्यलिङ्ग काउदाहरण ।

सवै०—ताल तमासे कै आवत बाल को कौतुकजाल सदा सरसात है । सोर चकोरन को चहुँओर बिलोकत ही हियरो हरखात है । दास जू आनन चन्द प्रकास तें फूलो सरोज कली होइ जात है । ठौरहि ठौर बँधे अर-बिन्द मलिन्द के वृन्द घने भननात है ॥२७॥

टि०—स्वभाव समर्थन करते हुए काव्यलिंग है ।

पुनः

दो०—हिये रावरे साँवरे, यातें लगति न बाम ।
गुञ्जमाल लों अर्द्धतन, हौंहूँ होउँ न स्याम ॥२८॥

कवि०—इनहीं को छवि है तिहारे खुले बारन में, मेरो सिर छ्वै छ्वै मोरपच्छनि बताई है । आनन प्रभा को अरबिन्द जल पैठो दास, बानी बर देती कल कोकिल दुहाई है ॥ कुच की अचलता को संभु सिर लीन्हों गंग, रोमावलि हेत मधुपालि मधु ल्याई है । ह्वै हैं सौंहबादी ह्वै फिरादी ह्वाँ कमलनैनी, जिन जिन की तू यह चारुता चोराई है ॥ २९ ॥

टि०—दोहा कवित्त दोनों में युक्ति से हेतु समर्थन काव्यलिंग है ।

पुनः

सवै०—सोभा सुकेसी की केसन में है तिलोतमा

को तिल बीच निसानी। उर्वसी ही में बसी मुख
की अनुहारि सो इन्दिरा में पहिचानी ॥ जानु
को रंभा सुजान सुजान है दास जू बानी में बानी
समानी ॥ एती छबीलिन सों छबि छीनि कै एक
रची बिधि राधिका रानी ॥ ३० ॥

टि०—प्रत्यक्ष प्रमाण समर्थन युक्त काव्यलिंग है।

निरुक्ति का लक्षण उदाहरण।

दो०—है निरुक्ति जहँ नाम को जोग कल्पना आन।
दोषाकर ससि को कहैं, याही दोष सुजान ॥३१॥
बिरही नई नारीन को, यह रितु जात चबाय।
दास कहैं याको सरद, याही अर्थ सुभाय ॥३२॥

टि०—दोषाकर दोष की खान, सरद रद के सहित कल्पित अर्थ है।

पुनः

सवै०—तौ कुलकानिन की परवीनता मीन की भाँति ठगी
रहती है। दास जू याहि तें हंसहु के हिय में कछु
संक पगी रहती है ॥ है रस में गुन औगुन में रस
ह्याँ यह रीति जगी रहती है। बासरहू निसि
मानस में बनमाली की बंसी लगी रहती है ॥३३॥

इन्दिरा=लक्ष्मी । चबाय=चाब जाना । मानस=मन, सरोवर। बंसी=बाँसुरी, कँटिया ।

लोकोक्ति छेकोक्ति का लक्षण ।

दो०—सब्द जु कहिये लोकगति, सो लोकोक्ति प्रमान ।
ताहि कहत छेकोक्ति सो, लिये होइ उपखान ॥३४॥

लोकोक्ति का उदाहरण ।

दो०—बीस बिसे दस द्यौस में, आवहिँगे बलबीर ।
नैन मूँदि नव दिन सहै, नागरि अब दुखभीर ॥३५॥

छेकोक्ति का उदाहरण ।

सवै०—मो मन बाल हिरानो हुतो सो किते दिन तें मैं किती करी दौर है । सो ठहरयो तुव ठोढ़ी की गाड़ में देहि अजौं तो बड़ोई निहोर है ॥ दास प्रतच्छ भये पनहाँ अलकैं तुअ तारन दै कै अँकोर है । होत दुराये कहा अब तौ लखिगो दिलचोर तिलासन चोर है ॥३६॥

टि०—मन हेराने की बात कह कर साभिप्राय उपमान वाक्य सहना छेकोक्ति है ।

प्रत्यनीक लक्षण ।

दो०—सत्रु मित्र के पक्ष तें, किये बैर औ हेत ।
प्रत्यनीक भूषन कहैं, जे हैं सुमति सचेत ॥३७॥

शत्रुपक्षीय प्रत्यनीक का उदाहरण ।

दो०—मदन-गरब हर हरि कियो, सखि परदेस पयान ।
वहै बैर नाते अली, मदन हरत मो प्रान ॥३८॥

उपखान=कहाना । अँकोर=रिशवत ।

कवि०—तेरे हास बेसन ज्यों सुन्दर सुकेसन लौं, छीनि
छबि लीन्हीं दास चपला घनन की। जानि कै
कलापी की कुचाली तें मिलापी मोहि, लागे बैर
लेन क्रोध मेटन मनन की॥ कहियो सँदेसा
चन्द्रबदनो सों चन्द्रावलि, अजहूँ मिलै तो बात
जानिये बनन की। तो बिनु बिलोके खीन बल-
हीन साजै सब, बरषा समाजै ये इलाजै मो
हनन की॥ ३९॥

टि०—तुम्हारे बिना बलहीन खीन जान वर्षा समाज मुझे मारना चाहता है शत्रुपक्षीय वर्णन है।

मित्रपक्षीय का उदाहरण।

सवै०—प्रेम तिहारे तें प्रानपिया सब चेत की बात अचेत
ह्वै मेटति। पायो तिहारो लिख्यो कछु सो छिनही
छिन बाँचत खोलि लपेटति॥ छैल जू सैल तिहारी
सुने तेहि गैल की धूरि लै नैन धुरेटति। रावरे
ब्रङ्ग को रङ्ग बिचारि तमाल की डार भुजा भरि
भेंटति॥४०॥

टि०—तमाल से भेंटना मित्रपक्षीय प्रत्यनीक है।

परिसंख्यालंकार लक्षण।

दो०—नहीं बोलि पुनि दीजिये, क्योंहूँ कहीं लखाइ।
कहि बिसेष बरजन करै, संग्रह दोष बराइ॥४१॥

कलापी=मोर। सैरन=सैर, आगमन।

पूछ्यो अनपूछ्यो जहाँ, अर्थ समर्थन आनि ।
परिसंख्या भूषन वही, यह तजि और न जानि ॥४२॥

परिसंख्या का उदाहरण ।

दो०--आज कुटिलता कौन में, राजमनुष्यन माहिँ ।
देखो बूझि बिचारि कै, ब्यालबंस में नाहिँ ॥४३॥

पुनः

दो०--मुक्ति बेनिही में बसै, अमी बसै अधरानि ।
सुख सुंदरि-संयोगही, और ठौर जनि आनि ॥४४॥

पुनः

कवि०--भोर उठि न्हाइबे को न्हाती अँसुवानही सों, ध्याइबे को ध्यावै तुम्हें जाती बलिहारिये । खाइबे को खाती चोट पंचवान-बानन की, पीयबे को लाज धोइ पीवत बिचारिये ॥ आँख लगबे को दास लागी रहै तुम्हहीं सों, बोलबे को बोलत बिहारिये बिहारिये । सूझबे को सूझत तिहारोई सरूप वाहि, बूझबे को बूझै लाल चरचा तिहारिये ॥४५॥

प्रश्नोत्तर वर्णन दोहा ।

छोड़ि वा कह्यो वा कह्यो, प्रश्नोत्तर कहि जाइ ।
प्रस्नोत्तर तासों कहैं, जे प्रवीन कबिराइ ॥४६॥

राजमनुष्यन=राज के कर्मचारीगण । ब्यालवंस=सर्पकुल ।

प्रश्नोत्तर का उदाहरण ।

सवै०—कौन सिँगार है मोरपखा यह लाल छुटे कच
कांति की जोटी । गुंज के माल कहा यह तो
अनुराग गरे पर्‌यो लै निज खोटी ॥ दास बड़ी
बड़ी बातें कहा करौ आपने अंग की देखो करोटी ।
जानो नहीं यह कंचन से तिय के तन के कसबे
की कसोटी ॥ ४७ ॥

दो०—को इत आवत ? कान्हहौं, कामकहा ? हित मान ।
किन बोलौ ? तेरे दृगनि, साखी ? मृदु मुसकान ॥४८॥

अन्य प्रकार ।

दो०—उत्तर दीबे में जहाँ, प्रश्नौ परत लखाइ ।
प्रश्नोत्तर ताहू कहैं, सकल सुकबि समुदाइ ॥४९॥
ल्याई फूली ? साँझ को, रग दृगन में बाल ।
लखि ज्यों फूली दुपहरी, नैन तिहारे लाल ॥५०॥

इति श्रीकाव्यनिर्णये स्वभावोक्त्याद्यलंकार वर्णनं नाम ।
सप्त दशमोल्लासः ॥ १७ ॥

यथा संख्य और दीपकादि अलंकार वर्णन ।

क्रम दीपक द्वै रीति के, अलंकार मतिचारु ।
अति सुखदायक वाक्य के, जदपि अर्थ सों प्यारु ॥१॥

जोटी=ज्योति । करोटी=कालापन । दुपहरी=दुपहरिया
का फूल ।

यथासंख्य एकावली, कारन माला ठाय।
उतरोत्तर रसनोपमा रत्नावलि पर्याय ॥ २ ॥
ए सातोक्रम भेद हैं, दीपक एकै पाँच।
आदि आवृतो देहली, कारनमाला बाँच ॥ ३ ॥

यथासंख्य का लक्षण।

दो०—पहिले कहे जु सब्द गनि, पुनि क्रम तें ता रीति।
कहि कै ओर निबाहिये, यथासंख्य करि प्रीति ॥ ४ ॥

यथासंख्य का उदाहरण।

कवि०—दास मन मति सों सरीरी सों सुरति सों गिरा
सों गेहपति सों न बाँधबे की बारी जू। मोहै
मारि डारै साज सुबस उजारै करै, थंभित बनाइ
धाइ देतो बैर भारी जू। मोहन मरन बसीकरन
उचाटन के, थंभन उदीपन के एई दिढ़कारी जू ॥
बाँसुरी बजैबो गैबो चलिबो चितैबो मुसुकैबो
अठिलैबो रावरे को गिरिधारी जू ॥ ५ ॥

टि—मन मति को मोहनेवाली बाँसुरी का बजाना है। इसी क्रम से प्रत्येक गुणों का नाम लिया गया है। यथासंख्य और क्रम एक ही अलङ्कार है। दोनों नाम एक दूसरे के पर्यायी हैं।

ठाँय=ठाँव, स्थान। सरीरी=प्राण।

एकावली लक्षण उदाहरण।

दो०—किये जँजीरा जोर पद, एकावली प्रमान।
श्रुतिबसमतिमतिबसभगति, भगतिबस्यभगवान ॥ ६ ॥

कवि०—एरी तोहि देखि मोहि आवत अचभ्भो यही, रंभा जानु ढिगही गयंद गति केरे हैं। गति है गयंद सिंह कटि के समीप सिंह, कटिहू सो रोमराजी व्यालिनि सभेरे हैं ॥ रोमराजी व्यालिनि सु संभु कुच आगे दास, संभु कुचहू के भुज मैन-धुज नेरे हैं। मैनहिँ जगावति सो आनन द्विजेस अरु, आनन द्विजेस राहु कचकाँति घेरे हैं ॥७॥

कारनमाला लक्षण उदाहरण।

दो०—कारन तें कारन-जनम, कारनमाला चारु।
जोति आदि तें जोति तें, बिधि बिधि तें संसारु ॥ ८ ॥

टि०—कारण से कार्य प्रगट होकर फिर कारण हो जाना कारणमाला अलङ्कार है।

सो०—होत लोभ ते मोह, मोहहि ते उपजै गरब।
गरब बढ़ावै कोह, कोह कलह कलह बिथा ॥ ९ ॥

दो०—बिद्या देती विनय को, विनय पात्रता मित्त।
पात्रत्वै धन धन धरम, धरम देत सुखनित्त ॥१०॥

रोमराजी=रोमावली। द्विजेस=चन्द्रमा। कोह=क्रोध बिथा=पीड़ा, दुःख।

उत्तरोत्तर लक्षण

दो०—एक एक तें सरल लखि, अलंकार कहि सारु।
याही को उतरोतरै, कहैं जिन्हैं मति चारु ॥११॥

उत्तरोत्तर का उदाहरण

सवै०—होत मृगादिक तें बड़े बारन बारनवृंद पहारन हेरे। सिंधु में केते पहार परे धरती में बिलोकिये सिंधु घनेरे। लोकनि में धरती यों किती हरिवोदर में बहु लोक बसेरे। ते हरि दास बसे इन नैनन एते बड़े दृग राधिका तेरे ॥१२॥

टि०—यह भी कारण माला का एक भेद है।

पुनः

सवै०—ए करतार बिनै सुनि दास की लोकन को अवतार करो जनि। लोकन को अवतार करो तो मनुष्यनिहूँ को सँवार करो जनि। मानुषही को सँवार करो तो तिन्हें बिच प्रेम प्रचार करो जनि। प्रेम प्रचार करो तो दयानिधि क्योंहूँ बियोग-बिचार करो जनि ॥१३॥

रसनोपमा लक्षण

दो०—उपमा अरु एकावली, को संकर जहँ होय।
ताही को रसनोपमा, कहैं सुमति सब कोय ॥१४॥

बारन=हाथी।

रसनोपमा का उदाहरण

सवै०—न्यारो न होत बफारो ज्यों धूम में धूम ज्यों जात घनै घन में हिलि। दास उसास रलै जिमि पौन में पौन ज्यों पैठत आँधिन में पिलि॥ कौन जुदो करै लौन ज्यों नीर में नीर ज्यों छीर में जात खरो खिलि। त्यों मति मेरी मिली मन मेरे में मो मन गो मनमोहन सों मिलि॥१५॥

पुनः

दो०—अति प्रसन्न है कमल सों, कमलमुकुर सों बाम।
मुकुर चंद सों चंद है, तो मुखसों अभिराम॥१५॥

रत्नावली लक्षण

दो०—क्रमी वस्तुगनि विदित जो, रचि राख्यो करतार।
सो क्रम आने काव्य में, रत्नावली प्रकार॥१७॥

रत्नावली का उदाहरण

सो०—स्याम प्रभा इक थाप, जुग उर जनि तिय के कियो।
चारु पंचसर छाप, सात कुंभ के कुंभ पर॥१८॥

पुनः

सवै०—रवी सिरफूल मुखै ससि तूल महीसुत बंदन बिंदु सु भाँति। पना बुध केसर आड़

रलै=मिलै। पंचसर=कामदेव। सिरफूल=शीशफूल। पना=पनवाँ। आड़=रेखा।

गुरौ नकमोतिय शुक्र करै दुखसौंति ॥ शनी है सिँगार विधुन्तुन्द बार सजै झखकेतु सबै तन काँति। निहारिये लाल भरो सुखजाल बनी नव-बाल नवग्रह पाँति ॥१९॥

टि०—इसमें नवग्रह के नाम आये हैं।

पर्याय अलंकार लक्षण

दो२—तजि तजि आसय करन तें, है पर्जाय बिलास।
घटती बढ़ती देखि कै, कहि संकोच बिकास ॥२०॥

पर्याय का उदाहरण

सवै०—पायन कों तजि दास लगी तिय नैन बिलास करै चपलाई। पीन नितंब उरोज भये हठि कै कटि जात भई तनुताई। बोलनि बीच बसी सिसुता तन जोबन की गइ फैलि दुहाई॥ अंग बढ़्यो सु बढ़्यो अब तौ नवला छबि तो बढ़ती पर आई ॥२१॥

दो०—रह्यो कुतूहल देखबो, देखति मूरति मैन।
पलकन को लगबो गयो, लगी टकटकी नैन ॥२२॥

संकोचपर्याय का उदाहरण

कवि०—रावरो पयान सुनि सूखि गई पहिले ही, भई पुनि बिरह बिथा तें तन आधी सी। दास

विधुन्तुन्द=राहु। झखकेतु=कामदेव। करन=कर्त्ता। नितंब=चूतर। उरोज=कुच। तनुताई=लघुता, दुर्बलता। कुतूहल=तमाशा। मैन=कामदेव।

को दयाल मास बीतबे में छिन छिन, छीन परबे की रीति राधे अवराधी सी ॥ साँसरी सी छरी सी ह्वै सर सी सरी सी भई, सींक सी ह्वै लीक सी ह्वै बाँध हू सी बाधी सी। बार सी मुरार तार सी लौं तजि आवति हैं, जीवत ही ह्वै है वह प्राणायाम साधी सी ॥ २३ ॥

टि०—इसमें उपमा का संकर है।

पुनः

दो०—सब जग में हेमंत है, सिसिर सुछाँहन मीत।
रितु बसंत सब छोड़िकै, रही जलासै सीत ॥२४॥

टि०—हेमन्त में समस्त जग, शिशिर में छाया के नीचे और बसंत ऋतु में सर्वत्र छोड़ केवल जलाशयों में शीतशेष है।

विकाशपर्याय का उदाहरण

दो०—लाली हुती पियाधरहि, बढ़ी हिये लौं हाल।
अब सुबास तन सुरँग करि, लाई तुम पै लाल ॥२५॥
असुवन तें वहि नद किये, नद तें किये समुद्र।
अब सिगरो जग जलमई, करन चहत ह्वै रुद्र ॥२६॥

पुनः

कवि०—हम तुम एक हुते तन मन फेरि तुम्हैं, प्रीतम कहायो मोहि प्यारी कहवाइहै। सोऊ गयो पति

प्राणायाम=योग का चौथा अंग।

पतिनी को रह्यो नातो पुनि, पापिन हौं याहो तुम्हैं बात न दिढ़ाइहै ॥ द्वै दिना लों दास रही पतिया सँदेस आस, हाय हाय ताहू हठि रह्यो ललचाइहै। प्राननाथ कठिन पषानहू ते प्रान अबै, कौन जानै कौन कौन दसा दरसाइहै ॥२७॥

दीपकालंकार लक्षण

दो०—एक सब्द बहु में लगै, दीपक जानै सोइ।
वहै सब्द फिरि फिरि परै, आवृति दीपक होइ ॥२८॥

टि०—जहाँ उपमेय-उपमान दोनों का एक धर्म कथन हो वहाँ दीपक है और जहाँ क्रिया पदों की आवृत्ति होती है वह आवृत्ति दीपक कहा जाता है।

दीपक अलंकार का उदाहरण

दो०—रहै चकित ह्वै थकित ह्वै, समर सुन्दरी औनि।
तुअचितौनि लखिठौनि लखि, भृकुटि नौनि लखिरौनि॥
आनन आतप देखिहूँ, चलै डंक कहुँ पाइ।
सुमन अंजली लेत कर, अरुन रंग ह्वै जाइ ॥३०॥

सवै०—वाही घरी ते न सान रहै न गुमान रहै न रहै सुघराई। दास न लाज को साज रहै न

समरसुन्दरी=रति। औनि=धरती। ठौनि=ढंग। नौनि=नवना, टेढ़ाई।

रहै तन कौ घर काज की घाई । हार्दिक साधन
वारे रहै तब ही लौं भट्टू सब भाँति भलाई । देखत
कान्है न चेत रहै थिर चित्त रहै न रहै चतुराई ॥३१॥

टि०—प्रथम उदाहरण में 'रौनि' वर्ण्य है और समर-सुन्दरी कामदेव की स्त्री अवर्ण्य है। चितौनि, ठौनि आदि दोनों का एक धर्म कहा गया है पर सोहने के कारण भिन्न भिन्न हैं। इसी प्रकार अन्य उदाहरणों में वर्णन है।

अर्थावृत्ति दीपक का उदाहरण

दो०—रहै थकित ह्वै चकित ह्वै, समरसुन्दरी औनि।
तुव चितवनि लखि ठौनि तकि, निरखि तनौनि भ्रुरौनि॥

टि०—लखि, तकि, निरखि तीनों शब्दों का एक ही अर्थ है, अर्थावृत्ति दीपक है।

पुनः

सवै०—छन होत हरीरी मही को लखै निरखे छन जो छन
जोति छटा। अवलोकति इन्द्र बधून की पाँति
बिलोकति है खिन कारी घटा। तकि डार कदम्बन
की तरसै लखि दासजू नाचत मोर अटा। अध
ऊरध आवत जात भयो चित नागरि को नट
कैसो बटा ॥३२॥

टि०—उपर्युक्त दोहे के समान इसमें भी अर्थ की आवृत्ति है।

घाई=चोप, इच्छा। भट्टू=प्यारी सखी। तनौनि=तनना, बंकता।

पदार्थावृत्ति दीपक का उदाहरण

दो०—पेच छुटे चन्दन छुटे, छुटे पसीना गात।
छुटी लाज अब लाल किन, छुटे बंद कित जात ॥३४॥
तोर्यो नृपगन को गरब, तोर्यो हर को दंड।
राम जानकी जीय को, तोर्यो दुःख अखंड ॥३५॥

टि०—इसमें पद अर्थ दोनों की आवृत्ति है।

देहरी दीपक लक्षण

दो०—परै एक पद बीच में, दुहुँ दिसि लागै सोइ।
सो है दीपकदेहली, जानत है सब कोय ॥३६॥

देहरी दीपक का उदाहरण

सवै०—ह्वै नरसिंह महा मनुजाद हन्यो प्रहलाद को संकट भारी। दास विभीषनै लङ्क दियो जिन रङ्क सुदामा को संपत्ति सारी ॥ द्रौपदी चीर बढ़ायो जहान में पांडव के जस की उँजियारी। गर्बिन को खनि गर्ब बहावत दीनन को दुख श्री गिरिधारी ॥३७॥

टि०—इस सवैया के रेखाङ्कित शब्द दोनों ओर लगते हैं।

कारकदीपक लक्षण

दो०—एक भाँति के बचन को, काज बहुत जहँ होय।
कारकदीपक जानिये, कहैं सुमति सब कोय ॥३८॥

कारकदीपक का उदाहरण

दो०—ध्याइ तुम्हैं छबि सों छकति, जकति तकति मुसकाति।
भुज पसारि चौंकत चकति, पुलकि पसीजति जाति ॥३९

महामनुजाद=हिरण्यकशिपु। छकति=अघाती है।

पुनः

उठि आपुही आसन दै रस प्यार सों लाल सों आँगी कढ़ावति है। पुनि ऊँचे उरोजन दै उर बीच सुजान के मध्य मढ़ावति है॥ रस रङ्ग मचाइ नचाइ की नैनन अंग तरङ्ग बढ़ावति है। विपरीति की रीति में प्रौढ़ तिया चित चौगुनो चोप चढ़ावति है ॥४०॥

दीपक लक्षण

दो०—दीपक एकावलि मिले, मालादीपक जानि।
सतसङ्गति सङ्गति-सुमति, मतिगति गति सुखदानि ॥४१

सो०—जग की रुचि ब्रजबास, व्रज की रुचि ब्रजचंदहरि।
हरि रुचि बंसी दास, बंसी रुचिमन बाँधिबो ॥४२॥

इति श्रीकाव्यनिर्णये दीपकालंकार वर्णनं नाम अष्टदश-
मोल्लासः॥ १८ ॥

गुण निर्णय वर्णन

दो०—दस बिधि के गुन कहत हैं, पहिले सुकबि सुजान।
पुनि तीनै गुन गनि रचौ, सब तिनके दरम्यान ॥१॥
ज्यों सतजन हिय ते नहीं, सूरतादि गुन जाय।
त्यों तिदग्ध हिय में रहैं, दस गुन सहज स्वभाय ॥२॥

आँगी=अँगिया। प्रौढ़=प्रवीण, चतुर। चोप=आनन्द। विदग्ध=संतप्त।

अक्षर गुन माधुर्य अरु, ओज प्रसाद बिचारि ।
समता कान्ति उदारता, दूषन हरन निहारि ॥ ३ ॥
अर्थाव्यक्त समाधिये, अर्थहि करै प्रकास ।
वाक्यन के गुन श्लेष अरु, पुनरुक्ती परकास ॥ ४ ॥

माधुर्यगुण लक्षण ।

दो०—अनुस्वारजुत बर्ण जत, सबै बर्ग अटवर्ग ।
अक्षर जामें मृदु परै, सो माधुर्ज निसर्ग ॥ ५ ॥

माधुर्यगुण का उदाहरण ।

दो०—धरे चन्द्रिका-पंख सिर, बंसी पंकज-पानि ।
नंदनंदन खेलत सखी, वृन्द्राबन सुखदानि ॥ ६ ॥

ओज गुण लक्षण ।

दो०—उद्धत अक्षर जहँ परै, सकटवर्ग मिलि जाय ।
ताहि ओज गुण कहत हैं, जे प्रवीन कविराय ॥ ७ ॥

ओज गुण का उदाहरण ।

दो०—प्रिष्टप ठट गज घटन के, जुथ्थप उठे वरक्कि ।
पट्टत महि घन कट्टि सिर, क्रुद्धित खड्ग सरक्कि ॥ ८ ॥

प्रसाद गुण लक्षण ।

दो०—मनरोचक अक्षर परै, सोहै सिथिल सरीर ।
गुन प्रसाद जल-सुक्ति ज्यों, प्रगटै अर्थ गँभीर ॥ ९ ॥

प्रसाद गुण का उदाहरण ।

दो०—दीठि डुलै न कहूँ भई, मोहित मोहन माँहि ।
परम सुभगता निरखि सखि, धरम तजैको नाहिँ ॥ १० ॥

अटवर्ग=ट वर्गरहित ।

समता गुण लक्षण।

दो०—प्राचीनन की रीति सों, भिन्न रीति ठहराइ।
समता गुन ताको कहैं, पै दूषनन्ह बराइ ॥११॥

समता गुण का उदाहरण।

दो०—मेरे दृग कुबलयन को, होति निसा सानन्द।
सदा रहै व्रज देश पर, उदित साँवरो चन्द ॥१२॥

पुनः

कवि०—उपमा छबीली की छवा लों छूटे बारन की, ढरकि कलिन्द तें कलिन्दीधार ठहरैं। लाल सेत गुन गुही बेनी बँधे बुधजन, बरनत वाही को त्रिबेनी की सी लहरैं॥ कीन्हों काम अद्भुत मदन मरदाने यह, कहाँ तें कहाँ को ल्यायौ कैसी कैसी डहरैं। वेई स्याम अलकैं छहरि रहीं दास मेरे, दिल की दिली में ह्वै जहाँई तहाँ नहरै॥ १३॥

कान्ति गुण लक्षण।

दो०—रुचिर रुचिर बातैं करै, अर्थ न प्रगटन गूढ़।
ग्राम्य रहित सोकांतिगुन, समुझै सुमति न मूढ़ ॥१४॥

छवा=एड़ी। कलिन्द=एक पर्वत जिससे यमुना नदी निकलती है। कलिन्दी धार=यमुना की धारा। गुन=धागा। डहरैं=रास्ते, डगर। दिली=दिल्ली शहर। झगा=कुरती। कदन=नाशक। पुष्कर=कमल, जलाशय।

कान्ति गुण का उदाहरण ।

सवै०—पग पानिन कंचनचूरे जराउ, जरे मनि लालन शोभ धरैं । चिकुरारि मनोहर झीन झगा पहिरे मनि आँगन में बिहरैं ॥ यह मूरति ध्यान में आनन को सुर सिद्ध समूहनि साधि मरैं । बड़-भागिन गोपी मयंकमुखी अपनी अपनी दिसि अंक भरैं ॥ १५ ॥

उदारता गुण लक्षण ।

दो०—जो अन्वय बलपठित है, समुझि परै चतुरैन ।
औरन को लागै कठिन, गुन उदारता ऐन ॥१६॥

उदारता गुण का उदाहरण ।

दो०—कदन अनेकन विघन के, एकरदन गनराउ ।
बन्दनजुत बन्दन करौं, पुष्कर पुष्कर पाउ ॥१७॥

व्यक्त गुण लक्षण ।

दो०—जासुअर्थअतिही प्रगट, नहिँ समास अधिकाउ ।
अर्थ व्यक्त गुन बात ज्यों, बोलै सहज सुभाउ ॥१८॥

व्यक्त गुण का उदाहरण ।

दो०—इक टक हरि राधे लखैं, राधे हरि की ओर ।
दोऊ आनन इन्दु औ, चार्‌यो नैन चकोर ॥१९॥

समाधि गुण लक्षण ।

दो०—जुहै रोह अवरोह गति, रुचिर भाँति क्रम पाय ।
तेहि समाधि गुन कहत हैं, ज्यों भूषन पर्याय ॥२०॥

समाधि गुण का उदाहरण ।

दो०—बर तरुनी के बैन सुनि, चीनो चकित सुभाइ ।
दुखित दाख मिसिरी मुरी, सुधा रही सकुचाइ ॥२१॥

टि०—क्रम से अधिक अधिक मीठा कहना समाधि गुण है ।

पुनः

सवै०—भावतो आवतही सुनि कै उड़ि ऐसी गई मन छामता जो गुनो । कंचुकी हू में नहीं मढ़ती बढ़ती कुच की अब तो भई दो गुनी ॥ दास भई चिकुरारिन को चटकीलता चामर चारु तें चौगुनी । नौगुनी नीरज तें मृदुता सुखमा मुख में ससि तें भई सौगुनी ॥ २२ ॥

श्लेषगुण लक्षण ।

दो०—बहु सब्दन को एक कै, कीजै जहाँ समास ।
ता अधिकाई श्लेष गुन, गुरु मध्यम लघुदास ॥२३॥

श्लेष गुण दीर्घसमास का उदाहरण ।

दो०—रघुकुल सरसी रुह बिपुल, सुखद भानुपद चारु ।
हृदै आनि हनि काम मद, कोह मोह परिवारु ॥२४॥

श्लेष गुण मध्यम समास का उदाहरण ।

दो०—जदुकुल रंजन दीनदुख, भंजन जन सुखदानि ।
कृपा बारिधर प्रभु करो, कृपा आपनो जानि ॥२५॥

दाख=मुनक्का । मिसिरी=मिश्री । सुधा=अमृत । छामता=दुर्बलता । रंजन=प्रसन्न करनेवाले ।

श्लेष गुण लघु समास का उदाहरण ।

लखिलखि सखि सारस नयन, इन्दु बदनघनश्याम।
बिज्जुहासदाडिमदसन, बिम्बाधर अभिराम ॥२६॥

पुनरुक्तिप्रकाश लक्षण ।

दो०—एक सब्द बहुबार जहँ, परै रुचिरता अर्थ ।
पुनरुक्ती परकाश गुन, बरनै बुद्धि समर्थ ॥२७॥

पुनरुक्ति प्रकाश का उदाहरण ।

दो०—बनिबनिबनिबनिता चली, गनिगनिगनिडगदेत ।
धनिधनिधनि अँखियाज्जुछबि, सनिसनिसनिसुखलेत २८

पुनः

सवै०—मधु मास में दास जू बीसबिसे मनमोहन आइहैं आइहैं आइहैं। उजरे इन भौननि को सजनी सुखपुंजन छाइहैं छाइहैं छाइहैं ॥ अब तेरी सौं एरी न संक इकंक बिथा सब जाइहैं जाइहैं जाइहैं ॥ घनस्याम प्रभा लखि कै सजनी अँखियाँ सुख पाइहैं पाइहैं पाइहैं ॥ २९ ॥

टि०—बनि, गनि, धनि आदि शब्द रुचिरता के लिये कई बार आये हैं ॥

दो०—माधुर्योज प्रसाद के, सब गुन हैं आधीन ।
ताते इनहीं को गन्यो, मम्मट सुकबि प्रवीन ॥३०॥

सारस=कमल । मधु=चैत्र ।

माधुर्यगुण ।

दो०—श्लेषोमध्य समास को, समता कान्ति बिचार ।
लीन्हे गुन माधुर्य जुत, करुना हास सिँगार ॥३१॥

ओज गुण ।

दो०—श्लेष समाधि उदारता, सिथिल ओज गुन रीति ।
रुद्र भयानक बीर अरु, रस बिभत्स सों प्रीति ॥३२॥

प्रसाद गुण ।

दो०—अल्प समास समास-बिन, अर्थ व्यक्त गुन मूल ।
सो प्रसाद गुन बर्न सब, सब गुन सब रस तूल ॥३३॥
रस के भूषित करन तें, गुन बरने सुखदानि ।
गुन भूषन अनुमानि कै, अनुप्रास उर आनि ॥३४॥

अनुप्रास लक्षण ।

दो०—बचन आदि कै अन्त जहँ, अक्षर की आवृत्ति ।
अनुप्रास सो जानि द्वै, भेद छेक औ वृत्ति ॥३५॥

छेकानुप्रास लक्षण ।

दो०—बर्न बहुत की एक की, आवृति एकहि बार ।
सो छेकानुप्रास है, आदि अन्त इक ढार ॥३६॥

आदि वर्ण की आवृत्ति का उदाहरण ।

तरुनी के बर बैन सुनि, चीनी चकित सुभाय ।
दुखी दाख मिसिरी मुरी, सुधा रही सकुचाइ ॥३७॥

अंतवर्ण की आवृत्ति का उदाहरण ।

दो०—जनरंजन भंजनदनुज, मनुज रूप सुरभूप ।
बिस्व बदर इवधृत उदर, जोअत सोअत रूप ॥३८॥

वृत्तानुप्रास लक्षण ।

दो०—कहुँ सरि बर्न अनेक की, परै अनेकन बार ।
एकहि की आवृत्ति कहुँ, वृत्यो दोइ प्रकार ॥३९॥

आदिवर्ण अनेक की अनेकबार आवृत्ति ।

दो०—पैंड़ पैंड़ पर चकितचख, चितवत मोचित हारि ।
गई गागरी गेह लै, नई नागरी नारि ॥४०॥

आदिवर्ण एक की अनेक बार आवृत्ति ।

कवि०—बलिबलि गई बारि जात से बदनपर, बंसीतान बँधि गई बिधि गई बानी में । बड़े बड़े लोचन बिसार के बिलोकत बिसारि सुधि बुधि बावरी लौं बिललानी ॥ बरुनी बिभा को बारुनी में ह्वै बिमोहित बिशेष बिम्बाधर में बिगोई बुधि रानी मैं ॥ बरजि बरजि बिलखानी बृन्द-आली बनमाली को बिकास बिहँसनि में बिकानी मैं ॥ ४१ ॥

अंत वर्ण अनेक की अनेक बार आवृत्ति ।

तो०—कहै कस न गरमी बसन, काहू बसन सोहात ।
सीत सताये रीति अति, कत कंपित तुअ गात ॥४२॥

बदर=बेर फल । सरि=समान । पैँड़=डग, कदम । बिसारे=बिषैले । लौं=तरह, तुल्य । बरुनी=भृकुटी । बारुनी=मदिरा ।

अन्त वर्ण एक की अनेक वार आवृत्ति

सवै०—बैठी मलीन अली अवली किधोंकंज कलीन सों
द्वै बिफली है। संभुगली बिछुरीही चली किधौं
नागलली अनुराग—रली है। तेरी अली यह
रोमावली की सिँगारलता फल बेलि फली है।
नाभिथली पै जुरे फल लै कि भली रसराज—नली
उछली है ॥ ४३ ॥

उपनागरिका कोमलावृत्ति लक्षण

दो०—मिलैवरन माधुर्य के, उपनागरिका निति।
परुषा ओज प्रसाद के, मिले कोमलावृत्ति ॥४४॥

उपनागरिकावृत्ति का उदाहरण

सवै०—मंजुल वंजुल कुंजन गुंजत कुंजन भृङ्ग विहंग
अयानी। चंपक चंदन बंदन संग सुरंग लवंगलता
लपटानी ॥ कंस बिधंसन कै नदनंद सुछंद तहीं
करिहैं रजधानी। झंखति क्यों मथुरा ससुरारि
सुने न गुने मुद मंगल बानी ॥४५॥

परुषावृत्ति का उदाहरण

छप्पै०—मरकट जुद्ध बिरुद्ध क्रुद्ध अरि-ठट्ट दपट्टहिँ।
अब्द शब्द करि गज्जि तज्जि झुकि झंपि झपट्टहिँ।
लक्ष लक्ष रक्षस विपक्ष धरि धरनि पटक्कहिँ।
तिक्ख शस्त्र बज्रादि अस्त्र एक्कहु न अटक्कहिँ ॥

रली=मिली। रसराजन सी=पारा की नलिका। वंजुल=
वेत। सुरंग=सुहावनी। अब्द=मेघ। झपि=उछल कर।

कृतव्यक्त रक्त स्रोनितसने, जत्र तत्र अनहद भुअ।
तसविक्रमकत्थअकत्थजस, रन-समत्थदसरत्थ-सुअ॥

कोमलावृत्ति का उदाहरण

सवै०—प्यो बिरमे घिरि मैं करि बंदन बुंदनि को बिधि बेधे बधै री। दास घनो गरजै गुरजै सी लगै भर सो हियरो झुरसै री। बीसबिसै बिस झिल्ली झलैं तड़िता तनु ताड़ित कै तरपै री। मारै तऊ सुर के सर सों बिरही को बसै बरही बड़ बैरी॥ ४७॥

लाटानुप्रास लक्षण

दो०—एक सब्द बहु बार जहँ, सो लाटानुप्रास।
तातपर्य तें होत है, औरै अर्थ प्रकास॥४८॥

लाटानुप्रास का उदाहरण

दोहा०—मन मृगया करि मृगदृगी, मृगमद बेंदी भाल।
मृगपति-लंक मृगाङ्कमुखि, अंक लियेमृगबाल॥४९॥

पुनः

दोधक०—श्री मनमोहन प्रान हैं मेरे। श्री मनमोहन मान हैं मेरे॥ श्री मनमोहन ग्यान हैं मेरे। श्री मन-मोहन ध्यान हैं मेरे॥ श्री मनमोहन सों रति मेरी। श्री मनमोहन सों नति मेरी॥ श्री मन-मोहन सों मति मेरी। श्री मनमोहन सों गति मेरी॥५०॥

व्यक्त=प्रकट। स्रोनित=लोहू। रक्त=लाल। गुरजै=गुर्ज, गदा। बिस=जहर। झलैं=ढकेलते हैं। बरही=मुरैला।

वीप्सा लक्षण

दो०—एक सब्द बहुबार जहँ, हरषादिक तें होइ।
ता कहँ विप्सा कहत हैं, कबि कोबिद सब कोइ ॥५१॥

वीप्सा का उदाहरण

कवि०—जानि जानि आयो प्यारो प्रीतम बिहार भूमि,
मानि मानि मंगल सिँगारन सिँगारती। दास दृग
तोरन को द्वारन में तानि तानि, छानि छानि
फूले फूल सेजहि सँवारती॥ ध्यानही में आनि
आनि पीको गहि पानि पानि, ऐंचि पट तानि तानि
मैन-मद गारती। प्रेम गुन गानि गानि अमृतनि
सानि सानि, बानि बानि खानि खानि बैनन
बिचारती ॥५२॥

यमकालंकार लक्षण

वहै शब्द फिरि फिरि परै, अर्थ औरई और।
सो जमकानुप्रास है, भेदि अनेकन ठौर ॥५२॥

यमकालंकार का उदाहरण

कवि०—लीन्हों सुख मानि सुखमा निरखि लोचनन,
नीरज लजात जलजातन बिहारिगो। वाही जी
लगाइ करि लीन्हों जी लगाइ करि, मति मोहनी
सी मोहनी सी उर डारिगो। लागै पलकौ न

तोरन=बन्दनवार। सुखमा=सोभा। नीरज=कमल।
आनि=सौगन्द। अंचल=आँचर, किनारा। वारिजात=कमल

पलकौ न बिसरै री बिसवासी वा समै ते बास मैं ते विष गारिगो। मानि आनि मेरो आनि मेरी ढिग वाको तू न, काहू बरजोरी बरजोरी मोहि मारिगो ॥५४॥

पुनः

कवि०—चलन कहूँ मैं लाल रावरे चले की चाल, आँच वाके अचल सों केहू न सुधारैगी। बारिजात नैन बारिजातन सहैगी निज, बारिजात नैनन सों केहूं न निवारैगी ॥ दास जू बसंत सुधि अंगना सँभारैगी तौ, अंगना सँभारैगी ह्वै अंगनासं भारैगी। करहति डारै सुधि देखि देखि किंसुक की, कर हति डारै हियो कर हति डारैगी ॥५५॥

पुनः

कवि०—छपती छपाई री छपाईगन-सोर तू छपाई क्यों सहेली ह्याँ छपाई ज्योँ दगति है। सुखद निकेत की या केतकी लखे ते पीर, केतकी हिये में मीन-केत की जगति है ॥ लखि कै ससंक होती निपटै ससंक दास, संकर में सावकास संकर-भगति

अंगना=स्त्री। अंगनास=अंगन्यास, एक एक अंग का छूना। भारेगी=बोझ लादेगी। किंसुक=पलास। करहति=कराहने वाली। निकेत=घर। मीनकेत=कामदेव।

है। सरसी सुमन सेज सरसी सुहाई सरसीरुह
बयारि सीरी सर सी लगति है ॥५६॥

पुनः

दो०—अरी सीअरी होन को, ठरी कोठरी नाहिँ ।
जरी गूजरी जाति है, घरी दूघरी माहिँ ॥५७॥
चैत सरवरी में चलो, सरब सरवरी स्याम ।
सरवू रीति ह्वै सरवरी, लखि परिहै परिनाम ॥५८॥
मुकुत बिराजत नाक मैं, मिलि बेसरि सुखमाहिँ ।
मुकुतबिराजतनाक मैं, मिलिबे सरिसुख माहिँ ॥५९॥

सिंहावलोकन लक्षण

दो०—चरन अन्त अरु आदि के, जमक कुंडलित होय ।
सिंह-बिलोकन है वहै, मुक्तक पद ग्रस सोइ ॥६०॥

उदाहरण

सवै०—सर सो बरसो करै नीर अली धनु लीन्हे अनंग
पुरंदर सोँ। दरसो चहुँओरन ते चपला करि जाती
कृपान के ओझर सोँ॥ झर सोर सुनाइ हरै हिय-
राजु किये घन अंबर डंबर सों। बरसों ते बड़ी निसि
बैरिन बीतहि बासर भो बिधि-बासर सोँ ॥६१॥

सरसी=तलैया। सीरी=शीतल। ठरी=ठंढी। पुरन्दर=
इन्द्र। ओझर=ओट। अंबर=आकाश। डंबर=चँदोवा।

रस और गुणादि का विवरण

दो०—ज्यों जीवात्मा में रहै, धर्म सूरता आदि।
त्यों रसही में होत गुन, बरनै गनै सबादि ॥६२॥
रसही के उतकर्ष को, अचल स्थिति गुन होय।
अंगी धरम सुरूपता, अंग धरम नहिँ कोय ॥६३॥
कहुँ लखि लघु कादर कहै, सूर बड़ो लखि अङ्ग।
रसहि लाज त्योँ गुन बिना, अरि सो सुभग न संग॥६४॥
अनुप्रास उपमादि जे, शब्दार्थालंकार
ऊपर तें भूषित करैं, जैसे तन को हार ॥ ६५ ॥
अलंकार बिनु रसहु है, रसौ अलंकृत छंडि।
सुकबि बचन-रचनान सोँ, देत दुहुँन को मंडि ॥६६॥

रसबिना अलंकार का उदाहरण

दो०—चित्त चिहुँट्टत देखि कै, जुट्टत दारहि दार।
छन छन छुट्टत पट रुचिर, टुट्टत मोतिनहार ॥६७॥
टि०—इसमें परुषावृत्ति अनुप्रास है, रस नहीं।

पुनः

दो०—चोंच रही गहि सारसी, सारस-हीन मृनाल।
प्रान जात जनु द्वार में, दियो अरगला हाल ॥६८॥
टि०—यहाँ उत्प्रेक्षा अलंकार है, रस नहीं।

सवादि=स्वाद जाननेवाले। सारसी=पक्षी विशेष। सारस=कमल। अरगला=अगरी। घनसार=चन्दन।

पुनः

दो०—झार डार घनसार इत, कहा कमल को काम।
अरी दूर करि हार यों बकति रहति नित बाम ॥६९॥

टि०—यहां रस है अलंकार नहीं।

इतिश्री काव्यनिर्णयेगुणनिर्णयादि अलंकार वर्णनं नाम
एकोनविंशतिमोल्लासः ॥ १९ ॥

श्लेषालंकारादि वर्णन।

दो०—स्लेष बिरोधाभास है, सब्दालंकृत दास।
मुद्रा अरु वक्रोक्ति पुनि, पुनरुक्तवदाभास ॥ १ ॥
इन पाँचहु को अर्थ सों, भूषन कहै न कोइ।
जदपि अर्थ भूषन सकल, सब्द सक्ति में होइ ॥ २ ॥

श्लेषालंकार लक्षण।

दो०—सब्द उभय हूँ सक्ति तें, स्लेषालंकृत मानि।
अनेकार्थ बल इक दुतिय, तातपर्ज बल जानि ॥ ३ ॥
दोइ तीनि कै भाँति बहु, जहाँ प्रकासित अर्थ।
सो स्लेषालंकार है, बरनत बुद्धिसमर्थ ॥ ४ ॥

द्वैर्थिक श्लेष का उदाहरण।

कवि०—गजराज राजै बरबाहन की छबि छाजै, सरथ
सुबह सहसन मनमानी है। आयसु को जोहै आगे
लीन्हें गुरुजनगन, बस में करत जो सुदेस रजधानी
है ॥ महा महाजन धन लैलै मिलैं श्रम बिनु, पदुमिन

बरवाहन=श्रेष्ठ सवारी।

लेखै दास बास यों बसानी है। दरपन देखै सुबरन रूप भरी बार-बनिता बखानी है कि सैन सुलतानी है॥ ५॥

त्र्यर्थिक श्लेष का उदाहरण

कवि०—पानिपके आगर सराहैं सब नागर कहत दास कोस तें लख्यो प्रकासमान मैं। रज के सँयोग तें अमल होत जब तब, हरि हितकारी बास जाहिर जहान मैं॥ श्री को धाम सहजै करत मन काम थकै, बरनत बानी जा दलन के बिधान मैं। एतो गुन देख्यो राम साहब सुजान मैं कि, बारिज बिहान मैं कि कीरति कृपान मैं॥ ६॥

चार अर्थ के श्लेष का उदाहरण

कवि०—छाया सों रलित परभृत घोस दरसन, बालरूप दुति सुपरव गन बंद है। दिनको उदित छनदान में बिलोकियत, हरि महातम देत आनद को कंद है॥ भव आभरन अरजुन सों मिलाप कर, जानौ कुबलय को हरन दुख दंद है। एतो गुनवारो दास रवी है कि चन्द है कि देवी को मृगेन्द है कि जसुमति-नंद है॥ ७॥

पानिप=छबि। आगर=स्थान। रलित=मिली हुई। पर-भृत=कोयल। आभरन=भूषण। कुवलय=कमल, कुमुद।

दो०—सन्देहालङ्कार इत, भूलि न आनोचित्त।
कह्यो श्लेषदृढ़करन को, नहिँ समताथल मित्त॥ ८॥

विरोधाभास लक्षण

दो०—परैं बिरोधी सब्दगन, अर्थ सकल अबिरुद्ध।
कहैं बिरोधाभासतेहि, दास जिन्हैं मति सुद्ध॥ ९॥

विरोधाभास का उदाहरण

कवि०—लेखी मैं अलेखी मैं नहीं है छबि ऐसी औ अ—समसरी समसरी दीबे को परै लिये। खरी निखरी है अंग बनक कनकहूँ ते, दास मृदु हास बीच मेलिये चमेलिये॥ कीजै न बिचार चारु रस में अरस ऐसो, बेगि चलो संग में न हेलिये सहेलिये। जग के भरन आभरन आप रूप अनुरूप गनि तुम्हैं आई के लिये अकेलिये॥१०॥

मुद्रालंकार लक्षण

औरो अर्थ कबित्त को, सब्दौछल व्यवहारु।
झलकै नामक नाम-गन, मुद्रा कहत सुचारु॥११॥

मुद्रा का उदाहरण

कवि०—जबही तें दास मेरी नजरि परी है वह, तब ही तें देखबे की भूख सरसत है। होन लाग्यो

असमसरी=रति। समसरी=समान। नामक=नाम से प्रसिद्ध होनेवाला। सरसत=अधिकाता है।

बाहिर कलेस को कलाप उर, अंतर को ताप छिन छिनहीं नसत है ॥ चलदल पान सी उदर परराजी रोमराजी की बनक मेरे मन में बसत है। रसराज स्याही सों लिखी है नीकी भाँति काहू मानों जंत्रपाँति घन-अक्षरी लसत है ॥१२॥

पुनः

कवि०—दास अब को कहै बनक लोल नैनन की, सारस ममोला बिन अंजन हराये री। इनको तौ हास वाके अंग में अगिनिवास, लीलहीं जु सारो सुख-सिन्धु बिसरायेरी ॥ परे वे अचेत हरें वै चित्त चेत सकल अलक भुजङ्गी डसे लोटन लोटाये री। भारत अकर करतूतिन निहारि लई, यातें घनस्याम लाल तो तें बाज आये री ॥ १३ ॥

वक्रोक्ति लक्षण

दो०—व्यर्थ काकु ते अर्थ को, फेरि लगावै तर्क।
बक्रउक्ति तासों कहैं, जे बुध अम्बुज अर्क ॥१४॥

वक्रोक्ति का उदाहरण

कवि०—आज तौ तरुनि कोपजुत अवलोकियत, रितु

कलाप=समूह । चलदल=पीपल वृक्ष । पान=पत्ता । रसराज=पारा । घन अच्छरी=घनाक्षरी । ममोला=खंजन । भुजङ्गी=साँपिन । लोटन=जटामासी ।

रीति ह्वै है दास किसलैनिदान जू। सुमन नहीं तो यह ह्वै है देखो घनस्याम, कैसी कहौ बात मंद सीतल सुजान जू॥ सौहैं करो नैन हमैं आन नहीं आवै करि, आनकी तौ बूझो आन बिरही की आन जू। क्यों है दलगीर रहि गये कहूँ पीर एरी, एतो मान मान यह जानै बागवान जू॥ १५॥

पुनः

कवि०—कैसो कहो कान्ह सोतो हैा ही खरो एक अब, सेहस्र में जैसे एक राधा रस भीजिये। गहिये न कर होत लाखन को जान लाल, चाहिए तौ आप-नोई पद मोहि दीजिए॥ नील के वसन क्यों बिगा रत हौ वही काज, बिगरै तो हम पै बदल संख लीजिये। देखतीं करोरि बारी संगिनी हमारी है अरघो वारे हम सँग संका कन कीजिए॥ १६॥

पुनः

सबै०—लाल ये लोचन काहे प्रिया हैं दिये ह्वै हैं मोहन रंग मजीठी। मोते उठी है जु बैठी अरीनि की सीठी क्यों बोलै मिलाइ ल्यौ मीठी॥ चूक कहौ किमि चूकति सो जिन्है लागी रहै उपदेस बसीठी। झूठी सबै तुम साँचे लला यह झूठी तिहारेउ पाग की चीठी॥ १७॥

किसलै=कोमल पत्ते। बसीठी=दूतिका।

पुनरुक्तिवदाभास लक्षण

दो०—कहत लगै पुनरुक्ति सो, पै पुनरुक्ति न होइ ।
पुनरुक्तिवदाभास तेहि, कहत सकल कबि लोइ ॥१८॥

पुनरुक्तिवदाभास का उदाहरण

दो०—अली भँवर गुंजन लगे, होन लग्यौ दल-पात ।
जहँ तहँ फूले वृक्ष तरु, प्रिय प्रीतम कित जात ॥१९॥

इति श्री काव्यनिर्णये श्लेषालंकारादि वर्णनं नाम विंसति-मोल्लासः ॥ २० ॥

चित्रालंकार वर्णन ।

दो०—दाससुकवि बानी कथै, चित्र कवित्तन्ह माहिँ ।
चमत्कार हीनार्थ को, इहाँ दोष कछु नाहिँ ॥ १ ॥
ब व ज य बरनन जानिये, चित्रकाव्य में एक ।
अर्धचन्द्र को जनि करो, छूटे लगै विवेक ॥ २ ॥
प्रश्नोत्तर पाठान्तरो, पुनि बानी को चित्र ।
चारि लेखनीचित्र को, चित्रकाव्य है मित्र ॥ ३ ॥

प्रश्नोत्तरचित्र लक्षण

दो०—प्रश्नोत्तर चित्रित करै, सज्जन सुमति उमंग ।
द्वै विधि अन्तरलापिका, बहिरलापिका संग ॥ ४ ॥
गुप्तोत्तर उर आनि कै, व्यस्त समस्तहि जानि ।
एकानेकोत्तर बहुरि, नागपास पहिचानि ॥ ५ ॥
है क्रम व्यस्त समस्त पुनि, कमलबन्धवत मित्र ।
सुद्ध गतागत शृंखला, नवम जानिये चित्र ॥ ६ ॥

अगनित अन्तरलापिका, यों बरनत कविराय ।
बहिरलापि जानो उतर, छन्द बाहिरे पाय ॥७॥

गुप्तोत्तर लक्षण ।

दो०—वाच्यान्तर सब्दच्छलन, उत्तर देइ दुराय ।
गुप्तोत्तर तासों कहैं, सकल सुमति समुदाय ॥८॥

गुप्तोत्तर का उदाहरण ।

दो०—सबतनुपियबरन्यो अमित, कहिकहिउपमाबैन ।
सुन्दरि भई सरोस क्यों, कहत कमल से नैन ॥९॥

टि०—कमल से अर्थात् कम शोभनीय हैं, अथवा क—जल और मल-मैल के समान हैं इससे सुन्दरी रुष्ट हुई ।

पुनः

दो०—सुत सपूत सम्पति भरी, अङ्ग अरोग सुढार ।
रहै दुखित क्यों कामिनी, पीय करै बहु प्यार ॥१०॥

टि०—बहुप्यार अर्थात् प्रीतम बहुत स्त्रियों को प्यार करते हैं ।

व्यस्त समस्तोत्तर लक्षण ।

दो०—द्वै त्रय बरनन काढ़ि पद, उत्तर जानिय व्यस्त ।
व्यस्तसमस्तोत्तर वही, पछिलो उतर समस्त ॥११॥

व्यस्तसमस्तोत्तर का उदाहरण ।

दो०—कौन दुखद ? को हंस सो ? को पंकज आगार ?
तरुन जनन्ह को मनहरन, को करिचित्त विचार ?॥१२॥
कौन धरे है धरनि को ? को गयन्द असवार ?
कौन भवानी को जनक ? है "परबत-सरदार" ॥१३॥

सुढार=सुहावना ।

टि०—प्रत्येक प्रश्नों का उत्तर 'परबत सरदार' है। क्रमशः पर, बत, सर, दार, परवत, सरदार, परबतसरदार उत्तर है। कौन दुखद=पर अर्थात् शत्रु। को हंस सो=बत अर्थात् बतक। को पंकज आगार=सर अर्थात तालाब। तरुण मन हरण को=दार, नवयौवना। कौन धरे है धरनि को=परवत। को गयन्द असवार=सरदार। कौन भवानी को जनक= परवतसरदार अर्थात् हिमगिरि।

एकानेकोत्तर लक्षण।

दो०—बहुत भाँति के प्रश्न को, उत्तर एक बखानि।
एकानेकोत्तर वहै, अनेकार्थ बल मानि ॥१४॥

एकानेकोत्तर का उदाहरण।

दो०—बरो-जरो घोरो-अरो, पान सरो क्यों दार ?।
हितू फिरो क्यों द्वार ते, हुत्यो न फेरनहार ॥१५॥

टि०—बरा कैसे जल गया ? घोड़ा क्यों अड़ने लगा ? पान कैसे सड़ा ? द्वार से हितू क्यों फिर गया ? इन चारों प्रश्नों का एक ही उत्तर 'हुत्यो न फेरनहार' अर्थात् कोई फेरनेवाला नहीं था।

पुनः

दो०—कारो कियो बिसेष कै, जावक कहा सभाग।
काहे रँगिगो भौंर पद, पंडित कहै पराग ॥१६॥

टि०—विशेष काला किसने किया ? महावर की प्रशंसा क्या है ? भ्रमर का पाँव किस से रंगा है ? तीनों प्रश्नों का एक 'पराग' उत्तर है अर्थात् कालिख, ललाई और पुष्परज।

पुनः

दो०--कैसी नृपसेना भली, कैसी भली न नारि।
कैसो मग बिन बारि को, अति रजवती विचारि ॥१७॥

टि०—तीनों प्रश्नों का एक ही उत्तर 'अति रजवती' है अर्थात् अत्यन्त रजोगुणवाली, अत्यन्त रजस्रावावाली, अत्यन्त धूलिवाली।

नागपासोत्तर लक्षण

दो०--इक इक अन्तर तजि बरन, द्वै द्वै बरन मिलाइ।
नागपास उत्तर यहै, कुंडल सरिस बनाइ ॥१८॥

नागपासोत्तर का उदाहरण

सो०--नेहाचन्दकोस्याम, छत्रिनकोगुनकौन कहि।
कहा संबतहि नाम, पारसीक बासी कहैं ॥१९॥
कहा रहै संसार, बाहन कहा कुवेर को।
चाहै कहा भुवार, दास उतर दिय "सरसजन" ॥२०॥

टि०- कहा चन्द्र ? =सस। को श्याम ? =रस शृङ्गार। क्षत्रियों का गुण क्या है ? =रज। फ़ारस वासी सम्वत को क्या कहते हैं ? =सन। कहा रहै ससार ? =जस। कुवेर का बाहन क्या है ? =जन। राजा क्या चाहता है ? =सरसजन अर्थात रसीला मनुष्य।
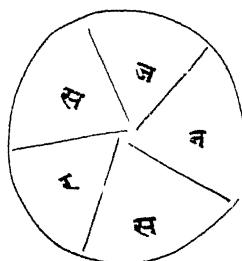
क्रम व्यस्तसमस्त का लक्षण ।

दो०—इक इक बरन बढ़ावते, क्रम ते लेहु समस्त ।
यह प्रश्नोत्तर जानिये, सक्रम समस्तव्यस्त ॥२१॥

क्रम व्यस्तसमस्त का उदाहरण ।

सो०—कवन विकल्पी बर्न, कहा बिचारत गनकगन ।
हरि ह्वै के दुख हर्न, काहि बचायो ग्रसत छन ॥२२॥
कै वा प्रभु अवतार, क्यों वारै राई लवन ।
कवन सिद्धि दातार, दास कह्यो "वारनवदन" ॥२३॥

टि०—वा, वार, वारन, वार नव अर्थात् नौवार, वार न वद और वारनवदन (गणेश)। छओं प्रश्नों का यही उत्तर है।

कमलबद्धोत्तर लक्षण ।

दो०—अच्छर पढ़ो समस्त को, अन्त बरन सों जोरि ।
कमलबन्ध उत्तर वहै, व्यस्त समस्त बहोरि ॥२४॥

कमलबद्धोत्तर का उदाहरण ।

छप्पै०—कह कपीस सुभ अंग, कहा उछरत वर वागन ।
कहा निसाचर भोग, माघ में कवन दान भन ॥
कहा सिन्धु में भरो, सेतु किन कियो को द्वितिय ।
सरसिज कितै संकट, कहा लखि घिना होत हिय ।
केहि दास हलायुध हाथ धरि, मार्‌यो महाप्रलम्बखल ।
क्यों रहत सुचित साकत सदा, 'गनपतिजननो नामबल'

टि०—बन्दर का शुभ अंग कौन? = गल। बागों में क्या उछलता है? = नल अर्थात फौवारा। राक्षसों का भोजन क्या है? = पल अर्थात मांस। माघ का दान क्या

है ?=तिल। सागर में क्या भरा है ?=जल। सेतु किसने बनाया उसका दूसरा सहायक कौन है ?=नल, नील। कमल में काँटा कहाँ होता है ?=नाल अर्थात् डंठल में। क्या देख कर मन में घृणा होती है ?=मल। किसने हाथ में हल का अस्त्र लेकर प्रलम्बासुर को मारा ?=बल अर्थात् बलदेव जी। शाक्त लोग सदा कैसे प्रसन्न रहते हैं ?=गनपति जननी नाम बल अर्थात् भगवती दुर्गा नाम बल से।
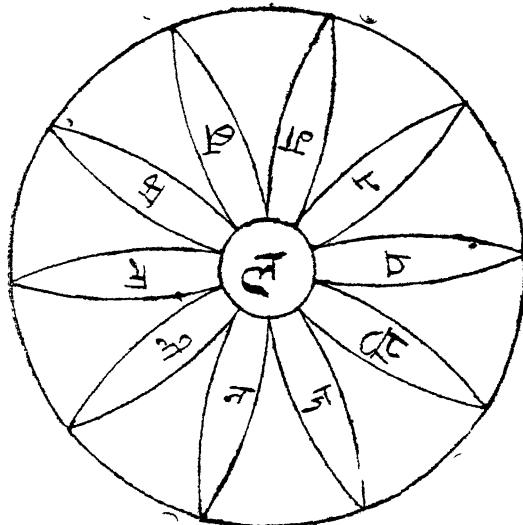
शृंखलोत्तर लक्षण

दो०--द्वै द्वै गतागत लेत चलि, इक इक बरनत जन्त।
नाम शृंखलोत्तर वहै, हात समस्त जु अन्त ॥२६॥

शृंखलोत्तर का उदाहरण

सवै०--छबि भूषन को जय को हर को सुर को घर

को सुभ कौन रुती। केहि पाये गुमान बढ़ै केहि
आये घटै जग में थिर कौन दुती॥ सुभजन्म को
दास कहा कहिये बृषभान की राधिका कौन
हुती। घटिका निसि आज सुकेती अली केहि
पूजहिगी "नगराजसुती" ॥२७॥

टि०—अलंकार की शोभा क्या है?=नग अर्थात् नगीना रत्नादि। जय किससे होती है?=गन अर्थात् सैन्य समुदाय से। स्वर का हरने वाला कौन है?=गरा अर्थात् गले के बिना स्वर का उच्चारण नहीं हो सकता। घर की सुन्दर शोभा क्या है?=राग अर्थात् परस्पर प्रेम। क्या मिलने से गर्व बढ़ता है?=राज। किसके आने से गुमान घटता है?=जरा अर्थात् वृद्धावस्था। संसार में स्थिर रहने वाली कौन सी दुति हैं?=जस। सुन्दर जन्म को क्या कहते हैं?=सुज। बृषभान की राधिका कौन थी?=सुती (पुत्री)। आज कै घड़ी रात्रि है?=तीस। किसकी पूजा करोगी?=नगराज सुती अर्थात् पर्वतराज हिमवान की कन्या पार्वती की।

अन्य शृंखलोत्तर लक्षण

दो०—पहिले गत चलि जाइये, अगत चलिय पुनि व्यस्त।
यहौ सृंखलोत्तर गनो, पुनिगत अगत समस्त॥२८॥

उदाहरण

रूपघ०—को सुघर कहा कीन्ही लाज गनिकान्ह को
पढ़ैया खग मोहैं कहा मृग कहाँ तपो बस।
कहा नृप करै कहा भूमैं बिसतरै काह, जुबा

छबि धरै कोहै दास नाम के हैं रस ॥ जीतैं
कौन कौन अखरा की रेफ कै कै कहा, कहैं
क्रूर-मीत राखै कहा कहि द्योस दस। साधु कहा
गावैं कहा कुलटा सती सिखावैं सब को उतर दास
"जानकी रवन जस" ॥२९॥

टि०—को सुघर?=जान अर्थात् सुजान। वेश्या कब लज्जा करती है?=न की अर्थात् कभी नहीं। पढ़ने वाला पक्षी कौन?=कीर (शुक)। मृग कहाँ मोहित होते हैं?=रव अर्थात् तान में। तपस्वी कहाँ बसते हैं?=वन। राजा क्या करते हैं?=नय (नीति)। पृथ्वी में किसका विस्तार होता है? =यस। युवा की छवि किससे होती है?=सज अर्थात् शृङ्गार। दास का नाम क्या है?=जन। रस कितने हैं?=नव। कौन विजयी होता है?=वर (श्रेष्ठ)। रेफ अक्षर कौन है?=र। करके क्या कहते हैं?=कीन। क्रूर मित्र दस दिन बाद क्या रखते हैं?=नजा अर्थात् दुश्मनी। साधुजन किसे गाते हैं?= जानकी रवन जस। कुलटा सती को क्या सिखाती है?= सयन वर की न जा।

चित्रोत्तर लक्षण

दो०—जोई अच्छर प्रश्न को, उत्तर ताही माह।
चित्रोत्तर ताको कहत, सकल कविन के नाह ॥३०॥

अन्तरलापिका चित्रोत्तर का उदाहरण।

स०बै०—कौन परावन देव सतावन को लहै भार धरै धरती
को। को दसही में सुनो जित ठौरन को विदसो

दिगपालन टीको ॥ जानत आपु को बन्द समुद्र में कामैं सुरूप सहाहिये नीको । का दरबार न सोहत सूरन्ह कोप जरावत पुन्य तपी को ॥३१॥

टि०—देवताओं को सताने और भगानेवाला कौन ?=कौनप (राक्षसराज)। धरती का भार कौन लिये है ?=कोल (बाराह)। जहाँ तहाँ दसों में कौन सुनाई पड़ता है ?=कोद (दिशा)। लोकपालों का तिलक कौन है ?=कोविद (ब्रह्मा) अपने को महासागर में पड़ा कौन जानता है ?=जान (जीव)? किसका सुन्दर रूप सराहनीय है ?=काम । सूरों के दरबार में कौन नहीं सोहता ?=कादर। तपस्वियों के पुण्य को कौन जलाता है ?=कोप

वहिरलापिका चित्रोत्तर का उदाहरण

कवि०--को गन सुखद काहे अँगरी सुलच्छनी है, देत कहा घन कैसो बिरही को चन्द है। जारै को तुषारै कहा लघु नाम धारै कहा, नृत्य में विचारै कहा फाँदो व्याध फन्द है॥ कहा दै पचावै फूटे भाजन में भात क्यों बोलावैं कुस भ्रात कहा वृष बोल मन्द है। भूपै कौन भावैं खग खेलै कौन ठावै प्रिया, फेरै कहि कहा कहा रोगिन को बन्द है ॥३२॥

दो०-दोखचित्रिकोनयलवाहिलिखि, पढ़ोअर्थमिलिज्योहिँ ।
उतर सर्बतोभद्र यह, बहिरलापिका योहिँ ॥३३॥
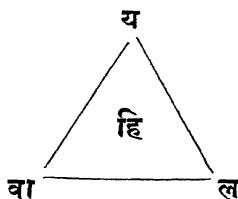
टि०—कौन समूह सुख दाता है ?=लहि अर्थात् प्राप्ति। अँगरी (कवच) किसकी सुलक्षणी है ?=बाज पक्षी की। मेघ क्या देते हैं ?=जल। विरही को चन्द्रमा कैसा है ?=जवाल। पाला को कौन नष्ट करता है ?=यहि (सूर्य्य)। लघु नामधारी कौन ?=वाय (पवन) जो दिखाई नहीं देते। नाच में विचारणीय क्या है ?=लय। व्याधा फन्दे में किसे फँसाता है ?=लवा पक्षी। फूटे पात्र में क्या देकर भात पकाया जाता है ?=हिल अर्थात् गीला आटा आदि। कुश भाई को किस प्रकार बुलाते थे ?—हिय (प्यारे)। बैल की बोली कहाँ मन्द होती है ?=हिवाल अर्थात् अत्यन्त शीत से। राजा को क्या सुहाता है ?=बाल (स्त्री नवयौवना)। किस स्थान में पक्षी विहार करते हैं ?=वाहिज अर्थात् शून्य स्थान में। प्यारी क्या कह, कर लौटाती है ?=वाहि (उसको)। रोगियों के लिये क्या बन्द है ?=जलवाहि अर्थात् स्नान।

पाठान्तर चित्र लक्षण

दो०—बरन लुपै बदले बढ़े, चमत्कार ठहराय।
सो पाठान्तर चित्र है, सुनो सुमति समुदाय ॥३४॥

पाठान्तर चित्र लुप्त वर्ण का उदाहरण

चौ०—तमोल मँगाइ धरो एहि बारी।
मिलबे की जिय में रुचि भारी॥
कन्हाइ फिरैं तब लौं सखि प्यारी।
विहार की आज करो अधिकारी॥३५॥

टि०—प्रत्येक चरण के आदि का वर्ण छोड़ कर पढ़ने से दूसरा ही अर्थ हो जाता है। जैसे—"मोल मँगाइ धरो एहि बारी। लवे की जिय में रुचि भारी॥ न्हाइ फिरौं जब लौं सखि प्यारी। हार कि आज करो अधिकारी॥"

पुनः मध्यवर्ण लुप्त का उदाहरण

दो०—मारग में मिलबो भलौ, तहिँ 'बातुल' सों लाल।
नहिँ सोहैं दुहुँ सब्द को, मध्य लोपिये हाल॥३६॥

टि०—वातुल शब्द के बीच का अक्षर लुप्त करने से अर्थ निकला कि बाल (स्त्री) से रास्ते में अंकमालिका करना अच्छा नहीं है। दोनों नहीं सोहते।

पुनः परिवर्तित वर्ण का उदाहरण

कवि०—साज सब जाको बिन माँगे करतार देत, परम अधीस सब भूमि थल देखिये। दासी दास केते करिलेत सधरम तें सलच्छन सहिम्मति सहर्ष अवरेखिये। सीलतन सिरताज सखन बढ़ाये ज्यों सकल आसै साँच में जगत जस पेखिये। हिन्दूपति गुन में जे गाये मैं सकारे ताको, बैरिन में क्रम तें नकारे करि लेखिये॥३७॥

टि० इस कवित्त के 'स' अक्षर के स्थान में 'न' लगा कर पढ़ने से बिलकुल उलटा अर्थ हो जाता है।

निरोष्ठामत्तचित्रोत्तर लक्षण

दो०—बरनि निरोष्ठ अमत्त पुनि, होत निरोष्ठामत्त।
पुनि अजिह्व नियमित बरन, बानी चित्रहि तत्त ॥३८॥
छाड़ि पबर्ग उओ बरन, और बरन सब लेहु।
याको नाम निरोष्ठ है, हिये धरो निसँदेहु ॥३९॥

निरोष्ठ चित्रोत्तर का उदाहरण

कवि०—कौन् है सिँगार रस जस ये सघन घन, घन कैसे आनद की झरते सँचारते। दास सरि देत जिन्हैं सारस के रस रसे, अलिन के गन खन खन तन झारते॥ राधादिक नारिन के हियकी हकीकति लखेतें अचरज रीति इनकी निहारते। कारे कान्ह कारे कारे तारे ये तिहारे जित, जाते नित राते रातेरङ्ग करि डारते ॥४०॥

अमत्त लक्षण

दो०—एक अवरनै वरनिये, इ ऊ ए ऐ औ नाहिँ।
ताहि अमत्त बखानिये, समुझो निज मनमाहिँ ॥४१॥

अमत्त का उदाहरण

छप्पै०—कमलनयन पदकमल कमलकर अमल कमल-धर। सहस सरद-ससधरन-हरन मद लसत

राते=लाल।

बदन-बर ॥ रहत सजन मन सदन हरख छन छन तत बसरत । हर कमलज सम लहत जनम फल दरसन दसरत । तन सघन-सजल-जलधर-बरन, जगत धवल जस बस करन । दस-बदनदरन अमरन बरन, दसरथतनय-चरन सरन ॥४२॥

निरोष्ठमत्त चित्र लक्षण

दो०—पढ़त न लागै अधर अरु, होइ अमत्ता बर्न ।
ताहि निरोष्ठामत्त कहि, बरनत कवि मन हर्न ॥४३॥

उदाहरण

छप्पै०—कहत रहत जस खलक सरद-ससधरन झलक तन । रजत अचल घर सजत कनक-धन नगन सकल गन ॥ जल अचरत घन सनत हरख अन-गन घर सर स त हतन अतन गन जतन करत छन दरसन दरसत ॥ जल-अनघ जरद अलकन लसत, नयन अनलधर गरलगर । जन-दरद-दरन असरन-सरन, जय जय जय अघहरन हर ॥४४॥

अजिह्व लक्षण

दो०—जिते बरन अ कबर्ग तित, और न आवै कोइ ।
ताहि अजिह्वबखानहीं, जिह्वा चलित न होइ ॥४५॥

उदाहरण

सवै०—खाइ है घीय अघाइ है हीय गहा गहै गीय अहे कहा खङ्गा । है है कही को है खै खै ये गेह

के गाहक खेह के खेह है अङ्गा ॥ काहे को धाइ गहौ अघ ओघ को काग की कीक कहा किये कङ्गा । गाइए गङ्गा कहाइए गङ्गा कही कहै गङ्गा अहै कहै गङ्गा ॥४६॥

नियमित वर्ण लक्षण

दो०--इक इक ते छब्बीस लगि, होतबरन अधिकार ।
तदपि कह्यौ हौं सातलौं, जानि ग्रंथ विस्तार ॥४७॥

एक वर्णनियमित का उदाहरण

दो०--तीतू तांते तीति ते, ताते तोते तीत ।
तोते ताते ततुते, तीते तीतातीत ॥४८॥

द्विवर्णनियमित का उदाहरण

दो०--रोर मार रौरे रुरै, मुरि मुरि मेरी रारि ।
रोम रोम मेरो ररै, रामा राम मुरारि ॥४९॥

त्रिवर्णनियमित का उदाहरण

दो०--मनमोहन महिमा महा, मुनि मोहै मनमाहिँ ।
महामोह में मैं नहीं, नेह मोहिं में नाहिँ ॥५०॥

चतुर्वर्णनियमित का उदाहरण

दो०--महरिनिमोही नाह है, हरै हरै मन मानि ।
मान मरोरै मानिनी, नेह राह में हानि ॥५१॥

पंचवर्णनियमित का उदाहरण

दो०--कम लागै कमला कला, मिलै मैनका कौनि ।
नीकी में गलगौनि कै, नी की मैं गल गौनि ॥५२॥

षटवर्णनियमित का उदाहरण

दो०—सदानद संसारहित, नासन संसय त्रास।
निस्तारन संतन्हसदा, दरसन दरसत दास ॥५३॥

सप्तवर्णनियमित का उदाहरण

कवि०—मधुमास में री परा धरा पगुधारे माधो, सीरे धीरे गौनसों सुगन्ध पौन परिगो। नीरे गैगै पुनि पुनि ररै न मधुर धुनि, मानों मेरी रमनी मधुप सारे मरिगो॥ पागे मन प्रेम सों मुनीसन्ह से साधे मौन, सिगरे परोसी पापी धाम सो निसरिगो। रोस धरि गिरिधारी मन माँह धसै नारी, सुमन धनुषधारी पैने सर सरिगो॥ ५४॥

लेखनी चित्रवर्णन

दो०—खड्ग कमल कंकन डमरु, चन्द्र चक्र धनु हार।
मुरज छत्र युत बंधवहु, पर्वत वृक्ष किवार ॥५५॥

विविध गतागत मित्रगति, त्रिपद अश्वगति जानि।
विमुख सर्वतोमुख बहुरि, कामधेनु उरआनि ॥५६॥

अक्षर गुप्त समेत हैं, लेखनि-चित्र अपार।
बरनन पंथ बताइ मैं, दीन्हों मति अनुसार ॥५७॥

खड्गबंध का उदाहरण

दो०—हरि मुरि मुरि जाती उमगि, लगि लगि नयन कृपान ॥
ताते कहिये रावरो, हियो पखान समान ॥५८॥

कमलबंध का उदाहरण
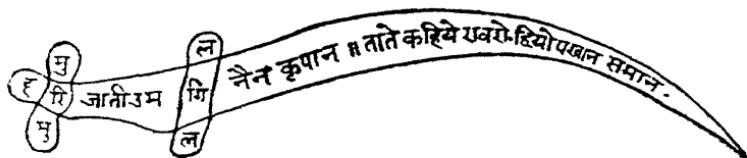
दो०—छनु दनु जनु तनु मान हनु, भानु मानु अनुमानु ॥
ज्ञानुमानु जनु ठानु मनु, ध्यानु आनु हनुमानु ॥५९॥
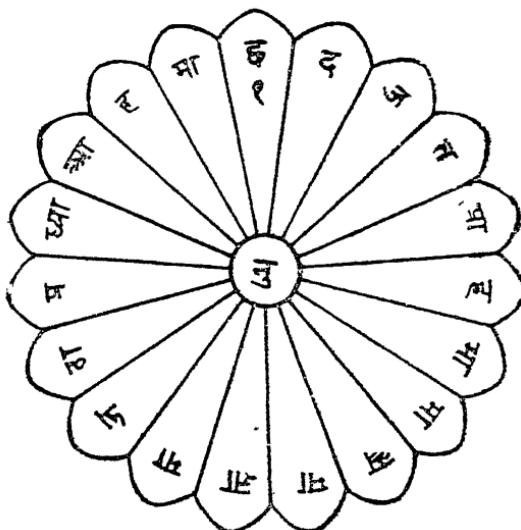
कंकनवंध का उदाहरण

तोमर०--साहि दामवंत ठानि । वाहि कामवंत मानि ॥
जाहि नाम तंत खानि । ताहि नाम संत जानि ॥६०॥
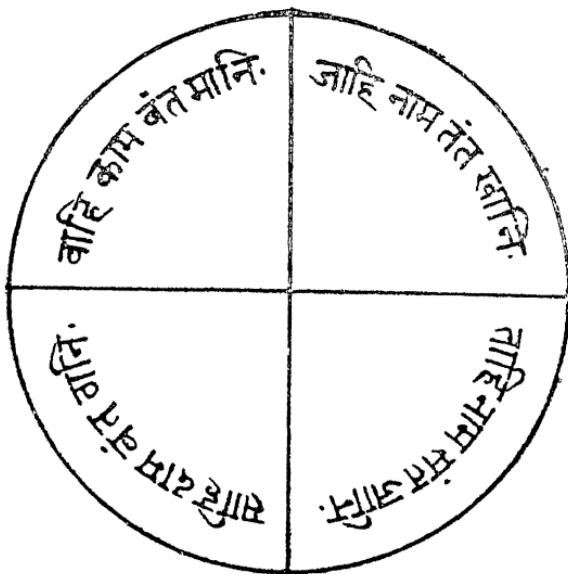
डमरूवंध का उदाहरण

सैल समान उरोज बने मुख पंकज सुन्दर मान नसै ॥
सैन न मार दई जुग नैनन तारे कसौटिन तारे कसै ॥

तंत = तत्व ।

सैकरे तान टिके सुनबे कहँ माधुरि वैन सदा सरसै ॥
सैर सदा सन वेलि की केस मनो घनसाउनमासलसै ॥६१॥
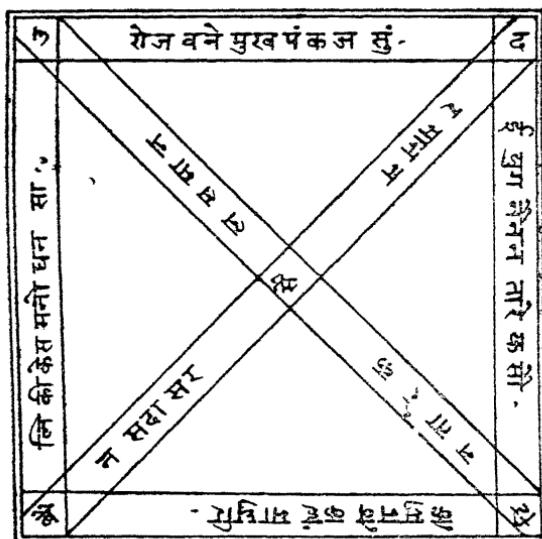
चन्द्रबंध का उदाहरण

रहै सदा रक्षाहि मैं, रमानाथ रनधीर ॥
आनहु दास्यो ध्यान मैं, धरे हाथ धनु तीर ॥६२॥
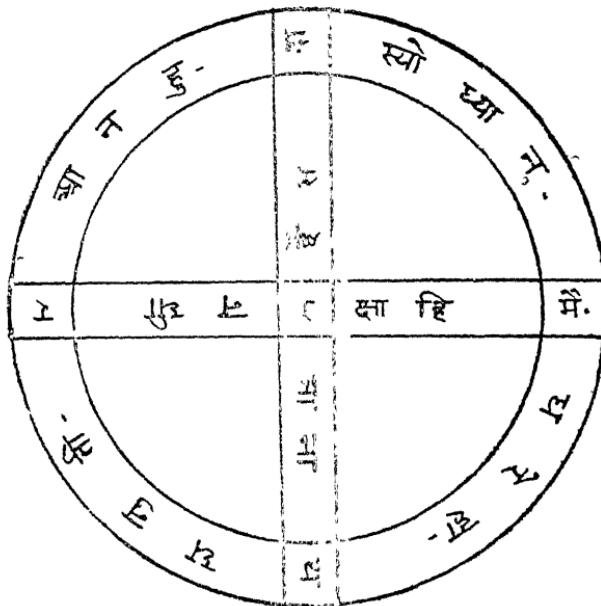
द्वितीय चन्द्रबंध का उदाहरण

दो०--दनुज सदल मरदन बिसद, जस हदकरन दयाल ॥
लहै सैन सुख हस्त बस, सुमिरत ही सब काल ॥६३॥
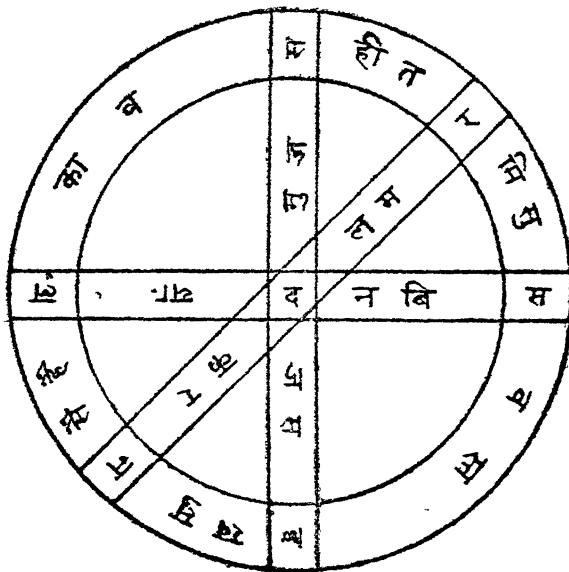
चक्रबन्ध का उदाहरण

ह०छं-परमेश्वरी पर सिद्धि है पशुनाथ की पतिनी प्रियो ॥
परचंड चाप चढ़ाइ कै पर सैन छै पल में कियो ॥
खल छै करी सब क्वै कहै सरिजाहि की न कहूँ वियो ॥
पदपद्म चारु सुध्याय कै करि दास छैमदसोंह्रियो ॥६४॥
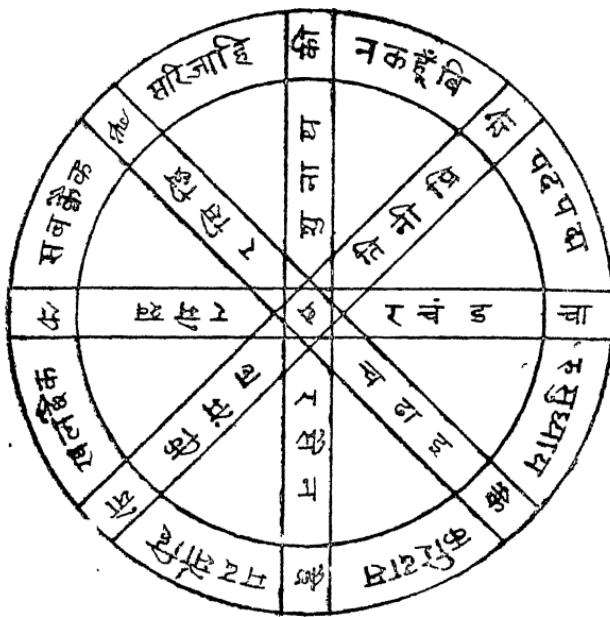
द्वितीय चक्रवन्ध का उदाहरण

छप्पै०—कर नराच धनु धरन नरक दारनौ निरंजन ॥
यदुकुल सरसिज भान नयरित नगारो गंजन ॥
लख्य दुवन दलदरन मध्य तुनीर युगलतन ॥
चकितकरन चर नरन वनकवर सरस दर लक्षन ॥
कहि दास कामजेता प्रबल, तेता देवन भै हरन ॥
यहजानिजान भाषैसदाकमलनयनचरननसरन॥६५॥
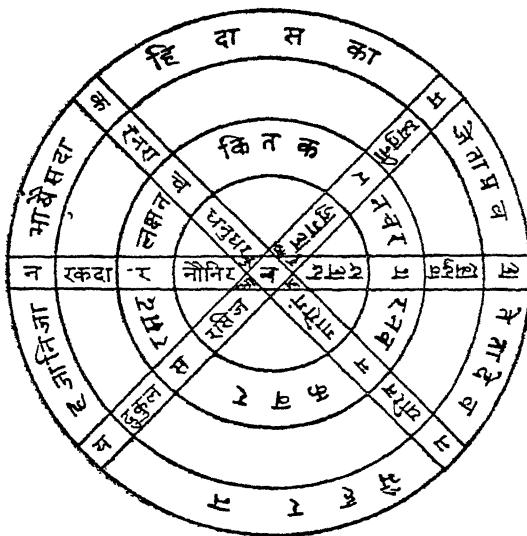
धनुषबंध उदाहरण

दो०–तिअतन दुर्ग अनूपमें, मनमथनिवस्यौ वीर ।
हनै लगलगत भ्रुअधनुष, साधेनिरखनि तीर ॥६६॥
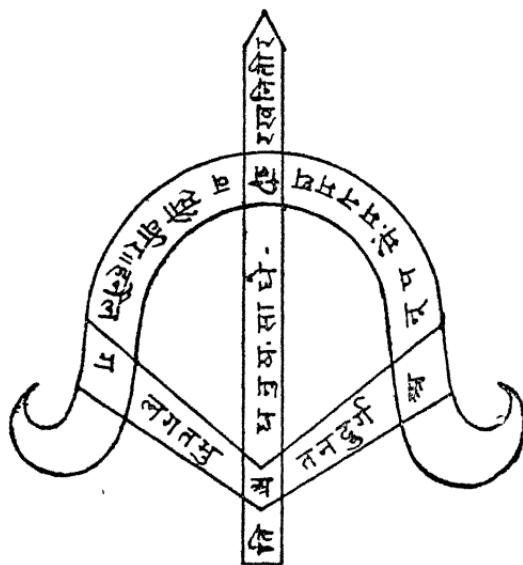
हरिवंध का उदाहरण

दो०-सुनिसुनिपनुहनुमानकिय, सियहियधनिधनि मानि ।
धरिकरिहरिगतिप्रीतिअति, सुखरुखदुखदियमानि ।६७
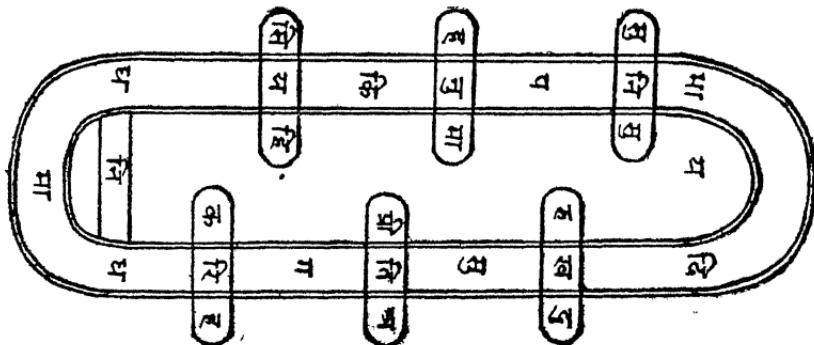
मुरुजवंध का उदाहरण

छं०–जैति जो जन तारनी ॥ कीर्ति जो विसतारनी ॥
सो भजो भनतारनी ॥ क्षोभ जो जन हारनी ॥६८॥

जैति	जो	जन	तारनी.
कीर्ति	जो	विस	तारनी.
सोभ	जो	भन	तारनी.
क्षोभ	जो	जन	हारनी.

पर्वतवंध का उदाहरण

सवै०–कैचित चैहै कै तोपर दैहै लली तुवव्याधिन सो पचिकै
नीरस काहे करै रसवात मैं देहि औलेहि सुखै सचिकै ॥
नच्चतमोर करै पिक शोर विराजतोभोर घनो मचिकै ॥
कैचितहै रवनीतनतोहिहितोनतनीवरहैतचिकै ॥६९॥

							कै							
							चि							
							त							
						चै	है	कै						
					तो	प	र	दै	है					
				ल	ली	तु	व	व्या	धि	न				
			सो	प	चि	कै	नी	र	स	का	है			
		क	रै	र	स	वा	त	मै	दै	हि	औ	लै		
	हि	सु	खै	स	चि	कै	न	च	त	मो	र	क	रै	
पि	क	शो	र	बि	रा	ज	तो	मों	र	घ	नो	म	चि	कै
							हि							

छत्रबंध का उदाहरण

छप्पै०--दनुजनि करदल दलन दानि देवतन अभैयबर ॥
सरद सर्वरीनाथ बदन सत मदन गरब हर ॥
तरुन कमलदल नैन शिर ललित पंखै सोभित ॥
लखि भोरी मोबीर सुसम दुति तनमन लोभित ॥
तन सरसनीर मदनबहुते मरकतछबिहर कांतिवर ॥
तेदासपरमसुख सदन जे मगन रहत यहि रूपपर ॥७०॥
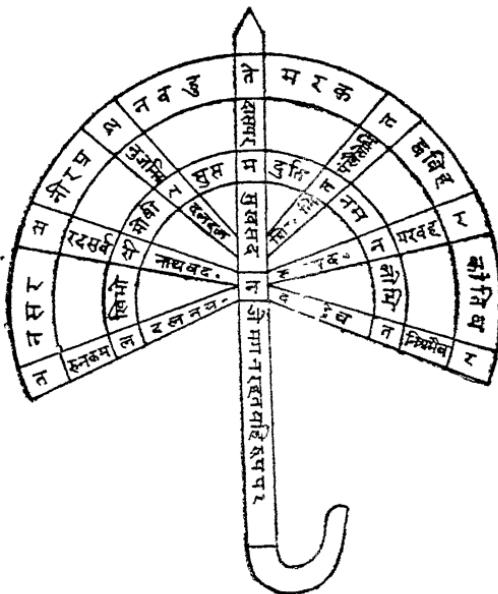
वृत्त बन्ध का उदाहरण ।

छप्पै०--आयेब्रज अवतंस सुतियरहित कि निरखत छन ॥
सुरपति को ढँग लाइसुरतरहिलियनिज धरिपन ॥
सुसति भावती पवरिसु छवि सरसत सुन्दर अति ॥
सुमन धरे वहुबान सुलखि जीजत पक्षी जति ॥

केतकिगुलाबचम्पक दवन, मरुअनेवारी छाजहीं ॥
कोकिल चकोर खंजनधवर, कुररपरेवाराजहीं ॥७१॥
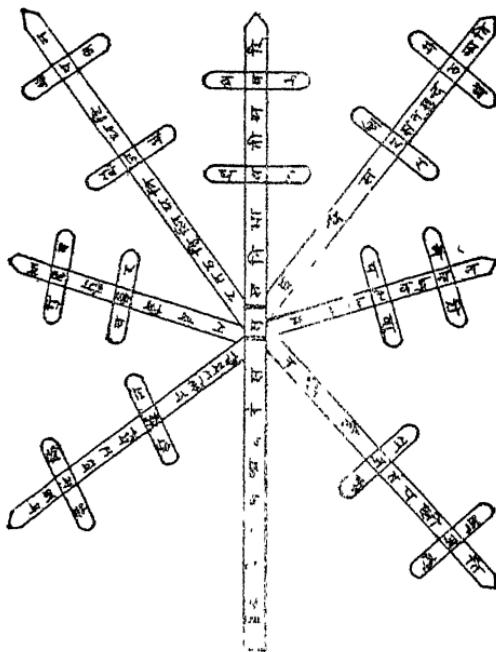
कपाटबद्ध का उदाहरण ।

दो०--भवपति सुअपति भक्तपति, सीतापति रघुनाथ ।
यसपति रसपति रासपति, राधापति यदुनाथ ॥७२॥

भवप	ति	पसय
सुअप	ति	पसर
भक्तप	ति	पसरा
सीताप	ति	पधारा
रघुना	थ	नादुय

अर्ध गतागत का लक्षण

दो०--आधेही तें एक जहँ, उलटो सीधो एक ।
उलटे सीधेहू कवित, त्रिविधि गतागत टेक ॥७३॥

प्रथम उदाहरण

छंद०--दासमैननमैंसदा, दाग कोप पको गदा ।
सलसोन नसो लसै, सैन दैत तदै नसै ॥७४॥

दा	स	मै	न
दा	ग	को	प
सै	ल	सो	न
सै	न	दै	त

द्वितीय उदाहरण

दो०—रही अरी कबते हिये, गसी सि निरखनि तीर।
रती निखर निसि सी गयेहि, ते बकरी अहीर ॥७५॥

टि०—पूर्वार्द्ध उलट कर पढ़ने से उत्तरार्द्ध का पद बन जाता है।

तृतीय उदाहरण

दो०—सखा दरद कोरी हरी, हरी को दरद खास।
सदा अकिल बानै गनै, गनै बाल किअ दास ॥७६॥

टि०—दोनों पद उलट कर पढ़नेसे वही सीधा होजाताहै।

पुनः

सवै०—रे भजु गंग सुजान गुनी सुसुनीगुन जासु गगंजु भरे। रेतकने अगलो लहि नेकुकुनेहिल लोग अनेक तरे॥ रेफ समोरध जाहिर वास सवारहि जा घर मो सफरे। रेखत पानहि जोहिते दास सदा तेहि जो हि न पात खरे ॥७७॥

टि०—पूर्ववत्।

युगल उलटे सीधे का उदाहरण

दो०—न जानत हुयहि दास सों, हँसौ कौन तन गैल।
न आहिँ नयति दुरेव सों, रमो नतव रस सैल ॥७८॥
लसै सरब तन मोर सों, बरे दुतिय नहिँ आन।
लगैन तनकौ सौहँ सों, सदा हियहु तन जान ॥७९॥

टि०—नीचे का दोहा नीचे से उलट कर पढ़ने से ऊपर का दोहा बन जाता है।

पुनः

सीवन मालहि हीन जलै महि मोहि दगो अतिहै तरलो। सीकर जो जरि हानि ठग्यो सुलयो

कबिदास न चैत पलो ॥ सील न जानति भाँत-
बसार दयाहि निरीखन है न भलो । सीस
जलायो मलैजहु तें यहि भीखमु जोन्ह न जान
चलो ॥ ८० ॥

लोचन जानन्ह जो मुख भी हिय तें हु जलै
मयो लाज ससी । लोभ न है न खरी निहिया
दरसावत भाँतिन जान लसी ॥ लोपत चैन सदा
बिक्रयो लसुओठ निहारि जजीर कसी । लोरत
है तिअ गोदहि मोहि मलैज नही हिल मान
बसी ॥ ८१ ॥

पूर्व वत

त्रिपदी लक्षण।

दो०--मध्य चरनइक दुहुँदलन, त्रिपदी जानहु सोइ ।
वहै मंत्रगति अस्वगति, सुद्ध सुयाहू दोइ ॥८२॥

प्रथमत्रिपदी का उदाहरण ।

दो०--दास चारु चित चाइमय, महैस्याम छबि लेखि ।
हास हारुहित पाइ भय, रहै काम दबि देखि ॥८३॥

दा	चा	चि	चा	म	म	स्या	छ	ले
स	रु	त	इ	य	है	म	बि	खि
हा	हा	हि	पा	भ	र	का	द	दे

द्वितीय त्रिपदी का उदाहरण

दो०—जहाँ जहाँ प्यारे फिरैं, धरैं हाथ धनु बान।
तहाँ तहाँ तारे घिरैं, करैं साथ मनु प्रान ॥८४॥

ज	ज	प्या	फि	ध	हा	ध	बा
हाँ	हाँ	रे	रैं	रैं	थ	नु	न
त	त	ता	घि	क	सा	म	प्रा

मंत्रिगति का उदाहरण ॥८५॥

ज	हाँ	ज	हाँ	प्या	रे	फि	रैं	ध	रैं	हा	थ	ध	नु	बा	न
त	हाँ	त	हाँ	ता	रे	घि	रैं	क	रैं	सा	थ	म	नु	प्रा	न

अश्वगति का उदाहरण ॥८६॥

ज	हाँ	ज	हाँ	प्या	रे	फि	रैं
ध	रैं	हा	थ	ध	नु	बा	न
त	हाँ	त	हाँ	ता	रे	घि	रैं
क	रैं	सा	थ	म	नु	प्रा	न

सुमुखबद्ध का उदाहरण

भुजं—सुबानी निदानी मृडानी भवानी।
दयाली कपाली सुचाली बिशाली॥
बिराजै सुराजै खलाजै सुसाजै।
सुचंडी प्रचंडी अखंडी अदंडी॥८७॥

सुबानी	निदानी	मृडानी	भवानी
दयाली	कपाली	सुचाली	बिशाली
बिराजै	सुराजै	खलाजै	सुसाजै
सुचंडी	प्रचंडी	अखंडी	अदंडी

सर्वतोमुख का उदाहरण

मारारामुमुरारामारासजानिनिजासरा।
राजारवीवीरजारामुनिवीसुमुवीनिमु॥८८॥

मा	रा	रा	मु	मु	रा	रा	मा
रा	स	जा	नि	नि	जा	स	रा
रा	जा	र	बी	वी	र	जा	रा
मु	नि	बी	सु	सु	बी	नि	मु
मु	नि	वी	सु	सु	वो	नि	मु
रा	जा	र	वी	वी	र	जा	रा
रा	स	जा	नि	नि	जा	स	रा
मा	रा	रा	मु	मु	रा	रा	मा

कामधेनु लक्षण

गहि तजि प्रतिकोठनि बढ़ैं, उपजैं छन्द अपार ।
व्यस्त समस्त गतागतहु, कामधेनु विस्तार ॥८९॥

दास	चहै	न हि	और	सों	यौं	सब	गूढ़ि	एहै	जन	जान	रहै	सति
आस	गहै	यहि	ठौर	सों	ज्यों	नव	रूढ़ि	एसे	तन	प्रान	डरै	अति
बास	दहै	गहि	दौर	सों	ह्यों	अब	तूढ़ि	एतै	धन	ठान	धरै	सति
हास	लहै	वहि	तौर	सों	प्यों	तव	मूढ़ि	एमै	मन	मान	करै	मति

चरणगुप्त का उदाहरण

कुकुभ०—री सखि कहा कहों छबि गुन गनि अलिन्ह बसायो कानन मैं। कानन तजि पुनि दृगन बस्यो ज्यों प्रानी बिरमै थानन मैं॥ क्रम क्रम दास रह्यो मिलि मन सों कढ़ै न विविध विधानन मैं। लूटै ज्ञान समूहन को अब भ्रमै बिहारी प्रानन मैं॥९०॥

री	सखिक	हा	कहोंछ	वि
गु यो ज	नगनि कानन पुनिदृ	अ मैं ग	लिन्हव कानन नबस्यो	सा त ज्यों
प्रा	नीविर	मै	थानन	मैं
क्र ध	मक्रम मनसों विधान	दा क न	सरह्यौ ढैनवि मैंलूटै	मि वि ज्ञा
न	समूह	न	कोअब	भ्र

अथ मध्याक्षरी कवित्त ।

कवि०—अभिलाखा करी सदा ऐसनि का होय बृत्थ,
सब ठौर दिन सब याही सेवा चरचानि । लोभा
लई नीचे ज्ञान हलाहल ही को अंसु, अंत है
क्रिया पाताल निन्दारसही को खानि ॥ सेना-
पति देवी कर शोभागनती को भूप, पंना मोती
हीरा हेम सौदा हासही को जानि ॥ ही अपर
देव पर बदे जस रटे नाउँ, खगासन नगधर
सीतानाथ कोलापानि ॥९१॥

अलंकार गणना

दो०—भूषन छयासी अर्थ के, आठ वाक्य के जोर ।
त्रिगुन चारि पुनि कीजिये, अनुप्रास इक ठोर ॥९२॥
सब्दालंकृत पाँच गनि, चित्रकाव्य इक पाठ ।
इकइस बातादिक सहित, ठोक सतोपरि आठ ॥९३॥

इति श्री काव्यनिर्णये चित्रकाव्यवर्णननाम इकविंशतिमोल्लासः ॥२१॥

तुकनिर्णयवर्णन

दो०—भाषा बरनन में प्रथम, तुक चाहिये विसेखि ।
उत्तम मध्यम अधम सो, तीनि भाँति को लेखि ॥१॥

उत्तम तुक भेद ।

दो०—समसरिकहुँ कहुँ विषमसरि, कहूँ कष्टसरिराज ।
उत्तम तुक के होत हैं, तीनि भाँति के साज ॥२॥

समसरि का उदाहरण।

कवि०—फेरि फेरि हेरि हेरि करि करि अभिलाख, लाख लाख उपमा बिचारत हैं कहने। बिधि ही मनावै जो घनेरे दृग पावै तौ चहत याहि संतत निहारत ही रहने॥ निमिष निमिष दास रीझत निहाल होत, लूटे लेत मानों लाख कोटिन के लहने॥ एरी बाल तेरे भाल-चन्दन के लेप आगे लोपि ज़ाते और के जराइन के गहने॥३॥

०—कहने, रहने, लहने और गहने चारों तुकान्त सम हैं।

विषमसरि का उदाहरण।

सवै०—कंज सकोचि गड़े रहैं कीच में, मीनन बोरि दियो दह-नीरनि। दास कहै मृगहू को उदास कै, बास दियो है अरण्य गँभीरनि॥ आपुस में उपमा उपमेय है, नैन ए निन्दत हैं कवि धीरनि। खञ्जन हूँ को उड़ाइ दियो हलुके करि दीन्हों अनंग के तीरनि॥४॥

टि०—दहनीरनि, गंभीरनि, धीरनि और तीरनि, एक समतीन विषम तुकान्त है।

कष्टसरि का उदाहरण।

सवै०—सात घरी हूँ नहीं बिलगात लजात सो बातें गुने मुसुकात हैं। तेरी सौं खात हौं लोचन रात है सारस पातहू ते सरसात हैं। राधिका माधौ

उठे परभात हैं नैन अघात हैं पेखि प्रभात हैं।
आरसगात भरे अरसात हैं लागि सो लागि गरे
गिरि जात हैं ॥५॥

टि०—मुसुकात सरसात, प्रभात और जात इन चारों तुकान्तों में प्रभात कष्टसरि है।

मध्यम तुक वर्णनम्।

दो०—असंयोगमिलिस्वरमिलित, तुमिलतीनि प्रकार।
मध्यम तुक ठहरावते, जिनके बुद्धि अपार ॥६॥

असंयोग-मिलित का उदाहरण।

दो०—मोहि भरोसा जाउँगी, स्याम किसोरहिंव्याहि।
आली मो अँखियान तरु, इन्हैं न रहती चाहि ॥७॥

टि०—ब्याहि च्याहि चाहिये, किन्तु वैसा नहीं है।

स्वर मिलित का उदाहरण।

सवै०—कछु हेरन के मिस हेरि उतै बलि आये कहा है
महा बिसवै। दृग वाके झरोखन लागि रहे सब
देह दही बिरहागिन तैं॥ कहि दास बरैतो न एती
भली समुझो बृषभानुलली वह है। खरी झाँवरी
होत चली तबतें जबतें तुम आये है भाँवरी
दै ॥८॥

टि०—तुकान्त में केवल स्वर का मेल है।

पुनः

सवै०—चंद सों आनन राजत तीय को चाँदनी सों
उतरीय महुज्जल। फूल से दास झरैं बतियान में

हाँसो सुधा सो लसै अति निर्म्मल ॥ बाफते कंचुकी बीच बने कुच साफ ते तार मुलम्म औ श्री फल । ऐसी प्रभा अभिराम लखे हियरा में किये मनो धाम हिमंचल ॥९॥

अधमतुक लक्षण

दो०—अमिल सुमिल मत्ता अमिल, आदि अन्त को होइ ।
ताहि अधम तुक कहत हैं, सकल सयाने लोइ ॥

अमिल सुमिल का उदाहरण

तोटक०—अति सोहति नींद भरी पलकैं ।
अरु भीजि फुलेलन तें अलकैं ॥
श्रमबुन्द कपोलन में झलकैं ।
अँखियाँ लखि लाल कि क्यों न छकैं ॥११॥

टि०—तीन चरण सुमिल और चौथा अमिल है ।

आदिमत्तअमिलका उदाहरण

तोटक०—मृदुबोलन बीच सधा श्रवती ।
तुलसी बन बेलिन में भँवती ॥
नहिँ जानिय कौन कि है युवती ।
वहि ते अब औधि है रूपवती ॥१२॥

अन्तमत्त अमिल का उदाहरण

दो०—कंज नयनि निज कंज कर, नैनन अंजन देत ।
विष मानों बानन भरति, मोहि मारबे हेत ॥१३॥

होत वीपसा याम की, तुम अपने ही भाउ।
उत्तमादि तुक आगे ही, है लाटिया बनाउ ॥१४॥

वीप्सा का उदाहरण

कवि०—आजु सुरराइ पर कोप्यो तमराइ कछू, भेदन बढ़ाइ अपनाइ लैलै धनु धनु। कीनी सब लोक में तिमिर अधिकारी तिमि, रारि को बेगारी लै भरावै नीर छनु छनु ॥ लोप दुतिवन्तन को देखि अति व्याकुल, तरैयाँ भाजि आईं फिरैं जीगना ह्वै तनु तनु। इंद्र की बधूटी सब साजन की लूटी खरी, लोहू घूँटि घूँटि वै बगरि रहीं बनु बनु ॥१५॥

याम का उदाहरण

दो०—पाइ पावसै जो करै, प्रिय प्रीतम परयान।
दास ज्ञानको लेस नहिँ, तिन में तिन परिमान ॥१६॥

लाटिया का उदाहरण

कवि०—तो बिनु बिहारी में निहारी गति औरई मैं, बौरई के बृंदन समेटत फिरत हैं। दाड़िम के फूलन में दास दारयो दाना भरि, चूमि मधु रसन लपेटत फिरत हैं॥ खञ्जन, चकोरन परेवा पिक मोरन, मराल सुक भौंरन समेटत फिरत हैं। कासमीर हारन को

सोन-जुही झारन को, चम्पक की डारन को
भेंटत फिरत हैं ॥१७॥

इतिश्री काव्यनिर्णये तुकनिर्णय वर्णनंनाम द्विविंशतितमोल्लासः

दोष लक्षण

दो०—दोष शब्द हूँ वाक्य हूँ, अर्थ रसहु में होइ।
तेहितजि कबिताई करैं, सज्जन सुमती जोइ ॥१॥

टि०—शब्द दोष, वाक्यदोष, अर्थदोष, रसदोष, चार प्रकार के दोष हैं।

शब्द दोष वर्णन

छप्पै०—श्रुतिकटु भाषाहीन अप्रयुक्तो असमर्थहि। तजि
निहितारथ अनुचितार्थ पुनि तजो निरर्थहि॥
अबाचको अश्लील ग्राम्य सन्दिग्ध न कीजै।
अप्रतीत ने अर्थ क्लिष्टको नाम न लीजै॥ अवि-
मृष्ट विधेय विरुद्धमति, छँदस दुष्ट ये सब्द
कहि। कहुँ सब्द समासहि के मिले कहूँ एक द्वै
अक्षरहि ॥२॥

टि०—श्रतिकटु १ भाषाहीन २ अप्रयुक्त ३ असमर्थ ४ निहितार्थ ५ अनुचितार्थ ६ निरर्थक ७ अवाचक ८ अश्लील ९ ग्राम्य १० संदिग्ध ११ अप्रतीत १२ नेआरथ १३ क्लिष्ट १४ अविमृष्ट विधेय १५ विरुद्धमानि १६

श्रुति कटु का उदाहरण

कानन को कटु जो लगै, दास सो श्रुतिकटुसृष्टि।
त्रिया अलक चच्छुश्रवा, डसै परतहीं दृष्टि ॥३॥

टि०—चक्षुश्रवा और दृष्टि दोनों शब्द ही दुष्ट हैं। श्रुति शब्द सकार के समास से दुष्ट हुआ है और त्रिया शब्द का रकार दुष्ट है। यहाँ तीनों भाँति का श्रुतिकटु दिखाया गया है।

भाषाहीन लक्षण।

दो०—बदलि गये घटिबढ़ि भये, मत्तबरनबिन रीति।
भाषा हीनन में गनै, जिन्हैं काव्य पर प्रीति ॥४॥

भाषाहीन का उदाहरण।

दो०—वा दिन वैसन्दर चहूँ, बन में लगी अचान।
जीवत क्यों ब्रज बाँचतो जौ ना पीवत कान ॥५॥

टि०—वैस्वानर को बदल कर वैसन्दर कहा और चहूँ दिशि को चहूँ कहना और पीना शब्द जलके विषय में कहना युक्त है अग्नि के साथ कहा इससे भाषाहीन है।

अप्रयुक्त लक्षण उदाहरण।

दो०—सब्द सत्य नहिँ कबि कह्यो, अप्रयुक्त सो ठाउ।
करै न बैयर हरिहि भी, कंद्रप के सर घाउ ॥६॥

टि०—वैयर-सखी, भी-यह, कंदर्प-काम को कहते हैं। ब्रजभाषा और संस्कृत दोनों से शुद्ध है। पर किसी कबि ने नहीं कहा है इससे अप्रयुक्त है॥

असमर्थ लक्षण।

दो०—सब्द धरयो जा अर्थ को, तापरतासु न सक्ति।
चित दौरै पर अर्थ को, सो असमर्थ अभक्ति ॥७॥

असमर्थ का उदाहरण ।

दो०—कान्हकृपा फल भोग को, करि जान्योसतिवाम ।
असुरसाखि-सुरपुर कियो, ससुरसाखि निजधाम ॥८॥

टि०—सुरसाखि कल्पतरु को कहते हैं। अकार से यह अर्थ प्रगट किया कि बिना कल्पतरु का सुरलोक कर दिया। सत्यभामा ने कल्पतरु समेत अपना घर किया, वह कृष्णचन्द्र की कृपा का फल है पर यह अर्थ प्रगट न होना असमर्थ दोष है ।

निहितार्थ लक्षण ।

दो०—अर्थ शब्द में राखिये, अप्रसिद्ध ही चाहि ।
जाते जाइ प्रसिद्ध ही, निहितारथ सो आहि ॥ ९ ॥

निहितार्थ का उदाहरण ।

दो०—रे रे सठ नीरद भयो, चपला बिधु चितलाउ ।
भवमकरध्वज तरन को नाहिँ न और उपाउ ॥१०॥

टि०—नीरद बिनादंत, चपला लक्ष्मी, बिधु विष्णु, मकरध्वज समुद्र का नाम कहा, पर बादर, चन्द्रमा, बिजली और कामदेव का अर्थ प्रगट होना। निहिर्थ दोष है ।

अनुचित्तार्थ लक्षण उदाहरण ।

दो०—अनुचितार्थ कहिये जहाँ, उचित न सब्द अकाल ।
नाँगो ह्वै दह कूदि कै, गहि लायो हरिव्याल ॥११॥

पुनः उदाहरण

दो०—जेहि जावक अँखियाँ रँगे, दई नखक्षत गात ।
रे पिय सठ क्यों हठ करै, वाही पै किन जात ॥१२॥

टि०—नङ्गा शब्द दुष्ट है। पिय के समास से शठ शब्द दुष्ट है। रङ्गी को रङ्ग और दयो को दई कहने में मात्रा दुष्ट है। इससे अनुचितार्थ दोष है।

निरर्थक लक्षण-उदाहरण।

दो०—छन्दहि पूरन को परै, शब्द निरर्थक धीर।
अरी हनत दृग तीर सों, तोहि पई रन ईर ॥१३॥

टि०—ईर शब्द निरर्थक है इससे निरर्थक दोष है।

अवाचक लक्षण उदाहरण।

दो०—वहै अवाचक रीति तजि, लेइ नाम ठहराइ।
कह्यो न काहू जानि यह, नहिँ मानैं कविराइ ॥१४॥
प्रगट भयो लखि विषमहय, विष्णु धाम सानन्दि।
सहसपान निद्रातज्यो, खुलोपीत मुखवन्दि ॥१५॥

टि०—शरद को सप्तहय और कमल को सहस्रपत्र कहते हैं। विषमहय तथा सहसपान कहने से आधे शब्द दुष्ट हैं। पीतमुख भ्रमर और विष्णुधाम आकाश का नाम है, पर किसी ने प्रयोग नहीं किया है। फलने को नींद तजना और आनन्दित होने को सानन्दि कहना अवाचक दोष है।

श्लील लक्षण उदाहरण।

दो०—पदश्लील कहिये जहाँ, घृना असुभ लज्जान।
जीमूतन दिन पितृगृह, तियपग यह गुदरान ॥१६॥

टि०—जीमूत बादर को कहते हैं। मूतशब्द घृणास्पद है। पितृगृह पितृलोक को कहते हैं इससे अशुभ है। गुद तथा रान, मार्ग, और जंघा को कहते हैं इससे लज्जास्पद है। तीनों लील दोष हैं।

ग्राम्य लक्षण उदाहरण ।

दो०—केवल लोक प्रसिद्ध को, ग्राम्य कहैं कविराय ।
क्या झल्लै टुक गल्ल सुनि, भल्लर भल्लर भाइ ॥१७॥

टि०—झल्लै, टुक, गल्ल, भल्लर और भाइ शब्द लोक ही में प्रसिद्ध हैं, काव्य में नहीं। यह ग्रामीण दोष है।

संदिग्ध लक्षण उदाहरण ।

दो०—नाम धरयो संदिग्ध पद, शब्द संदेहिल जासु ।
वंद्या तेरी लक्ष्मी, करै बन्दना तासु ॥१८॥

टि०—वन्ध्या, वन्दी और वाणी को कहते हैं। लक्ष्मी को, वन्दना कहना उचित है। वन्दनीया छोड़ वन्ध्या कहने से सन्दिग्ध दोष है।

अप्रतीत लक्षण-उदाहरण

दो०—एकहि ठौर जु कहि सुन्यो, अप्रतीत सो गाउ ।
रे शठ कारे चोर के, चरनन मों चितलाउ ॥१९॥

टि०—कारे चोर श्रीकृष्ण को कालिदास ही के काव्य में सुना है, अनत नहीं, । वह भी शृङ्गार में ।

नेआरथ लक्षण-उदाहरण ।

दो०—नेआरथ लक्ष्यार्थ जहाँ, ज्यो त्यों लीजै लेखि ।
चन्द्र चारि कौड़ी लहै, तव आनन छबि देखि ॥२०॥

टि०—चन्द्रमा तेरे मुख की समानता नहीं कर सकता, ज्यों त्यों यह अर्थ मान लेना नेआरथ दोष है ।

समास दोप का उदाहरण ।

दो०—है दुपंचस्यन्दनसपथ, सै-हजार मन तोहि ।
बल आपनो देखाउ जो, मुनि करि जानै मोहि ॥२१॥

टि०—दुपञ्च-स्यन्दन दशरथ का नाम है। सै-हज़ार-मनं लक्ष्मण का नाम है। प्रथम सम्पूर्ण दूसरा आधा शब्द फेरा गया समास दोष है।

पुनः

दो०—तब लों रहो जगम्भरा, राहु निबिड़ तम छाइ।
जब लों पट वैदूर्य नहिँ, हाथ बगारत आइ ॥२२॥

टि०—पृथ्वी को जगम्भरा-विश्वम्भरा, राहु को तम-अन्धकार पटवैदूर्य को अम्बरमणिके अर्थ और हाथ (कर) किरण के लिये कहना समास दोष है।

क्लिष्ट लक्षण उदाहरण।

सीढ़ी सीढ़ी अर्थ गति, क्लिष्ट कहावै ऐन।
खगपतिपतितिय पितु बधू, जल समान तुव बैन ॥२३॥

टि०—सीधे गङ्गाजल के समान वैन न कह कर क्लिष्ट रीति से कथन क्लिष्ट दोष है।

पुनः

दो०—बरुन हाथ कतिचैलिये, किये सपाल हि साथ।
आदिस अन्तर मध्य हित, होंहिँ तिहारी नाथ ॥२४॥

टि०—ब्रह्मा रुद्र नारायण, कमल त्रिशूल चक्र लिये सरस्वती पार्वती लक्ष्मी के साथ आप के हितकारी हों। यह भी क्लिष्ट दोष से परिपूर्ण है।

अविभ्रष्टविधेय का लक्षण उदाहरण।

दो०—है अविभ्रष्ट विधेय पद, छोड़ै प्रगट विधान।
क्यों मुखहरिलखिचखमृगी, रहिहैमन में मान ॥२५॥

टि०—हरिमुख मृगी विधेय है।

पुनः

दो०—नाथ प्रान को देखतै, जो असकी बस ठानि।
धिगधिगसखिवेकाज की, बृथाबड़ी अँखियानि॥२६॥

प्रसिद्धविधेय का उदाहरण

दो०—प्राननाथ को देखतै, जौ न सकी बस ठानि।
तौ सखि धिग बिन काज की, बड़ीबड़ी अँखियानि॥२७॥

विरुद्धमतिकृत लक्षण उदाहरण

दो०—सो विरुद्ध मतिकृत सुने, लगै विरुद्ध विसेख।
भाल अम्बिका रमन के, बाल सुधाकर देख॥२८॥

पुनः

दो०—काम गरीबन के करैं, जे अकाज के मित्र।
जो माँगिय सो पाइये, ते धनि पुरुष बिचित्र॥२९॥

टि०—अम्बिका माता को कह कर नीचे सुधाकर ब्राह्मण को कहना विरुद्धमतिकृत हुआ। दूसरे दोहा में जो जो बात स्तुति की कही है सब में निंदा प्रकट है।

वाक्यदोष लक्षण

छप्पै०—प्रतिकूलाक्षर जानि मानि हत वृत्तानि सन्ध्यनि।
न्यूनाधिक पद कथित शब्द पुनि पतित प्रकर्षनि॥
तजि समास पुनराप्त चरन अन्तर्गत पद गहि।
पुनि अभवन्मत योग जानि अकथित कथनीयहि॥
पद स्नानस्थ संकीरनो, गर्भित अमत परारथहि।

पुनि प्रकरम भङ्ग प्रसिद्धहत, छन्द सवाक्यदूषण तजहि ॥३०॥

प्रतिकूलाक्षर लक्षण उदाहरण

दो०—अक्षर नहिँ पद योग सोँ, प्रतिकूलाक्षर ठट्टि ।
पिय तिय लुट्टत हैं सुरस, ठट्टि लपट्टि लपट्टि ॥३१॥

टि०—लुट्टत, ठट्टि, लपट्टि शब्द रुद्ररस में चाहिये वह शृंगार में प्रतिकूल है ।

हतवृत्त लक्षण उदाहरण

दो०—ताहि कहत हतवृत्त जहँ, छन्दोभङ्ग सुवन ।
लाल कमल जीत्योयो सुवृष, भानुलली के चर्न ॥३२॥
यहो कहत हतवृत्त जहँ, नहीं सुमिल पद रीति ।
दृग खंजन जघन कदलि, रदन मुक्त लिय जीति॥३३॥

टि०—दृग और दाँत कह कर तब जंघ कहना चाहता था, यह हतवृत्त दोष है ।

बिसन्धि लक्षण उदाहरण

दो०—सोबिसन्धि निज रुचि धरै, सन्धि बिगारिसँवारि ।
मुर अरि जस उज्ज्वल जनै, स्याम महा तरवारि ॥३४॥

टि०—मुरारि और तलवार को बिगाड़ कर कहना बिसन्धि दोष है ।

पुनः

दो०--पुनि बिसन्धि द्वै सब्द के, बीच कुपद परिजाइ
प्रीतमजू तिय लीजिये, भलो भाँति उर लाइ ॥३५॥

टि०—यहाँ जूतिय शब्द बिसन्धि दोष है।

न्यूनपद लक्षण उदाहरण

दो०—सब्द रहै कछु कहन को, वहै न्यूनपद मूल।
राज तिहारे खड्ग तें, प्रगट भयो जस फूल ॥३६॥

टि०—खड्गलता कह कर यश को फूल कहना चाहता था, यह न्यूनपद दोष है।

अधिकपद लक्षण उदाहरण

दो०—सोइ अधिक पद जहँ परै, अधिकसब्द बिनुकाज।
सै तिहारे सत्रु को, खड्गलता अहिराज ॥३७॥

टि०—यहाँ लता शब्द अधिक है।

पततप्रकर्ष लक्षण उदाहरण

दो०—सो है पततप्रकर्ष जहँ, लई रीति निबहै न।
कान्ह कृष्न केशव कृपा, सागर राजिवनैन ॥३८॥

टि०—चारि शब्द ककारादि कह कर आगे निर्वाह न होना पततप्रकर्ष दोष है।

पुनरुक्ति का लक्षण उदाहरण

दो०—कह्यो फेरिकहिकथित-पद, सोपुनरुक्तिकहोय।
जो तिय मो मन लैगई, कहाँ गई वह तीय ॥३९॥

टि०—तिय शब्द दो बार आने से पुनरुक्ति दोष है।

समाप्त पुनराप्त लक्षण

दो०—करि समाप्त बातहि कहै, फिरिआगे कछु बात।
सो समाप्त पुनराप्त है, दूषन मति अवदात ॥४॥

समाप्त पुनरात्त का उदाहरण

दो०--डाभ बराये पग धरो, ओढ़ो पट अति घाम।
सियिहिसिखायोनिरखतै, दृगजलभरिमगबाम ॥४१॥

टि०—निरख कर शिक्षा देना कहना चाहता था, यह समाप्त पुनरात्त दोष है।

चरणान्तर्गत पद लक्षण उदाहरण

दो०--चरनान्तर्गत एक पद, द्वै चरनन के माँझ।
गैयन लीन्हें आज मैं, कान्है देख्यों साँझ ॥४२॥

टि०—'कान्है देख्यों आज मैं, गैयन लीन्हें साँझ' होना चाहिये।

अभवन्मतयोग लक्षण उदाहरण

दो०-मुख्यहि मुख्य जो गनत कहि, सो अभवन्मतयोग।
प्रानप्रानपति बिनुरह्यो अबलौंधिगब्रजलोग ॥४३॥

टि०—प्राण को धिक कहना था पर ब्रज लोग को कहा अभवन्मतयोग दोष है।

पुनः

दो०-बसन जोन्हमुकताउडुग, तियनिसिके मुखचन्द।
झिल्लीगन मंजीररव, उरज सरोरुह बन्द ॥४४॥

अकथित कथनीय लक्षण उदाहरण

दो०-नहिँ अवस्य कहिबो कहै, सो अकथित कथनीय।
प्रीतम पाँइ लग्यो नहीं, मान छोड़ती तीय ॥४५॥

टि०—मान छोड़ना कहा पर पाँव लगना नहीं, यह अकथित कथनीय दोष है।

पुनः

सिर पर सोहै पीतपट, चन्दन को रँग भाल।
पान लीक अधरन लगी, लई नई छबि लाल ॥४६॥

टि०—नयी छबि कह कर नीलपट, जावक का रंग, श्याम लीक न कहना दोष है।

अस्थानपद लक्षण उदाहरण

सो है अस्थानस्थ पद, जहँ चहिये तहँ नाहिँ।
है यों कुटिल गड़ी अजौं, अलकैं मो मन माहिँ ॥४७॥

टि०—कुटिल शब्द अलक के पास न रहने से अस्थान-स्थपद दोष है।

संकीर्णपद लक्षण उदाहरण

दो०--दूरि दूरि ज्यों त्यों मिलै, सङ्कीरन पद जान।
तजिप्रीतमपाँइनपर्यो, अजहूँ लखितियमान ॥४८॥

टि०—प्रीतम पाँय परो लख कर मान तज, ऐसा अर्थ होता है। अतः लखि प्रीतम पाँयन पर्यो अजहूँ तजु तिय मान, होना चाहिये' अन्यथा संकीर्णपद दोप है।

गर्भित दोप लक्षण

दो०—और वाक्य दै बीच जो, वाक्य रचै कबिकोइ।
गर्भितदूषन कहत हैं, ताहि सयाने लोइ ॥४९॥

गर्भित दूषण का उदाहरण

दो०—साधुसङ्ग औ हरिभजन, विषतरु यह संसारु।
सकल भाँति दुखसोंभर्यो, द्वैअमृतफल चारु ॥५०॥

टि०—यह दोहा निम्न प्रकार होना चाहिये।

दो०—सकल भाँतिदुखसोंभरचो, बिषतरुयहसंसारु ।
साधु सङ्ग औ हरिभजन, द्वै अम्मृत फल चारु ॥५१॥

अमतपरार्थ लक्षण

दो०—औरै रस में राखिये, औरै रस को बात ।
अमतपरारथ कहत हैं, लखि कबिमत को घात ॥५२॥

अमतपरार्थ दोष का उदाहरण

दो०—राम-काम सायक लगे, बिकलभई अकुलाइ ।
क्यों न सदन परपुरुष के, तुरत तारका जाइ ॥५३॥

टि०—यह रूपक शृंगार रस में चाहिये, शान्तरस में नहीं ।

प्रकरन भंग लक्षण उदाहरण

दो०—सोहै प्रकरन भङ्ग जहँ, बिधिसमेत नहिँ बात ।
जहाँ रैनि जागे सकल, ताही पै किन जात ॥५४॥

टि०—जापै निशि जागे सकल कहना चाहता था, वह न कहने से प्रकरन भंग दोष है ।

पुनः

दो०—यथासंख्य जहँ नहिँ मिलै, सोऊ प्रकरन भङ्ग ।
रमा उमा बानी सदा, बिधि हरि हर के संग ॥५५॥

टि०—हरि, हर, विधि के सङ्ग कहना चाहता था, सदोष है ।

पुनः

सोऊ प्रकरनभङ्ग जहँ, नहीं एक सम बैन ।
तू हरि की अँखियाँबसी, कान्ह बसे तुवनैन ॥५६॥

टि०—कान्ह नयन में तू बसी इस तरह कहना चाहता था।

प्रसिद्धहत लक्षण उदाहरण।

पर सिधहत परसिद्धमत, तजै एक फल लेखि।
कूजि उठे गोकरभ सब, जसुमति सावक देखि ॥५७॥

टि०—कूजना पक्षियों का प्रसिद्ध है गोकरभ गाय के बछड़े से तात्पर्य्य है किन्तु करभ हाथी के बच्चे को कहते हैं। सावक मृगादि के बच्चे को कहते हैं। मनुष्य के बालक को नहीं। विपरीत कथन प्रसिद्धहत दोष है।

अर्थदोष वर्णन

छप्पै०—अपुष्टार्थ कष्टार्थ व्याहतो पुनरुक्तोजित।
दुक्रम ग्राम्य सन्दिग्ध अपरनिर्हेतु अनविकृत॥
नियम अनियम प्रवृत्त विसेष समान प्रवृति कहि।
साकांक्षा रु अयुक्त सविधि अनुवाद अयुक्तहि॥
जुविरुद्धप्रसिद्ध प्रकासितन्हसहचर भिन्नोश्लीलध्वनि
हैत्यक्तपुनःस्वीकृतसहितअर्थ दोषबाईसपुनि ॥५८॥

अपुष्टार्थ लक्षण उदाहरण।

दो०—प्रौढ़ उक्ति जहँ अर्थ है, अपुष्टार्थ सो वंक।
उयो अति बड़े गगन में, उज्वल चारु मयंक ॥५९॥

आकाश अत्यन्त बड़ा और चन्द्रमा उज्वल है, यह कहना व्यर्थ है। गगन में मयंक उदय हुआ है, इतना ही पुष्टार्थ है, शेष अपुष्ट।

कष्टार्थलक्षण उदाहरण।

दो०—अर्थ भिन्न अक्षरन ते, कष्टारथ सुबिचार।
तोपर वारौं चार मृग, चार विहँग फलचार ॥६०॥

टि०—नयन पर मृग, घूँघट पर हय, गति पर जग, कटि पर सिंह, ये चारि मृगवैन पर कोकिला ग्रीवाँ पर, कपोत, केश पर मोर, नाशिका पर शुक, ये चार पक्षी। दन्त पर दाड़िम, कुच पर श्रीफल, अधर पर बिम्बाफल, कपोल पर मधूक, ये चार फल हैं। इस तरह कष्ट से अर्थ प्रगट होना कष्टार्थ दोष है।

व्याहत दोप लक्षण उदाहरण

दो०—सत असतहु एकै कहै, व्याहत सुधि बिसराइ।
चन्द्रमुखी के बदन सम, हिमकर कह्यो न जाइ ॥६१॥

टि०—चन्द्रमुखी कहा, पर चन्द्र सम बदन न कहना व्याहत दोष है।

पुनरुक्ति लक्षण उदाहरण

दो०—उहै अर्थ पुनि पुनि मिलै, सब्द और पुनरुक्ति।
मृदुबानी मीठी लगै, बात कविन की उक्ति ॥६२॥

टि०—बानी बात और उक्तिक एकही अर्थ होने से पुनरुक्ति दोष है।

दुक्रम लक्षण उदाहरण

दो०—क्रमबिचार क्रमको किये, दुक्रमहै यहि काल।
बरबाजी कै वारनै, दैहै रीझि दयाल ॥ ६३ ॥

टि०—'वारनही कै वाजिही दै है' होना चाहिये।

ग्राम्य लक्षण उदाहरण

दो०—चतुरनकीसी बात नहिँ, ग्राम्यारथ सो चेति।
अली पास पौढ़ो भले, मोहिँ किन पौढ़नदेति ॥६४॥

टि०—पुरुष होकर स्त्री की समानता करना ग्राम्यार्थ दोष है।

सन्दिग्ध लक्षण उदाहरण

दो०—सन्दिग्धार्थ जु अर्थ बहु, एक कहत सन्देह ।
केहिकारनकामिनिलिख्यो, शिवमूरतिनिजगेह ॥६५॥

टि०—काम के डर से शिवमूर्ति लिखा; किन्तु निश्चय के साथ नहीं कहा जा सकता कि यही ठीक है ।

निर्हेतु का लक्षण उदाहरण

दो०—बात कहै बिनु हेतुकी, सो निर्हेतु बिचारि ।
सुमन झरयो मानों अली, मदनहियोसरडारि ॥६६॥

टि०—कामदेव के बाण डालने का कारण नहीं कहा, अतः निर्हेतु दोष है ।

अनविकृत लक्षण

दो०—जो न नये अर्थहि धरै, अनविक्रित सुविसेखि ।
जनिलाटानुप्रास अरु, आवृत दीपक देखि ॥६७॥

अनविकृत का उदाहरण

सवै०—कौन अचम्भो जो पावक जारै तौ कौन अचम्भो गरू गिर भाई । कौन अचम्भो खराई पयोनिधि कौन अचम्भो गयन्द कराई ॥ कौन अचम्भो सुधा मधुराई औ कौन अचम्भो विषा करुआई । कौन अचम्भो बहै बृष भार औ कौन अचम्भो भले हि भलाई ॥ ६८ ॥

टि०—यह सवैया निम्न प्रकार होना चाहिये ।

सवै०—कौन अचम्भो जो पावक जारै गरू गिरि है तौ कहा अधिकाई । सिन्धुतरङ्ग सदैव खराइ नई न

है सिन्धुर अङ्ग कराई ॥ मीठो पियूष करू बिष-
रीत पै दासजू यामें न निंद बड़ाई । भार चलावहिँ
आपुहि बैल भलेनि के अङ्ग सुभावै भलाई ॥६९॥

नियम-अनियमप्रवृत्त लक्षण

दो०—अनियम थल नेमहि गहै, निममठौर जुअनेम ।
नियम अनियम प्रवृत्त है, दूषन दुओ अप्रेम ॥७०॥

उदाहरण

जाकी सुभदायक रुचिर, करते मनि गिरि जाइ ।
क्यों पाये आभासमनि, होइ तासु चितचाइ ॥७१॥

टि०—आभासमनि मणि की छाया (पता व खोज) को कहते हैं यहाँ—"क्यों लहि छाया मात्रमनि" होना चाहिये ।

पुनः

दो०—भयकारी भयकारि ये, लेन चाहती जीय ।
तनु तापनि ताड़ित करै, यामिनि ही यमतीय ॥७२॥

टि०—भयकारी ये यामिनि होना चाहिये, अनियम दोष है

यथा

हैकारी भयकारिनी, लेन चाहती जीय ।
तन तापन ताड़ित करै, यामिनि यम की तीय ॥७३॥

विशेषवृत्त लक्षण

दो०—जहाँ ठौर सामान्य को, कहै विशेष अयान ।
ताहि विशेष प्रवृत्तगनि, दूषन कहैं सुजान ॥७४॥

विशेष वृत्त दूषण का उदाहरण ।

दो०—कहा सिन्धुलोपत मनिन, बीचन कीच बहाइ ।
सक्यो कौस्तुभ जोर तू, हरिसों हाथ बोड़ाइ ॥७५॥

टि०—कौस्तुभ विशेष नहीं सामान्य कथन चाहिये । जैसा नीचे का दोहा है ।

दो०—कहा मनिन्हमूँ दत जलधि, बीचिन्ह की चमचाइ ।
सक्यौ कौस्तुभ जोर तू, हरिसों हाथ वोड़ाइ ॥७६॥

सामान्य प्रवृत्त लक्षण ।

दो०—जहाँ कहत सामान्यही, थलविशेष को देखि ।
सो सामान्य प्रवृत्त है, दूषन दृढ़ अवरेखि ॥७७॥

सामान्य प्रवृत्त का उदाहरण ।

दो०—रैनस्याम रँग पूरससि, चोर कमल करि दौर ।
जहाँ तहाँ हौं पिय लखों, ये भ्रमदायकभौर ॥७८॥

टि०—रात्रि समान है, श्वेत भी श्याम है और विशेष कथन सदोष है ।

साकांक्षा लक्षण ।

दो०—आकांक्षा कछु सब्द की, जहाँ परत है जानि ।
सो दूषन साकांक्षा है, सुमति कहैं उर आनि ॥७९॥

साकांक्षा का उदाहरण ।

दो०—परम विरागी चित्त निज, पुनि देवन को काम ।
जननीरुचि पुनि पितु बचन, क्यों तजिहैं बनराम ॥८०॥

टि०—'क्यों न जाँय वन राम' होना चाहिये । क्योंकि जाने की आकांक्षा है ।

अयुक्त लक्षण ।

दो०—पदकै विधि अनुवाद कै, जहँ अयोग्य ह्वै जाय ।
तहँ अयुक्त दूषन कहैं, जे प्रवीन कविराय ॥८१॥

अयुक्त दोष का उदाहरण ।

दो०—मोहन छबि अँखियन बसी, हिये मधुर मुसुकानि ।
गुनचरचा बतियान में, उन सम और न जानि ॥८२॥

टि०—चौथा चरण अयुक्त है 'औरन मृदु बतलानि' होना चाहिये ।

विधि अयुक्त का उदाहरण ।

दो०—पवन अहारी व्याल है, व्यालहि खात मयूर ।
व्याधौ खात मयूर को, कौन सत्रु बिन कूर ॥८३॥

टि०—यहाँ पवन अहारी शब्द न चाहिये, क्योंकि सांप अन्य जीवों का भी भक्षण करता है । यह विधिअयुक्त दोष है ।

अनुवाद अयुक्त का उदाहरण ।

दो०—रे केसव कर आभरन, मोद करन श्रीधाम ।
कमल वियोगी ज्यौंहरन, कहा प्रिया अभिराम ॥८४॥

टि०—वियोगी ज्यों हरन इन बातों के साथ कहना अयुक्त है ।

प्रसिद्ध विद्याविरुद्ध लक्षण ।

दो०—लोक वेद कविरीति अरु, देस काल ते भिन्न ।
सो प्रसिद्ध विद्यानि के, हैं विरुद्ध मतिखिन्न ॥८५॥

प्रसिद्ध विद्याविरुद्ध का उदाहरण।

सबै०—कौल खुले कच गूँदती मूँदती चारु नखक्षत अङ्गद के तरु। दोहद में रति के श्रम भार बड़े बल कै धरती पग भूधरु॥ पंथ असोकन कोप लगावती है जस गावती सिंजित के भरु। भावती भादौं की चाँदनी में जगी भावते संग चली अपने घरु॥८६॥

टि०—स्त्री के पाँव छूने से अशोक का फूलना कहना लोकरीति नहीं है। यह पल्लव लगा कहना लोकविरुद्ध है। दोहद (गर्भवाली स्त्री) में रति वर्जित है वह कहना वेदविरुद्ध है। भादौं की चाँदनी वर्णन कवि रीति विरुद्ध है। आतुर चली भोर नहीं होने पाया, यह रसविरुद्ध है। नखक्षत उरोज पर चाहिये वह भुजा में कहना अंग देश विरुद्ध है॥

प्रकाशित विरुद्ध लक्षण।

दो०—जो लच्छन कहिये परै, तासु विरुद्धलखाइ।
वहै प्रकासित बात को, है विरुद्ध कविराइ॥८७॥

प्रकाशित विरुद्ध का उदाहरण।

दो०—हँसनितकनिबोलनिचलनि सकलसकुचमयजासु।
रोष न केहूं कै सकै, सुकवि कहैं सुकियासु॥८८॥

टि०—इसमें परकीया का भी अर्थ लगता है।

सहचर भिन्न लक्षण उदाहरण।

दो०—सोहै सहचरभिन्न जहँ, संङ्ग कहत न विवेक।
निज पर पुत्रन मानते, साधु कागविधि एक॥८१॥

टि०—काग कोयल को भ्रम से पुत्र मान कर पालता है, यह साधु समता न चाहिये।

पुनः

निसि ससि सों जल कमलसों, मूढ़व्यसन सो मित्त।
गज मद सों नृपतेज सों, शोभा पावत नित्त ॥९०॥

टि०—मूढ़व्यसन सों यहाँ संगति विरुद्ध है।

अश्लीलार्थ लक्षण उदाहरण।

दो०—कहिये असलीलार्थ जहँ, भोंड़ो भेद लखाई।
उन्नत है परछिद्र को, क्यों न जाइ मुरझाइ ॥९१॥

टि०—व्यंगार्थ में मुख्य हाथी जाना जाता है।

त्यक्तपुनःस्वीकृत लक्षण उदाहरण।

दो०—त्यक्त पुनःस्वीकृत कहैं, छोड़ि बात पुनि लेत।
मो सुधिबुधि हरिहरिलई, काम करौं डर हेत ॥९२॥

टि०—सुधिबुधि हर जाती तब काम किस प्रकार कर सकती?

इति श्रीकाव्यनिर्णये शब्दार्थदूषणवर्णनन्नाम् त्रयोविंशमोल्लासः ॥२३॥

दोषोद्धार वर्णन।

दो०—कहुँ शब्दालंकार कहुँ, छन्द कहूँ तुक हेतु।
कहुँ प्रकरन बस दोषहू, गनैं अदोष सचेतु ॥९३॥
कहूँ अदोषौ दोष कहुँ, दोष होत गुनखानि।
उदाहरन कछुकछु कहौं, सरल सुमतिदृढ़जानि ॥ २ ॥

उदाहरण

दो०—हरिश्रुति कोकुंडलमुकुट, हार हिये को स्वच्छ ।
अँखियन देख्यो सो रह्यो, हिय में छाइ प्रत्तच्छ ॥३॥

टि०—इस दोहा में श्रुति, स्वच्छ और प्रत्यक्ष शब्द भाषा हीन हैं। मुकुटहार शब्द में चरणान्तर्गतदोष है। श्रुति में कुंडल और हृदय में आँखों देखना कहने में अर्थ दोष है, क्योंकि कुंडल और देखना कहने से अर्थ पूरा हो जाता है। फिर भी तुकान्तबल से श्रुतिकटु और भाषाहीन दोष तथा छन्दबल से चरणान्तर्गत दोष निर्दोष हो गया है। कुंडल और हार कान तथा हृदय से भिन्न नहीं हैं अतः दोषों की झलक रहते हुए भी दोहा निर्दोष है।

पुनः।

कवि०—सिंह कटि मेखला मिथुन कुच कुंभ त्योंही, मुख
बास अलि गुञ्जै भौंहैं धनु लीक है। वृषभान
कन्या मीननैनी सुबरन अङ्गी, नजरि तुला में
तौले रति तौ रतीक है॥ नेकौ बिलगात अरि
करक कटाक्षन सौं, छै गये गलग्रह सों लोग
सुघरी कहै। कुंडल मकरवाले सों लगी लगन
अब, बारहौ लगन को बनाव बन्यो ठीक है॥४॥

टि०—मेखला शब्द में लकार निरर्थक है। दो पदार्थों के बीच मिथुन शब्द अप्रयुक्त है। अलिशब्द निहितार्थ है। धनुलीक अवाचक है। कन्या शब्द शृङ्गाररस में अनुचितार्थ है। गलग्रह मिलने को कहना अप्रतीत दोष है। कुंडल और मकर

शब्द अविभ्रिष्ट विधेय है। बारहौ शब्द श्रुतिकटु है। पहले अलगाने की फिर मिलने की बात कहना त्यक्तपुनः स्वीकृत अर्थ दोष है। रति को रतीक कह कर राधा को गुरू नहीं कहा, यह साकांक्षा है। श्लेष और मुद्रालंकार द्वारा बारहों राशि के नाम गनाना अदुष्ट है और जैसे मेढक को मेढुला कहते हैं उसी प्रकार मेष को मेषला कहने से निरर्थक का निवारण है।

श्लील दोष कचित गुण लक्षण

दो०--कहुँ श्लील दूषन नहीं, यथा सुभग भगवन्त।
कहूँ हास निन्दादितें, श्लील गुनै गुनवन्त॥ ५॥

उदाहरण

दो०--मीत न पैहै जान तू, यह खोजा दरबार।
जो निसिदिन गुदरत रहै, ताही को पैठार॥ ६॥

टि०—निन्दा, क्रीड़ा और हास में यह श्लील भी गुण है।

कचित् ग्राम्य गुण लक्षण उदाहरण

दो०--ग्रामीनोक्ति कहे कहूँ, ग्रामै गुन ह्वै जाइ।
आजतिया मुख की छिया, रही हिया पर छाइ॥ ७॥

कचित न्यून पद गुण का उदाहरण

दो०--नहीं नहीं सुनि नहिँ रह्यो, नेह नहनि में नाह।
त्यों त्यों भारति मोद सों, ज्योंज्यों झारति बाँह॥ ८॥

टि०—समय सहवास के उपयुक्त नहीं है, नायिका चेष्टा से अस्वीकार करती है कहती नहीं। यह न्यून गुण है।

अधिक पद गुण का उदाहरण

दो०—खलबानी खल की कहा, साधु जानते नाहिं।
सब समझैं पै तेहितहाँ, पतित करत सकुचाहिं ॥९॥

टि०—खल की वाणी क्या साधु नहीं समझते? सब समझते हैं। यह अधिक पद गुण है।

दो०—दीपक लाटा बीपसा, पुनरुक्तिवदाभास।
बिधि भूषन में कथित पद, गुनकर लेखो दास ॥१०॥

उदाहरण।

दो०—ज्यों दर्पन में पाइये, तरनि तेज तें आँच।
त्यों पृथ्वीपति तेज तें, तरनि तपत यह साँच ॥११॥

टि०—तरनि शब्द दो वार आया, वह गुण है।

क्वचित गर्भित पद गुण का उदाहरण।

दो०—लाल अधर में को सुधा, मधुर किये बिनु पान।
कहा अधर में लेत है, धर में रहत न प्रान ॥१२॥

टि०—धर में रहत न प्रान यह वाक्य बिनु प्रान के समीप चाहिये, किन्तु दूरान्वय को भाषा और संस्कृत के कवि अधिकांश लिखते आये हैं अतः निर्दोष है।

प्रसिद्ध विद्या विरुद्ध क्वचित् गुण का उदाहरण।

दो०—जो प्रसिद्ध कविरीति में, सो संतत गुन होइ।
लोकविरुद्ध बिलोकि कै, दूषन गनै न कोइ ॥१३॥
महा अँध्यारी रैनि में, कीर्ति तिहारी गाइ।
अभिसारी पिय पै गई, उँजियारी अधिकाइ ॥१४॥

टि०—कीर्त्ति गान से उँजेला होना लोकविरुद्ध है, किन्तु कवि रीति में गुण है और सहचर भिन्न कचित गुण है।

पुनः

दो०—मोहन मो दृग पूतरी, वै छबि सिगरी प्रान।
सुधा चितौनि सुहावनो, मीचु बाँसुरी तान ॥१५॥

टि०—यहाँ शब्द में बाँसुरी तान को मीचु कहना असत है, वह विशेषोक्ति अलंकार हुआ, यह गुण है।

दो०—यहि बिधि औरो जानिये, जहाँ सुमति चितलेत।
दोष होत निर्दोष तहँ, अरु ममता गुन हेत ॥१६॥

इति श्रीकाव्यनिर्णये शब्दार्थदूषण दोषोद्धार वर्णनं नाम चतुर्विंशतितमोल्लासः।

रसदोष वर्णन।

दो०—रस अरु चर थिर भाव की, सब्दवाच्यता होइ।
ताहि कहत रस दोष है, कहूँ अदोषिल सोइ ॥१॥
अञ्चल ऐंचि जुसिर धरत, चञ्चलनैनी चारु।
कुच कोरनि हियकोरि कै, भरचो सुरस शृङ्गार ॥२॥

टि०—यहाँ शृंगार रस कहते हैं अतः शृंगार का नाम लेना अनुचित है। उसके अनुभाव से कहना चाहिये कि—

"कुच कोरनि हिय कोरि कै, दुख भरि गई अपार।"

व्यभिचारी भाव की शब्दवाच्यता का उदाहरण ।

सवै०—आनँद औ रस लज्ज गयन्द की खालन पै करुनानि मिलाई । दास भुजङ्गनि त्रास धरे अरु गंग तरंग धरे इरषाई ॥ भूति भर्‍यो सित अंग सदीनता चन्द्रप्रभा सवितर्क महाई । ब्याह समै हर ओर चहै चर भाव भई अँखियाँ गिरिजाई ॥३॥

टि०—यहाँ लज्जादिक संचारी भावों को वाच्य में कहा और उनका अनुभाव वाच्य में व्यञ्जित करना उत्तम काव्य है । सवैया निम्न प्रकार होना चाहिये—

सवै०—"आनन शोभ पै है कै निचोही गयन्द की खाल पै ह्वै जलसाइ । दास भुजंगनि संयुत कम्प और गंग तरंग समेत लखाई ॥ भूति भर्‍यो तनु लै मलिनाई औ चन्द्रप्रभा अनिमेष महाई । ब्याह समै हर ओर निहारै नई नई डीठिन सों गिरिजाई ॥"

स्थायीभाव की शब्दवाच्यता का उदाहरण ।

दो०—अकनि अकनि रन परस्पर, असिप्रहारझनकार ।
महा महा योधन हिये, बढ़त उछाह अपार ॥४॥

टि०—उत्साह शब्द कहते हुए वीररस काव्य का स्थायी भाव प्रकट होता है ।

शब्दवाच्य से अदोष वर्णन ।

दो०--जात जगायो है न अलि, आँगन आयो भानु ।
रसमोयो सोयो दोऊ, प्रेम समोयो प्रानु ॥ ५ ॥

टि०—यहाँ नायिका का स्वभाव व्यभिचारी भाव वर्णन है वह शब्दवाच्यता है। फिर सोने को और भाँति से कहना श्रेष्ठ नहीं रस और प्रेम की शब्दवाच्यता है। वह अत्यन्त रसिकता और प्रतीति का कारण है। अपरांग होकर व्यंग में सखी का दोनों के प्रति प्रीति स्थायीभाव है, यह गुण है।

अन्य रसदोष लक्षण ।

दो०--जहँ विभाव अनुभाव की, कष्टकल्पना व्यक्ति ।
रस दूषन ताहू कहैं, जिन्हैं काव्य की सक्ति ॥ ६ ॥

विभाव की कष्टकल्पना का उदाहरण ।

दो०--उठति गिरतिफिरि२ उठति, उठि२ गिरि२जाति ।
कहा करौं कासों कहौं, क्यों जीवै यहि राति ॥ ७ ॥

टि०—यहाँ नायिका की विरहदशा कहते हैं वह व्याधि के बहाने और ही पर लगती है, इससे कष्टकल्पना व्यक्ति है।

अस्य अदोषता यथा दोहा ।

दो०—कै चलि आगि परोस की, दूरि करौ घनश्याम ।
कै हम को कहि दीजिये, बसैं औरही ग्राम ॥ ८ ॥

टि०—छिपा कर कहने से भी यह नायक नायिक की विरहागि विदित होती है। प्रत्यक्ष आग नहीं, यह गुण है दोष नहीं।

अनुभाव की कष्ट कल्पना व्यक्ति का उदाहरण

चैतै की चाँदनी क्षीरनि सों दिगमंडल मानों पखारन लागी। तापर सीरी बयारि कपूर को धूरि सी लैलै बगारन लागी ।। भौंरन की अवली करि गान वियूष सों कान में डारन लागी। भावती भावते ओर चितै सहजैही में भूमि निहारन लागी ॥ ९ ॥

टि०—यहाँ कुछ प्रेम का अनुभाव कहना उचित था, स्वभावतः भूमि अवलोकन से प्रेम नहीं जाना जाता है। इस तरह कहना चाहिये आँखिन कै ललचौहीं लजौहीं प्रिया प्रिय ओर निहारन लागी" ॥

अन्यरस दोष लक्षण।

दो०—भावरसनि प्रतिकूलता, पुनिपुनिदीपति उक्ति।
येऊ है रस दोष जहँ, असमै उक्ति अनुक्ति ॥१०॥

उदाहरण

दो०--अरीखेलि हँसिबोलिचलु, भुजप्रीतम गल डारि।
आयु जात छिन छिन घटी, छीजै घटसों बारि ॥११॥

टि०—आयु घटने का ज्ञान कथन शान्तरस का विभाव है, शृंगार का नहीं।

पुनः

दो०--बैठी गुरुजन बीच सुनि, बालम बंसी चारु।
सकलछोड़िबनजाउँयह, तियहियकरतिविचारु ॥१२॥

टि०—नायिका में उत्कंठा वर्णन है, सब छोड़ कर बन में जाना निर्वेद स्थायीभाव शान्तरस का है, वह विरुद्धता दोष

है, इस तरह चाहिये—"कौने मिस बन जाँउ यह, तिय हिय करति बिचार" ॥

अस्य अदोषता गुण लक्षण ।

दो०--बोध किये उपमा दिये, लिये पराये अङ्ग ।
प्रतिकूलो रसभाव है, गुनमय पाइ प्रसंग ॥१३॥
धन-संचै धन सों सुरति, सरसत सुख जग माहिँ ।
पैजीवनअतिअलपलखि, सज्जनमन न पत्याँहिँ ॥१४॥

उदाहरण

सवै०--दृग नासा नतौ तप जाल खगी न सुगन्ध सनेह के ख्याल खगी । श्रुति जीहा बिरागै न रागै पगी मति रामै रँगी औ न कामै रँगी । वपु में ब्रत नेम न पूरन प्रेम न भूति जगी न बिभूति जगी । जग जन्म बृथा तिन को जिन के गरे सेली लगी न नबेली लगी ॥१५॥

टि०—इसमें दोनों का बोधक गुण है, इससे निर्दोष है ।

पुनः

दो०--पलरोवतिपल हँसतिपल, बोलतिपलकछुपाति ।
प्रेम तिहारो प्रेत ज्यों, वाहि लग्यो दिन राति ॥१६॥

टि०—एक भाव के कई भाव बोधक हैं, यह गुण है ।

उपमान से विरुद्धता का उदाहरण ।

कबि०--बेलिन के बिमल बितान तनि रहे जहाँ द्विजन को सोर कछू कह्यो ना परत है । ता बन

दवागिनि की धूमनि सों नैन मुकुतावलि सुवारै डारै फूलन भरत है ॥ फेरि फेरि अँगुठो छुवावै मिसु कंटनि के, फेरि फेरि आगे पीछे भाँवरै भरत है। हिन्दूपति जू सों बच्यो पाइ निज नाहैं बैरि-बनिता उछाहैं मानि ब्याह सो करत है ॥१७॥

टि०—यहाँ बीररस वर्णन है। बैरियों में भयानक उपमा और रूपक में शृङ्गार लाना गुण है।

पुनः।

दो०—भक्ति तिहारी यों बसै, मो मन में श्रीराम।
बसै कामिजन हियनि ज्यों, परम सुन्दरीबाम ॥१८॥

पुनः।

सवै०—पीछे तिरीछे तकैं उचकैं न छोड़ाइ सकैं अटकी द्रुमसारी। जी में गहैं यों लुटेरन के भ्रम भागतीं दीन अधीन दुखारी ॥ गोरी कृसोदरी भोरी चितै सँगही फिरै दौरी किरात-कुमारी। हिन्दूनरेस के बैर तें यों बिचरैं बन बैरिन की बर नारी ॥१९॥

टि०—यहाँ शृङ्गार, करुणा, अद्भुत रस अपराङ्ग है, बीर रस अङ्गी है।

दीपति दोष लक्षण।

दो०—पुनि पुनि दीपति ही कहै, उपमादिक कछु नाहि।
ताही ते सज्जन गनैं, याहू दूषन माहिँ ॥२०॥

उदाहरण ।

सवै०--पङ्कज-पाँयनि पैजनियाँ कटि घाँघरोकिंकिनियाँ जर-
बीली। मोतिनहार हमेल बलीन पै सारी सोहा-
वनी कंचुकी नीली ॥ ठोढ़ी पै स्यामल बुंद
अनूप तरचौनन की चुनियाँ चटकीली। ईंगुर की
सुर कीदुर की नथ भाल में बाल की बेंदी
छबीली ॥२१॥

असमय उक्ति का उदाहरण ।

दो०--सजि सिँगार सर पै चढ़ी, सुन्दरिनिपट सुबेस ।
मनों जीति भुवलोक सब, चली जितनदिविदेस ॥२२॥

टि०—सहगामिनी को देख कर शांतरस, दया वर्णन
उचित है, शृङ्गार नहीं ।

पुनः ।

दो०--राम आगमन सुनि कह्यो, राम बन्धु सों बात ।
कङ्कन मोहि छोराइबे, उतै जाहु तुम तात ॥२३॥

टि०—यहाँ कङ्कन का भय छोड़ रामचन्द्र को परशुराम के
पास जाना उचित है वह नहीं कहा,। इसमें कादरता प्रगट
होती है ।

अन्य रसदोष लक्षण ।

दो०--अङ्गहि को बरनन करै, अङ्गी देइ भुलाइ ।
येऊ है रस दोष में, सुनो सकल कबिराइ ॥२४॥

अङ्ग बर्णन का उदाहरण ।

दो०--दासी सों मडन समै, दर्पन माँग्यो बाम ।
बैठि गई सो सामुहे, करि आनन अभिराम ॥२५॥

टि०—यहाँ नायिका अङ्गी है, दासी अङ्ग है। इससे दासी की अति शोभा वर्णन दोष है।

अङ्गी के विस्मरण का उदाहरण

दो०--पीतम पठै सहेट निज, खेलन अटको जाय।
तकितेहिआवत उतहिँतें, तियमनमन पछताय ॥२६॥

टि०—यहाँ नायक से बढ़कर खेल में अधिक प्रेम ठहराया, यह रसदोष है।

प्रकृति विपर्यय वर्णन

तीन भाँति कै प्रकृति है, दिव्य अदिव्य प्रमान।
तीजो दिव्यादिव्य यह, जानतसुकबि सुजान ॥२७॥
देव दिव्य करि मानिये, नर अदिव्य करि लेखि।
नर अवतारी देवता, दिव्यादिव्य विशेख ॥२८॥
सोक हास रति अद्भुतहि, लीन अदिव्ये लोग।
दिव्यादिव्वनि में सकति, नहीं दिव्य में योग ॥२९॥
चारि भाँति नायक कह्यो, तिन्हैं चारि रस मूल।
किये और के और में, प्रकृति विपर्यय तूल ॥३०॥
धीरोदात्त सुबीर में, धीरोद्धत रिसवन्त।
धीर ललित शृङ्गार सों, शान्तधीर परसन्त ॥३१॥
स्वर्ग पताले जाइबो, सिंधु उलंघन चाव।
भस्म ठानिबो क्रोध तें, सातो दिव्य सुभाव ॥३२॥
ज्यों बरनत पितु मातु को, नहिँ शृङ्गार रसलोग।
त्यों सुरआदिक दिव्य में, बरनतलगै अयोग ॥३३॥

एहि बिधि औरौ जानिये, अनुचितबरनन चोख।
प्रकृति विपर्यय होत है, अरुसिगरो रसदोख ॥३४॥

सवै०--पाटी सी है परिपाटी कबित्त की ताको त्रिधा बिधि बुद्धि बनाई। तीछन एक सुपंथ करै बर मानि लौं दास करै जिहि ठाई॥ पंथहि पाइ भलो इक खोलै ज्यों होत सुदार की कील सुहाई। एकै न पंथ बिचार को मानै बिदारई जानै कुठार की नाई ॥३५॥

दो०--अमित काव्य के भेद में, बरन्यों मति अनुरूप।
संपूरन कीन्ह्यों सुमिरि, श्रीहरिनाम अनूप ॥३६॥

नाम महिमा कथन।

सवै०--पूरन सक्ति दुवर्न को मंत्र है जाहि सिवादि जपैं सब कोऊ। पावक पौन समेत लसै मिलि जारत पाप-पहार कितोऊ॥ दास दिनेस कलाधर भेस बने जग के निसतारक जोऊ। मुक्ति महोरुह के द्रुम हैं किधौं राम के नाम के आखर दोऊ ॥३७॥

आगर बुद्धि उजागर है भवसागर की तरनी के खेवैया। व्यक्त विधान अनन्दनिधारन है भक्ति सुधार-सम्रान भेंवैया। जानि यहै अनुमानि यहै मन मानि के दास भयो है सेवैया। मुक्ति को धाम है भुक्ति को दाम है राम को नाम है कामदगैया ॥३८॥

पावतो पार न वार कोऊ परिपूरन पाप को पानिप जोतो। बूड़तो झूठ तरंगन में मिलि मोहमई सरितान को सोतो॥ दासजू त्रास तिमिंगिल सों तम-ग्राह के ग्रास ते बाँचतो कोतो। जो भवसिन्धु अथाह निबाह को राम को नाम मलाह न होतो॥३९॥

आप दसैशिर शत्रु हन्यो यह सै-सिर दारिद को बधिको है। सिन्धु बँधाय तरे तुम तो यह तारक मोहि महोदधि को है। रावरे को सुनिये यह जाहिर बासी सबै घट के मध को है॥ रामजू रावरे नाम में दास लख्यो गुन रावरे ते अधिको है॥४०॥

सिद्धनि को सिरताज भयो कवि कोविद नामहिँ की सेवकाई। गीध गयन्द अजामिल से तरिगे सब नामहिँ की प्रभुताई॥ दास कहै प्रहलाद उबारत राम हुते पहिले केहि ठाईं। रामबड़ाई न नाम बड़ो भयो राम बड़ो निज नाम बड़ाई॥४१॥

राम को दास कहावै सबै जग दासहु रावरो दास निहारो। भारी भरोसो हिये सब ऊपर है है मनोरथ सिद्ध हमारो॥ राम अदेवन के कुल घाले भयो रह्यौ देवन को रखवारो। दारिद

घालिबो दीन को पालिबो राम को नाम है काम तिहारो ॥४२॥

क्यों लिखों राम को नाम हिये कहाँ कागद ऐसो पुनीत मैं पाऊँ। आखर आछे अनूठे तिहारे क्यों जूठी जबान सों हौं रट लाऊँ॥ दासजू पावनता भरे पुंज हो मोहभरे हियरे क्यों बसाऊँ। काग है मेरो तमाम यहै सब जाम गुलाम तिहारो कहाऊँ ॥४३॥

जानौं न भक्ति न ज्ञान की शक्ति हौं दास अनाथ अनाथ के स्वामि जू। माँगों इतौ बर दीन दयानिधि दीनता मेरी चितै भरो हामि जू॥ ज्यों बिच नाम के नेह को ब्योर है अंतर्यामि निरंतर यामि जू। मो रसना को रुचै रस ना तजि राम नसामि नमामि नमामि जू ॥४४॥

इति श्री काव्यनिर्णये रसदोष दोषोद्धार वर्णननाम पंचविंशति मोल्लासः ॥२५॥